मूल्य 20 रुपये

चौथी दुनिया

हिन्दी का पहला साप्ताहिक

दिल्ली रविवार 20 सितंबर 2009

भीतर

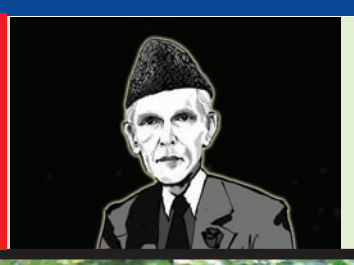

3
जिन्ना, एक बेचैन आत्मा-II

7
ज़हरीली वादियों में दम तोड़ रहे आदिवासी

13
क्या पाकिस्तान टूट कर बिखर जाएगा?

विकास की बलि चढ़ता पर्यावरण

उमाशंकर मिश्र

महाराष्ट्र में विधानसभा चुनाव सर पर आ चुके हैं और इस चुनाव में बिजली की भीषण कटौती एक बड़ा मुद्दा है. इसी बात को लेकर प्रदेश सरकार बिजली के नाम पर जैव-विविधता और पर्यावरण को नष्ट करने पर आमादा है. सरकार बिजली के मसले पर संजीदगी दिखाकर जनता की सहानुभूति हासिल करने की मंशा रखती है. हालांकि, चंद्रपुर की जनता और सैकड़ों पर्यावरणवादी सरकार को वन्य जीव संरक्षण कानून की याद दिलाने में जुटे हैं, जो जंगलों के भीतर दूसरे कामों की इजाज़त नहीं देता.

क्या बिजली की किल्लत दूर करने के नाम पर सदियों पुराने जंगल, जैव विविधता, पर्यावरण और वनवासियों के जीवन को दांव पर लगाया जा सकता है? क्या इसके लिए हरे-भरे जंगल को खदान में तब्दील करना सही होगा? कुछ इसी तरह के सवाल आज महाराष्ट्र के चंद्रपुर ज़िले की जनता सरकार से पूछ रही है.

चंद्रपुर ज़िले के लोहारा गांव निवासी किशोर तलांडी समूचे गांव, समुदाय एवं जंगल से जुड़ी समस्या बयां करते हैं. वह कहते हैं-बाहर के जो लोग लकड़ियां बेच रहे हैं, कुछ दिनों बाद वे भी नहीं बेच पाएंगे, क्योंकि जंगल नहीं बचेगा. इधर काम नहीं मिलेगा, जो रुपये मिलेंगे वे लोग उड़ा देंगे और फिर कटोरा लेकर भीख मांगना पड़ेगा. आज मैं यहां दो सौ से तीन सौ रुपये तक कमा लेता हूं. लेकिन आगे क्या होगा?

उल्लेखनीय है कि चंद्रपुर ज़िले का ताडोबा अंधेरी टाइगर रिज़र्व बाघों के लिए स्वर्ग माना जाता है. लेकिन वहां के बफर ज़ोन में एक या दो नहीं बल्कि छह कोयला खदानें प्रस्तावित हैं. प्रस्तावित खनन क्षेत्र जुनोना संरक्षित वन क्षेत्र के अलावा लोहारा गांव की सीमा में स्थित है और कोल परियोजना के कोर क्षेत्र में स्थित लोहारा गांव को विस्थापित किया जाना है. महाराष्ट्र के गोदिंया ज़िले के तिरोडा में प्रस्तावित अदाणी ग्रुप्स लिमिटेड के पावर प्लांट के लिए आवश्यक कोयले की आपूर्ति हेतु कोयला मंत्रालय की ओर से अदाणी ग्रुप को चंद्रपुर शहर से महज़ 6 किलोमीटर की दूरी पर और ताडोबा अंधेरी टाइगर रिज़र्व से महज़ 10 किलोमीटर की दूरी पर लोहारा ईस्ट और लोहारा वेस्ट दो कोल ब्लॉक आवंटित किए जा चुके हैं.

इस बात को लेकर पूरे चंद्रपुर के लोगों में आक्रोश है और जनता सड़कों पर उतर चुकी है. लोहारा के 42 वर्षीय प्रकाश वेलादी से जब पूछा गया कि आपका घर जब अदाणी माइंस की भेंट चढ़ जाएगा तो क्या करोगे? जवाब में उन्होंने कहा घर कैसे जाएगा, हम जाएंगे नहीं तो कैसे जाएगा? हम सब मिलकर रोकेंगे, हम सदियों से यहां रह रहे हैं, जंगल हमारा है और हम जंगल के हैं.

बंडू धोतरे इन खदानों के विरोध और जंगल बचाने की मांग करते हुए दो बार आमरण अनशन कर चुके हैं. पर्यावरण एवं वन राज्य मंत्री जयराम रमेश की ओर से इन कोल ब्लॉकों का आवंटन रद्द किए जाने के आश्वासन के बाद ही उन्होंने अनशन ख़त्म किया.

हालांकि, लोहारा के सरपंच दयानंद बंकुवाले कंपनी का पक्ष लेते हैं, वह कहते हैं *-पर्यावरण से हमें क्या मिलेगा? दूसरी ओर 36 वर्षीय औद्योगिक वर्कर प्रकाश वाडई कहते हैं- कंपनी के पक्ष में लोहारा के किसी ग्रामीण ने हस्ताक्षर नहीं किया था, हमने तो इस परियोजना के विरोध में सरपंच को हस्ताक्षर दिए थे. उसी के कवरिंग लेटर को अदाणी के पक्ष में बदल कर कलेक्टर को दे दिया गया. हमको हटाने की कोशिश हुई तो सड़कों पर आएंगे और ज़रूरत पड़ी तो जान भी देंगे.*

इस मसले पर पर्यावरणवादियों की भी अपनी राय है. पर्यावरणवादी सुरेश चोपने के मुताबिक-चंद्रपुर ज़िले में पहले से ही 36 खदानें संचालित की जा रही हैं, लेकिन यह सबसे बड़ी खदान होगी, जिससे क़रीब 1,750 हेक्टेयर में फैला हरा-भरा जंगल ही नष्ट नहीं होगा, बल्कि पहले से पानी की समस्या का सामना कर रहे चंद्रपुर में पानी का अकाल पड़ जाएगा. समस्या बेहद विकराल होने जा रही है क्योंकि ज़िले में कुल 22 खदानें प्रस्तावित हैं, जिसमें से छह खदानें जंगल काटकर बनने वाली हैं. ताडोबा टाइगर रिज़र्व के बफर ज़ोन और आसपास अदाणी के अलावा, मुरली एग्रो, औरंगाबाद पावर, स्टेट माइनिंग कार्पोरेशन और सनफ्लेक्स कंपनियों की नज़र गड़ी है.

एक ओर जहां अदाणी ग्रुप को खनन के लिए दो हज़ार हेक्टेयर से अधिक भूमि लीज पर दिए जाने से पर्यावरणवादियों समेत चंद्रपुर की जनता को भविष्य में भू-जल स्तर में भीषण गिरावट का डर सता रहा है, वहीं पहले से ही प्रदूषण की चादर से ढंका चंद्रपुर ज़िला और अधिक प्रदूषित हो जाएगा. स्थानीय विधायक सुधीर एस मुन्गंटीवार कहते हैं -इंडस्ट्री लगाने के बदले दोगुना जंगल लगाने की बात महज़ काग़ज़ों तक रही है. जंगल के बदले जंगल लगाने की जो बात कही जाती है, सरकार दिखाए कि कहां जंगल लगाए गए हैं? यहां पर पहले ही बहुत सी

पेज 2

“पर्यावरणीय संतुलन बरक़रार रखने वाले क़रीब 13 लाख वृक्षों को भी इस कथित विकास की बेदी पर बलि होना पड़ेगा. इस जंगल में दुनिया भर के क़रीब 280 क्लोव्स लाकर संरक्षित किए गए हैं, जो एक अमूल्य धरोहर हैं. खनन शुरू हुआ तो यह धरोहर नष्ट हो जाएगी. प्रदूषण के चलते चंद्रपुर ज़िले में अम्लीय वर्षा होती है.”

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

बाहरी की नियुक्ति पर तनी भंवें

पंजाब पुलिस-प्रमुख के तौर पर पी एस गिल की नियुक्ति से राज्य के कुछ बाबू ख़फा हो सकते हैं. हालांकि, पंजाब के मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल द्वारा पुलिस प्रमुख के तौर पर किसी बाहरी को नियुक्त करना निश्चित रूप से राज्य के लिए कोई नई बात नहीं है.

फिर भी, जब मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल ने गिल की नियुक्ति के लिए राज्य पुलिस अधिनियम में संशोधन किया तो कुछ की भंवें तन गईं! सूत्रों के मुताबिक़ सिर्फ़ इस वजह से हलचल नहीं मची कि कुछ बड़े आईपीएस अधिकारी इस पद के लिए योग्य थे- शशि कांत, चंद्र शेखर बिरडी और ज्योति त्रेहन- हाल ही में महानिदेशक पद पर उनकी तरक़्क़ी हुई थी! ऐसे में आने वाले कुछ दिन मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल के लिए चुनौती भरे हो सकते हैं. दरअसल सारा मसला किसी बाहरी की नियुक्ति की वजह से न होकर आपसी खींचतान में उलझता हुआ नज़र आ रहा है.

ई-गवर्नेंस, रोड़ा अटका रहे हैं बाबू

केंद्र के बाबू भी ई-गवर्नेंस के ख़िलाफ़ हैं. वह उसकी गोपनीयता, वैधतता और राज्यों में महत्वाकांक्षी परियोजनाओं को लागू करने से चिंतित हैं. उत्तर प्रदेश में, मुख्यमंत्री मायावती मंत्रियों और बाबुओं को ई-गवर्नेंस अपनाने के लिए ज़ोर दे रही हैं. उत्तर प्रदेश के प्रधान सचिव(आईटी एंड इलेक्ट्रॉनिक्स) चंद्र प्रकाश के मुताबिक़ हैदराबाद में एक सरकारी संस्था में क़रीब 1200 नौकरशाहों और 800 नेताओं को भेजा जा रहा है. इसका उदेश्य गवर्नेंस, ई-गवर्नेंस और कैसे लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाला विकास परियोजनाओं की प्रगति पर ऑनलाइन निगरानी रख सकते हैं. हिमाचल प्रदेश जैसे राज्यों में, राज्य के आईटी विभाग, स्वास्थ्य प्रबंधन सूचना प्रणाली (हेल्थ मैनेंजमेंट इंफॉर्मेशन सिस्टम) को जल्द से जल्द लाने पर काम कर रहा है. केंद्र का अगले साल जून तक पूरे देश में एक लाख आईटी- समान्य सेवा केंद्र मुहैया करने का लक्ष्य है. लेकिन इसमें सिर्फ़ केंद्र के बाबू रोड़ा अटका रहे हैं.

साउथ ब्लॉक

अंजुम ए ज़ैदी

यशवीर के स्थान पर संजय बंसल!

संजय बंसल (इंडियन रेवेन्यू सर्विस, सी एंड सीई) की नियुक्ति कैमिकल और पेट्रोकैमिकल्स विभाग में निदेशक के तौर पर हो सकती है. वह यशवीर सिंह का स्थान लेंगे. यशवीर सिंह (आईईएस-1995) का कार्यकाल हाल ही समाप्त हुआ है.

मित्तल के कार्यकाल में विस्तार

संजीव कुमार मित्तल उत्तर प्रदेश काडर के 1987 बैच के आईएएस अधिकारी हैं. वह कोयला मंत्रालय में संयुक्त सचिव और वित्त सलाहकार के तौर पर कार्यभार संभाल रहे हैं. उनके कार्यकाल को अक्टूबर 2010 तक के लिए विस्तार दिया गया है.

सुजीता बनी संयुक्त सचिव

महाराष्ट्रा काडर के 1987 बैच की आईएएस अधिकारी सुजाता सौनिक की नियुक्ति ग्रामीण विकास विभाग में संयुक्त सचिव के तौर पर हुई है. ग़ौरतलब है कि वह अगस्त 2006 से ही केंद्रीय प्रतिनियुक्ति पर हैं.

विकास की बलि चढ़ता पर्यावरण

पृष्ठ 1 का शेष

कि कहां जंगल लगाए गए हैं? यहां पर पहले ही बहुत सी माइंस हैं. जितना रोज़गार मिला, इससे ज़्यादा दुष्प्रभाव पड़ा. जिसके पास खेती थी उसे तो ज़मीन का मुआवज़ा मिल गया, लेकिन जो खेतिहर मज़दूर था वह बेरोज़गार हो गया.

अदाणी की माइंस के कारण लोहारा गांव विस्थापित होगा, जबकि मामला, घंटाचौकी, चकबोड़ा, पदमापुर, दुर्गापुर, निंबाड़ा, वयगांव जैसे कई गांव प्रभावित होंगे. लोहारा में ज़मीन के मुआवज़े के तौर पर आठ लाख रुपये प्रति एकड़ की दर से दिए जाने की बात कही जा रही है. बाक़ी गांवों को कोई मुआवज़ा नहीं मिलने वाला है. स्थानीय ग्रामीणों में से महज़ 25 फ़ीसदी लोगों के पास खेती है, क़रीब 60 फ़ीसदी लोग एफडीसीएम में मज़दूरी करके पेट पालते हैं. जबकि शेष लोग अन्य स्थानों पर मज़दूरी करते हैं.

लोगों पर पड़ने वाले असर को तो जाने दें, पर्यावरणीय संतुलन बरकरार रखने वाले

क़रीब 13 लाख वृक्षों को भी इस कथित विकास की बेदी पर बलि होना पड़ेगा. इस जंगल में दुनिया भर के क़रीब 280 क्लोन्स लाकर संरक्षित किए गए हैं, जो एक अमूल्य धरोहर है. खनन शुरू हुआ तो यह धरोहर नष्ट हो जाएगी. प्रदूषण के चलते चंद्रपुर ज़िले में अम्लीय वर्षा होती है. खदानों की संख्या बढ़ेगी तो प्रदूषण भी बढ़ेगा, ऐसे में अम्लीय वर्षा की मात्रा भी बढ़ जाएगी.

ये जंगल इसलिए भी महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि दक्षिणवर्ती कॉरीडोर का हिस्सा होने की वजह से बाघों के प्रजनन एवं इनके अस्तित्व के लिए जंगल ज़रूरी है. नेचुरल क्लब नामक संस्था से संबद्ध पर्यावरणकर्मी प्रकाश कामडे कहते हैं - यह कॉरीडोर यदि नष्ट हुआ तो बाघों का प्रजनन प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाएगा, जिसका सीधा असर बाघों की संख्या पर पड़ेगा. साथ ही जानवरों का इंसान से सीधा टकराव भी बढ़ जाएगा. पर्यावरणविद बंडू धोतरे बताते हैं -पिछले चार वर्षों में में 55 लोग बाघों के हमले से मारे गए हैं, 1,000 से अधिक लोग घायल हुए हैं और हज़ारों जानवर भी मारे गए हैं. ताडोबा में 45 बाघों के होने की बात कही जा रही है, जिसमें से छह लोहारा स्थित प्रस्तावित अदाणी माइंस के क्षेत्र में ही हैं. दूसरी ओर यह क्षेत्र 18 पशु प्रजातियों समेत क़रीब 225 प्रजातियों के पेड़ भी हैं. यहां रहने वाले बाघ और तेंदुए समेत नौ प्रजातियां लुप्तप्राय हैं. अगर जंगल काटकर यहां खनन शुरू होता है तो खुदाई में हर दिन 55 टन विस्फोटक इस्तेमाल होगा, जो बाघों समेत अन्य वन्य प्राणियों, पर्यावरण एवं वनवासियों के लिए ख़तरनाक साबित होगा. ताडोबा टाइगर रिज़र्व बाघों की जनसंख्या के घनत्व की तुलना में देश का सबसे बेहतर टाइगर रिज़र्व है. लेकिन अदाणी की इन प्रस्तावित कोयला खदानों के चलते इसके अस्तित्व पर एक प्रश्नचिन्ह लग गया है.

दण्डकारण्य के जंगल की जैव-विविधता (बायोडायवर्सिटी) सैकड़ों वर्ष पुरानी है. राष्ट्रीय वन नीति 1988 के मुताबिक़ सभी प्रदेशों में कम से कम 33 प्रतिशत जंगल होने चाहिए. पिछले विधानसभा सत्र में महाराष्ट्र के वन मंत्री ने प्रदेश में 20 प्रतिशत जंगल होने की बात कही थी. हालांकि उपग्रह चित्रों के मुताबिक़ महज़ 14 फ़ीसदी जंगल इस राज्य में बचे हैं. बंडू धोतरे इन खदानों के विरोध और जंगल बचाने की मांग करते हुए दो बार आमरण अनशन कर चुके हैं. पर्यावरण एवं वन राज्य मंत्री जयराम रमेश की ओर से इन कोल ब्लॉकों का आवंटन रद्द किए जाने के आश्वासन के बाद ही उन्होंने अनशन ख़त्म किया. फ़िलहाल क़रीब 25 स्वयंसेवी संस्थाओं ने एकजुट होकर लोहारा में खनन की अनुमति देने के सरकारी फ़ैसले के ख़िलाफ़ अंतिम क्षण तक लड़ने का मन बना लिया है.

दण्डकारण्य के जंगल की जैव-विविधता (बायोडायवर्सिटी) सैकड़ों वर्ष पुरानी है. राष्ट्रीय वन नीति 1988 के मुताबिक़ सभी प्रदेशों में कम से कम 33 प्रतिशत जंगल होने चाहिए. पिछले विधानसभा सत्र में महाराष्ट्र के वन मंत्री ने प्रदेश में 20 प्रतिशत जंगल होने की बात कही थी. हालांकि उपग्रह चित्रों के मुताबिक़ महज़14 फ़ीसदी जंगल इस राज्य में बचे हैं.

राजनीतिक पार्टियां इस संवेदनशील मुद्दे पर भी राजनीतिक रोटियां सेंकने से नहीं चूक रही हैं. यह देखना अभी बाकी है कि पर्यावरण संरक्षण के लिए हमारी लोकतांत्रिक सरकार किस हद तक संजीदा है? बहरहाल प्रदेश के वनमंत्री बबनराव पचपुटे ने समस्या से जुड़े तथ्य जुटाने के नाम पर एक स्टडी ग्रुप बनाया था. कुछ समय पूर्व पर्यावरणवादियों के वकील नीरज खण्डेवाले ने पचपुटे द्वारा गठित इस स्टडी ग्रुप को अविश्वसनीय बताया था, इनका कहना था कि इस ग्रुप को गठित करने का उद्देश्य पर्यावरणीय क्षति को कम करके आंकना था. ग़ौर करने वाली बात यह भी है कि सन् 1999 में लोहारा ईस्ट और लोहारा वेस्ट के इन्हीं कोल ब्लॉकों को एससी और निप्पॉन डेनरो पॉवर प्रोजेक्ट को वन्य जीव संरक्षण की दृष्टि से पर्यावरण मंत्रालय द्वारा आवंटित करने से इंकार कर दिया गया था. फिर अदाणी को आज इस इलाक़े में खनन के लिए मंजूरी कैसे दी जा रही है? यही सवाल मुंबई हाईकोर्ट की नागपुर बेंच में दायर याचिका में भी पूछा गया था. ऐसे में सवाल उठना लाज़िमी है कि आख़िर आज पूरी सरकारी मशीनरी अदाणी ग्रुप को कोल ब्लॉक आवंटित कराने में क्यों जुट गई है? सरकार पर अदाणी के पक्ष में गुटबाज़ी करने का आरोप भी लगाया जा रहा है. बहरहाल तडोबा टाइगर रिज़र्व के नज़दीक अडानी पावर कंपनी को कोयला खदान के आवंटन से महाराष्ट्र की राजनीति में उबाल आ गया है. कांग्रेस, बीजेपी और शिवसेना ने इसे टाइगर रिज़र्व के लिए ख़तरा बताया है, वहीं एनसीपी चुप रहकर इसे अपना समर्थन दे रही है. अब कंपनी के ख़िलाफ़ विदर्भ के सांसद भी मैदान में कूद पड़े हैं. अलग-अलग पार्टियों के कई सासदों ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर टाइगर रिज़र्व में बचे 45 बाघों को बचाने की अपील की है. पर्यावरण विशेषज्ञों के तमाम विरोधों के बावजूद राज्य के वनमंत्री और एनसीपी नेता बबनराव के कानों पर जूं नहीं रेंग रही है. एनसीपी नेता प्रफुल्ल पटेल का कहना है कि मामले को सुलझा लिया जाएगा लेकिन कांग्रेसी नेता उनके बयान से सहमत नहीं है. कंपनी के अधिकारी इस मसले को सरकार और स्थानीय लोगों के बीच की बात बताकर टाल रहे हैं. कुछ बोलने को तैयार नहीं हैं. महाराष्ट्र कांग्रेस के नेताओं ने मामला यूपीए अध्यक्ष सोनिया गांधी और प्रधानमंत्री दोनों के पास भी पहुंचा दिया है. इस बीच प्रदेश भाजपा को सरकार के ख़िलाफ़ पर्यावरण की आड़ में एक बड़ा मुद्दा मिल गया है.

feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

आर एन आई रजि.न.45843/86

वर्ष 23 अंक 27, 14 सितंबर-20 सितंबर 2009

प्रधान संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के - 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनाट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के -2, गैनन
चौधरी बिल्डिंग
कनाट प्लेस
नई दिल्ली 110001

फोन न.
संपादकीय +91 011 47149999
विज्ञापन +91 011 47149916
प्रसार +91 011 47149905
फैक्स न. +91 011 47149906

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनर्प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

जिन्ना, एक बेचैन आत्मा-II

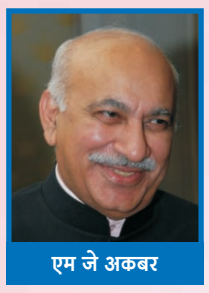

एम जे अकबर

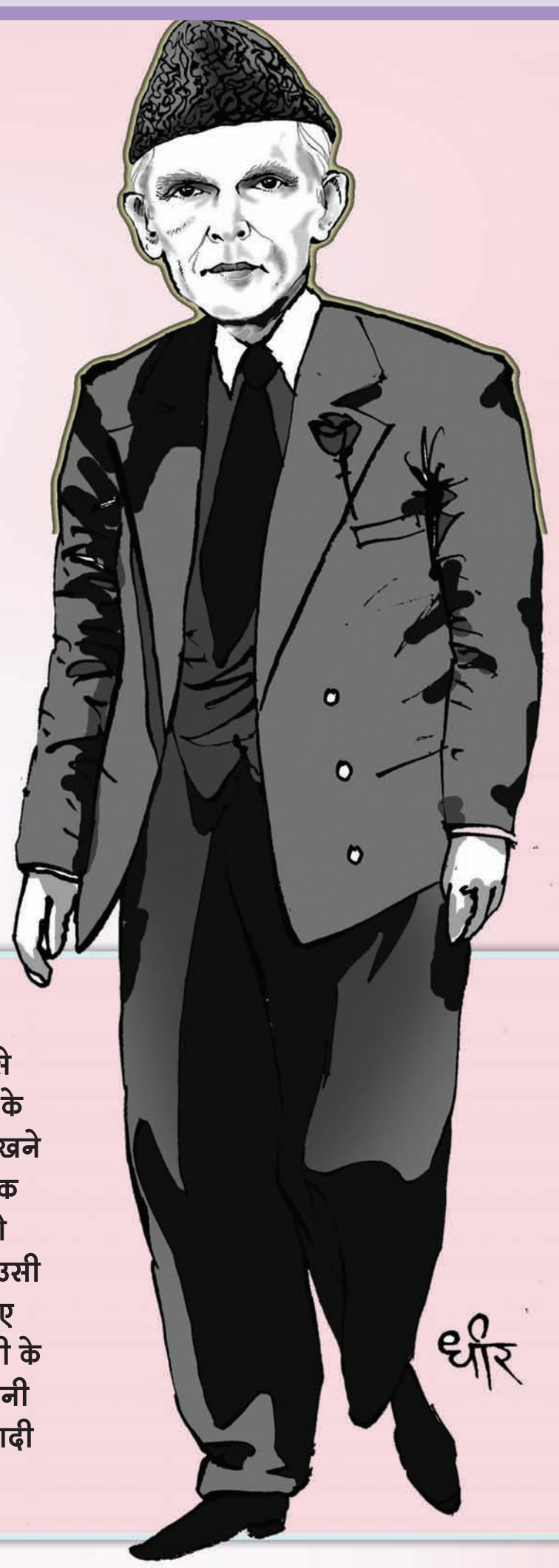

इतिहास की बेहतर समझ हो सकती है, यदि हम इसे किसी नायक-ख़लनायक की फिल्म की तरह न देखें. जीवन सिनेमा से अधिक जटिल है. हमारी आज़ादी की लड़ाई के नायक भी हालत के हिसाब से बदले हैं. मैं कोई तुलना नहीं कर रहा, लेकिन बस यह देखने की कोशिश कर रहा हूं कि नेता अपना तरीक़ा बदलते हैं. अहिंसक गांधी-जिन्होंने तीन दशकों बाद साम्राज्य को ध्वस्त किया-को कैसर-ए-हिंद पुरस्कार तीन जून 1915 को मिला था (टैगोर को उसी दिन नाइटहुड की उपाधि मिली), क्योंकि उन्होंने महायुद्ध के लिए सैनिकों की भर्ती में सहायता की थी. सुभाष बोस 1920 तक गांधी के कट्टर अनुयायी थे, जिन्होंने बाद में फासिस्टों की सहायता से अपनी फौज बनाई. जिन्ना, जो एकता के राजदूत थे, बाद में विभाजनवादी बन गए. यह इतिहास का न्याय है...

मोतीलाल नेहरू ने जिन्ना के साथ काउंसिल में बेहद क़रीबी ढंग से काम किया. बड़े दिल वाले मोतीलाल ने जब अपने साथी लेजिस्लेटर्स की बैठक इलाहाबाद की अपनी ख़ूबसूरत कोठी में बुलाई थी, तो उन्होंने जिन्ना को किसी और की तरह का ही खांटी राष्ट्रवादी बताया था. मोतीलाल ने कहा था– *जिन्ना अपने समुदाय को हिंदू-मुस्लिम एकता का रास्ता दिखा रहे हैं.* इलाहाबाद की इस मीटिंग के बाद ही जिन्ना छुट्टियां बिताने अपने दोस्त सर दिनशॉ मानेकजी पेटिट (फ्रांसीसी व्यापारियों ने दिनशॉ के दुबले-पतले दादा को पेटिट उपनाम दिया था) के गर्मियों वाले घर दार्जीलिंग गए थे. वहीं उनकी मुलाक़ात 16 वर्ष की रुट्टी से हुई थी. मेरा अनुमान है कि एवरेस्ट की महाकाय मौजूदगी रोमांस को हवा देने में सहायक रही होगी. रुट्टी जब 18 वर्ष की हुईं, तो घर से भाग गईं और 19 अप्रैल 1918 को जिन्ना से उनकी शादी हो गई. रुट्टी के परिवार ने उनको अपना मानने से इंकार कर दिया. हालांकि, एक दशक के बाद रुट्टी ने जिन्ना को भी छोड़ दिया. (उनकी शादी की अंगूठी महमूदाबाद के राजा की तरफ़ से एक उपहार थी).

लीग के सदर के तौर पर जिन्ना ने कांग्रेस के अध्यक्ष ए सी मजूमदार के साथ मशहूर लखनऊ पैक्ट को अंजाम दिया. सदर के तौर पर दिए गए अपने भाषण में जिन्ना ने देशभक्ति की नई भावना को ही व्यक्त किया, जो एक साझा लक्ष्य के लिए हिंदुओं और मुसलमानों को साथ लाती थी. मजूमदार ने घोषणा की कि हरेक मतभेद सुलझा लिया गया है और हिंदू व मुसलमान मिलकर भारत में एक प्रतिनिधि सरकार की मांग रखेंगे.

यहीं गांधी का आगमन होता है, जो कभी भी काउंसिल में नहीं बैठे थे. जो पूरे यक़ीन से मानते थे कि आज़ादी केवल अहिंसक आंदोलन से जीती जा सकती है, जिसके लिए आम जनता को तैयार करना होगा.

1915 में गोखले ने गांधी को सलाह दी कि वह मुंह बंदकर और आंखें खोलकर पूरे भारत को देखें. गांधी रंगून जाते हुए कलकत्ता में रुके और छात्रों से बात की. उन्होंने कहा कि राजनीति को धर्म से कभी तलाक़ नहीं मिलना चाहिए. गांधी की बात से उन मुसलमानों ने आवश्यक संकेत ले लिए, जो धर्म का गठजोड़ राजनीति से कर ब्रिटिश साम्राज्य के ख़िलाफ़ आंदोलन चलाना चाहते थे– ख़िलाफ़त के माध्यम से.

अगले तीन वर्षों तक गांधी ने स्वाधीनता की लड़ाई के अपने तरीक़े के लिए ज़मीन तैयार की. उन्होंने लड़ाई को काउंसिल से हटाकर गलियों की ओर मोड़ दिया. गांधी ने अशिक्षित तबकों को जोड़ने के लिए जानबूझकर उनके परिचित धार्मिक प्रतीकों (हिंदुओं के लिए रामराज्य, मुसलमानों के लिए ख़िलाफ़त) का इस्तेमाल किया और ग़रीब किसानों के लिए अपनी हद से बाहर जाकर काम किया, जिनके लिए चंपारण एक चमत्कार बन गया. जालियांवाला बाग में 1919 में हुए नरसंहार ने एक बेहद शानदार मौक़ा उपलब्ध करा दिया. भारतीय जनता का गुस्सा ऐतिहासिक स्तर तक पहुंच गया था. गांधी ने पहले जन-सत्याग्रह में कांग्रेस का नेतृत्व किया. इस तरह 1921 का असहयोग आंदोलन शुरू हुआ.

जिन्ना के अंदर बैठे संविधानवादी ने जन संघर्ष को ख़ासा महत्वाकांक्षी पाया और उनके अंदर के उदारवादी ने राजनीति में धर्म के घालमेल को नकार दिया. जिन्ना जब 1920 में नागपुर सत्र में बोलने के लिए खड़े हुए-जहां गांधी ने असहयोग आंदोलन का प्रस्ताव रखा था-तो वह एकमात्र प्रतिनिधि थे, जो 50,000 की उस भीड़ (हिंदुओं और मुसलमानों) में अंत तक विरोध करते रहे. उनके विरोध के दो मुख्य आधार थे. उन्होंने कहा कि प्रस्ताव स्वराज या पूर्ण स्वाधीनता की अनधिकारिक घोषणा है और हालांकि वह लाला लाजपत राय द्वारा ब्रिटिश साम्राज्य की भर्त्सना से पूरी तरह सहमत हैं, लेकिन उनकी नज़र में कांग्रेस के पास लक्ष्य पाने लायक़ ताक़त नहीं है. जिन्ना के शब्द थे– *यह इस वक़्त उठाया जाने लायक़ सही क़दम नहीं है. आप भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को एक ऐसे लक्ष्य के साथ बांध दे रहे हैं, जिसे आप पूरा नहीं कर पाएंगे.* (एक साल में स्वराज दिलाने का वादा कर गांधी ने असहयोग आंदोलन को केरल के सांप्रदायिक दंगों और चौरी-चौरा कांड के बाद 1922 में वापस ले लिया था. कांग्रेस ने औपचारिक तौर पर पूर्ण स्वराज को अपने लक्ष्य के तौर पर 1931 में ही स्वीकार किया था). जिन्ना की दूसरी आपत्ति यह थी कि अहिंसा सफल नहीं होगी. इस मसले पर जिन्ना ग़लत थे.

इस भाषण में एक ध्यान देने लायक़ अनुच्छेद है, जिस पर कभी कोई टिप्पणी नहीं की गई, कम से कम मेरी जानकारी में तो नहीं ही. जिन्ना ने जब पहली बार गांधी का संदर्भ दिया, तो उन्होंने गांधी को महाशय कह कर पुकारा. तुरंत ही भीड़ ने महात्मा गांधी की आवाज़ बुलंद कर दी. पल भर भी झिझके बिना, जिन्ना ने महात्मा गांधी कहना शुरू कर दिया. बाद में उन्होंने मुहम्मद अली (मशहूर अली बंधुओं में अधिक अदा वाले) को भी महाशय कह कर संबोधित किया. भीड़ से आवाज़ आई, मौलाना, मौलाना. जिन्ना ने कोई तवज्जो नहीं दी. उन्होंने कम से कम पांच बार और अली साहब को संबोधित किया, लेकिन हर बार बस महाशय अली ही कहते रह गए.

आइए, इस मसले पर हम आख़िरी राय गांधी के ऊपर ही छोड़ दें. 1940 में गांधी ने हरिजन में लिखा– *क़ायद-ए-आज़म ख़ुद एक महान कांग्रेसी थे. वह तो केवल असहयोग आंदोलन के बाद, कई और कांग्रेसियों की तरह-जो अलग समुदायों से थे-कांग्रेस छोड़कर चले गए. उनका जाना पूरी तरह राजनीतिक था.* दूसरे शब्दों में कारण सांप्रदायिक नहीं थे. यह हो भी नहीं सकता था, क्योंकि लगभग हरेक मुसलमान गांधी के साथ था, जब जिन्ना कांग्रेस छोड़कर गए थे.

इतिहास की बेहतर समझ हो सकती है, यदि हम इसे किसी नायक-ख़लनायक की फिल्म की तरह न देखें. जीवन सिनेमा से अधिक जटिल है. हमारी आज़ादी की लड़ाई के नायक भी हालत के हिसाब से बदले हैं. मैं कोई तुलना नहीं कर रहा, लेकिन बस यह देखने की कोशिश कर रहा हूं कि नेता अपना तरीका बदलते हैं. अहिंसक गांधी-जिन्होंने तीन दशकों बाद साम्राज्य को ध्वस्त किया-को कैसर-ए-हिंद पुरस्कार तीन जून 1915 को मिला था (टैगोर को उसी दिन नाइटहुड की उपाधि मिली), क्योंकि उन्होंने महायुद्ध के लिए सैनिकों की भर्ती में सहायता की थी. सुभाष बोस 1920 तक गांधी के कट्टर अनुयायी थे, जिन्होंने बाद में फासिस्टों की सहायता से अपनी फौज बनाई. जिन्ना, जो एकता के राजदूत थे, बाद में विभाजनवादी बन गए.

जो सवाल हमारे मन में उठना चाहिए, वह है क्यों? भारत में अमूमन महत्वाकांक्षा और खीझ को ही दो कारणों के तौर पर दिखाया जाता है, लेकिन वे कोई नया देश बनाने के लिए काफी नहीं हैं. जिन्ना ने पाकिस्तान की मांग 1940 में की थी, जबकि उसके पहले वह बारहां मुसलमानों के लिए संवैधानिक सुरक्षा और सत्ता में साझेदारी की मांग कर चुके थे. आख़िर उस संविधान का क्या हुआ, जो कांग्रेस 1928 में तैयार करने वाली थी. दूसरी ओर, कांग्रेस नेताओं ने महसूस किया कि किसी समुदाय को दी गई सुविधा असल में दूसरे समुदायों को भी मांग उठाने के लिए प्रेरित करेगी.

एकमात्र अपवाद दलितों के लिए रखा गया, जिसे हरिजन कहा गया.

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद– जो पटेल और नेहरू के विभाजन स्वीकार कर लेने पर भी इसका विरोध करते रहे-एक उंगली 1936-37 के चुनाव के बाद हुई असफल बातचीत पर रखते हैं, तो दूसरी 1946 के कैबिनेट मिशन की अबूझ असफलता पर रखते हैं, जो भारत को एक रख सकता था. अबूझ इसलिए, क्योंकि कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने ही इसे स्वीकार कर लिया था. यह योजना नेहरू का एक प्रेस कांफ्रेंस नहीं झेल सकी. हालांकि, केवल नेहरू को दोष देना ग़लत होगा. वह तो केवल कांग्रेस के अध्यक्ष थे, जो आज़ाद की जगह चुने गए, क्योंकि पार्टी अध्यक्ष ही किसी अंतरिम सरकार का नेतृत्व करेगा. इसके बावजूद वह शायद ही पार्टी के सर्वोच्च अधिकारी थे. गांधी ने किसी भी वक़्त हस्तक्षेप कर दिया होता, पर उन्होंने नहीं किया. नेहरू इकाइयों को अधिकार देने और उसके सफल होने के बारे में शंका रखते थे. जिन्ना शायद तिलचट्टे के खाए पाकिस्तान को स्वीकार भी कर लेते, लेकिन नेहरू तिलचट्टे का खाया भारत स्वीकारने को तैयार नहीं थे. आज़ाद ने इसका विरोध किया. उनका तर्क खांटी कांग्रेसी तर्क था-चूंकि सांप्रदायिकता ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा फैलाया ज़हर है, तो वह भारतीयों के शासक बनते ही ख़त्म हो जाएगा. दूसरे शब्दों में वह भारतीयों को एक मौक़ा देने को तैयार थे, ताकि सिद्ध हो सके कि सांप्रदायिकता एक क्षणिक उभार था और हम एकीकृत देश के तौर पर फल-फूल सकेंगे.

जिन्ना ने भी सांप्रदायिकता के बेबाक इस्तेमाल से इसका जवाब दिया और उसके बाद पीछे का कोई रास्ता नहीं था. उनका विरोध आख़िरकार सीधी कार्रवाई के रूप में फूट गया. इसने बदले में कलकत्ता के दंगों को हवा दी, जिसके बदले बिहार में जनसंहार हुआ. इसके साथ ही एकता की कल्पना भी सड़कों पर बहे ख़ून और कीचड़ मे मिल गई.

बेहद आहत और दुखी गांधी ने 15 अगस्त 1947 को झूठी सुबह (फैज के शब्दों में) कहा. उन्होंने दिल्ली के जश्न में हिस्सा न लेते हुए कलकत्ता में उपवास करते हुए अपनी सुबह गुज़ारी. धन्यवाद दें गांधी का-और सुहरावर्दी का भी- कि 1947 में कलकत्ता में कोई दंगा नहीं हुआ.

तथ्य तो आपको विचारशील बनाते हैं. वह निष्कर्ष पर कूदने से आपको बचाते हैं.

जिन्ना के अंदर बैठे संविधानवादी ने जन संघर्ष को ख़ासा महत्वाकांक्षी पाया और उनके अंदर के उदारवादी ने राजनीति में धर्म के घालमेल को नकार दिया. जिन्ना जब 1920 में नागपुर सत्र में बोलने के लिए खड़े हुए-जहां गांधी ने असहयोग आंदोलन का प्रस्ताव रखा था-तो वह एकमात्र प्रतिनिधि थे, जो 50,000 की उस भीड़ (हिंदुओं और मुसलमानों) में अंत तक विरोध करते रहे. उनके विरोध के दो मुख्य आधार थे. उन्होंने कहा कि प्रस्ताव स्वराज या पूर्ण स्वाधीनता की अनधिकारिक घोषणा है और हालांकि वह लाला लाजपत राय द्वारा ब्रिटिश साम्राज्य की भर्त्सना से पूरी तरह सहमत हैं, लेकिन उनकी नज़र में कांग्रेस के पास लक्ष्य पाने लायक़ ताक़त नहीं है.

feedback@chauthiduniya.com

परेश बरुआ और उल्फा का भविष्य

1979 में विदेशी बहिष्कार आंदोलन के दौरान परेश बरुआ की अगुवाई में संयुक्त मुक्ति वाहिनी असम उल्फा का गठन किया गया था. उस समय उल्फा का लक्ष्य असम के हित में और केंद्र के शोषण के ख़िलाफ़ सशस्त्र संघर्ष करना था. लेकिन 30 वर्षों की अवधि में उल्फा के लक्ष्य और कार्य पद्धति में आमूल परिवर्तन हुआ. अहं के टकराव के चलते संगठन के भीतर विवाद बढ़ता गया. असंतुष्ट गुट के नेता समय-समय पर उल्फा का साथ छोड़ते रहे. संगठन की 28 नंबर बटालियन ने जब उल्फा के ख़िलाफ़ बग़ावत करने का फ़ैसला किया, तब इस ख़बर को अफ़वाह समझा गया था.

दिनकर कुमार

असम को तक़रीबन 30 सालों से अशांत रखने वाली उल्फा समस्या में हाल ही में एक नया मोड़ आया है. पिछले दिनों समाचार पत्रों में ख़बर छपी थी कि उल्फा के मुख्य सेनाध्यक्ष परेश बरुआ गंभीर रूप से बीमार हैं और उन्हें मणिपुर से उल्फा के काडर कंधे पर उठाकर उपचार के लिए ले गए है. किसी-किसी अख़बार में छपा कि सुरक्षा बलों ने बरुआ को गिरफ़्तार करने के बाद इलाज का प्रबंध किया है. इस ख़बर के बाद उल्फा की तरफ़ से स्पष्टीकरण आया कि परेश पूरी तरह स्वस्थ हैं. सरकार और उल्फा के बीच शांति प्रक्रिया शुरू करने के लिए प्रयत्न करने वाली लेखिका डा. इंदिरा गोस्वामी ने बयान दिया कि परेश स्वस्थ हैं और फोन पर उनके साथ बातचीत भी हुई है.

ग़ौरतलब है कि पहले भी परेश बरुआ की बीमारी की अफ़वाहें फैलती रही हैं. 2001 में ख़बर छपी थी कि किसी ने परेश पर गोलीबारी की थी. फिर ख़बर छपी कि ढाका में उनके क़ाफ़िले पर गोलीबारी की गई. एक बार ख़बर छपी कि ढाका के एक अभिजात इलाक़े से बांग्लादेशी सुरक्षा बलों ने उनको गिरफ़्तार कर लिया है. बाद में ये सभी ख़बरें बेबुनियाद साबित हुई थीं लेकिन इन ख़बरों का गहरा प्रभाव असम में मौजूद उल्फा के सदस्यों पर पड़ा था.

हाल में बरुआ की बीमारी की जो ख़बर प्रकाशित हुई, उसके बारे में जानकर मानते हैं कि यह ख़बर पूरी तरह बेबुनियाद नहीं थी. यानी परेश बरुआ की गिरफ़्तारी की ख़बर भले ही झूठी हो लेकिन उनके बीमार होने की ख़बर पूरी तरह निराधार नहीं है. उल्फा के भीतर आत्मसमर्पणकारी, वार्ता समर्थक और चरमपंथी जैसे कई गुट तैयार हो चुके हैं, ऐसे समय में मुख्य सेनाध्यक्ष के बीमार होने की ख़बर आई है. ऐसी परिस्थिति में उल्फा के भविष्य के संबंध में सवाल पैदा होना स्वाभाविक है.

दुनिया में विभिन्न क्रांति या सशस्त्र आंदोलन के क्षेत्र में देखा जाता है कि जब उनसे जुड़े प्रभावशाली और ताक़तवर नायक की मौत हो जाती है तो ऐसी क्रांति या सशस्त्र आंदोलन कमज़ोर हो जाते हैं या पूरी तरह बिखर जाते हैं. श्रीलंका में लिट्टे इसका उदाहरण है.

लिट्टे प्रमुख प्रभाकरण की मौत के बाद श्रीलंका में लिट्टे का प्रभाव ख़त्म हो गया है. इसी तरह युगोस्लाविया के पतन का उदाहरण हमारे सामने है. मार्शल टीटो की मौत के बाद

युगोस्लाविया में साम्यवादी दल टूट गया और देश में गृहयुद्ध छिड़ गया. बाद में युगोस्लाविया भी बिखर गया और कई छोटे-छोटे देशों का उदय हुआ.

यह बात सभी जानते हैं कि परेश बरुआ ही उल्फा के अधिनायक हैं. बीच-बीच में इस तरह की ख़बरें आती रहती हैं कि क्षमता को लेकर परेश और उल्फा के अध्यक्ष अरविंद राजखोपा के बीच खींचतान होती रहती है. खींचतान होने के बावजूद यह तय है कि परेश के बिना अरविंद राजखोपा या उल्फा की असैन्य शाखा के नेतागण संगठन का संचालन नहीं कर सकते, चूंकि हथियारों की ताक़त पर निर्भर करने वाले दूसरे उग्रवादी संगठनों की तरह ही उल्फा भी हथियारों की ताक़त पर निर्भरशील है. ऐसी स्थिति में परेश बरुआ के बिना कमज़ोरी की तरफ़ अग्रसर उल्फा का भविष्य क्या हो सकता है, इसके बारे में निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता. उल्फा के भीतर वार्ता के समर्थन सदस्यों की संख्या काफी है जो आत्मसमर्पण या गिरफ़्तारी के बहाने संगठन का साथ छोड़ते जा रहे हैं. परेश बरुआ की ग़ैर मौजूदगी में संगठन के बिखरने का ख़तरा नज़र आ रहा है. अभी तक उल्फा के भीतर उनका कोई योग्य उत्तराधिकारी तैयार नहीं हो पाया है. जो नेता उनके उत्तराधिकारी बनने की योग्यता रखते थे, उनमें से कई की मौत हो चुकी है, कुछ हथियार डाल चुके हैं और संगठन में मौजूद एकाध जुझारू नेताओं के पास परेश बरुआ जैसा व्यक्तित्व नहीं है.

केंद्र सरकार के रवैए से तो यही लगता है कि वह भी परेश की मौत की बाट जोह रही है, चूंकि शांति वार्ता का आश्वासन देने के बाद भी आज तक सरकार ने उल्फा के साथ शांति प्रक्रिया की शुरुआत नहीं की है. उल्फा नेतृत्व के साथ सीधी बातचीत शुरू किए बिना इस मसले को हल कर पाना मुमकिन नहीं है. केंद्र पहले लालडेंगा और इसाक मुइवा से विदेश में भी शांति वार्ता करता रहा है, लेकिन उल्फा के साथ वार्ता शुरू करने में केंद्र दिलचस्पी नहीं लेता है.

1979 में विदेशी बहिष्कार आंदोलन के दौरान परेश बरुआ की अगुवाई में संयुक्त मुक्ति वाहिनी असम उल्फा का गठन किया गया था. उस समय उल्फा का लक्ष्य असम के हित में और केंद्र के शोषण के ख़िलाफ़ सशस्त्र संघर्ष करना था. लेकिन 30 वर्षों की अवधि में उल्फा के लक्ष्य और कार्य पद्धति में आमूल परिवर्तन हुआ. अहं के टकराव के चलते संगठन के भीतर विवाद बढ़ता गया. असंतुष्ट गुट के नेता समय-समय पर उल्फा का साथ छोड़ते रहे.

संगठन की 28 नंबर बटालियन ने जब उल्फा के ख़िलाफ़ बगावत करने का फ़ैसला किया, तब इस ख़बर को अफ़वाह समझा गया था. मगर बाद में यह ख़बर सच साबित हुई. 25 नंबर बटालियन की ए एवं सी कंपनी ने केंद्रीय नेतृत्व के निर्देश की उपेक्षा करते हुए वार्ता के समर्थन में संघर्ष विराम करने की घोषणा कर दी. पहले उल्फा के सदस्य छोटे-छोटे समूहों में हथियार डालते रहे थे. पहली बार पूरी बटालियन ने हथियार डाल कर उल्फा को अंदरूनी तौर पर कमज़ोर बना दिया. इससे यह भी साबित हुआ कि परेशान बरुआ का नियंत्रण धीरे-धीरे कमज़ोर होता जा रहा है.

feedback@chauthiduniya.com

नगा शांति वार्ता अब केंद्र से सीधे होगी

एस. बिजेन सिंह

पिछले 10 सालों से केंद्र सरकार और शीर्ष नगा अलगाववादी संगठन नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालैंड (एनएससीएन-आईएम) के बीच चली आ रही युद्ध विराम की वार्ता अब सीधे तौर पर होगी. वार्ता के प्रतिनिधि के रूप में पूर्व भारतीय गृह सचिव के पद्मनाभैया का 1999 के 28 जुलाई को चयन किया गया था. उनका कार्यकाल समाप्त करने का केंद्र सरकार ने फ़ैसला कर लिया है. भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में पद्मनाभैया पिछले 10 साल से कई भागों में वार्ता करते आ रहे थे. अब सीधी बातचीत करने के लिए गृह मंत्रालय के सीनियर ऑफिसिएल को कहा गया है. युद्ध विराम के समझौते 1997 के अगस्त से शुरू हुए. इस वार्ता के सबसे पहले मध्यस्थ मिजोरम के पूर्व राज्यपाल स्वाराज कौशल थे. उन्होंने 1999 के जुलाई तक यह कार्य किया था.

नगा बागी काफी दिनों से वृहद नगालैंड ***नगालिम*** के तहत नगा बहुल इलाक़ों को एक प्रशासन तंत्र में शामिल करने की मांग पिछले कई सालों से करते रहे हैं. यानी उन्हें ***नगालिम*** में नगालैंड के अलावा मणिपुर के चार जिले, असम के दो पहाड़ी जिले और पूर्वी अरुणाचल प्रदेश के दो जिले भी चाहिए. यूपीए सरकार ने अपने न्यूनतम साझा कार्यक्रम के तहत इन राज्यों की क्षेत्रीय अखंडता बनाए रखने का वादा किया है. असम के मुख्यमंत्री ने तो सीधे तौर पर कहा कि इस तरह की मांग को स्वीकार नहीं किया जा सकता है, जबकि मुख्य विपक्षी दल असम गण परिषद ने कांग्रेस पर यूपीए सरकार को बचाने के लिए असम का ही सौदा करने का आरोप लगाया है. असम, अरुणाचल और मणिपुर की सरकारें और वहां की प्रदेश कांग्रेस समिति इसका विरोध करती रही है. नगालैंड में सोलह नगा जनजातियां हैं और प्रत्येक की अपनी-अपनी बोली और भिन्न पहचान है. प्रत्येक नगा जनजाति का भिन्न नाम है और अपनी पहचान के प्रति सजग है.

पिछले कुछ महीनों में मणिपुर के उखुल जिले के सिरुई और नगालैंड के फुटचेरो में एनएससीएन (आईएम) और सुरक्षा बलों के बीच हुई झड़प को लेकर होम मिनिस्टर पी चिदंबरम ने कहा कि ***भविष्य में अगर वार्ता करनी है तो भारतीय संविधान के दायरे में होनी चाहिए. उन्हें पहले हिंसा का रास्ता छोड़ना होगा.*** इसलिए दोनों पक्षों को युद्धविराम निभाना ही होगा. एनएससीएन (आईएम) के नेता इसाक मुइवा का वक्तव्य 19 मार्च 09 को नगालैंड के प्रमुख अख़बारों में छपा था कि ***चिदंबरम नगाओं और इस वार्ता के बारे में कुछ भी जान पा रहे हैं.*** इसलिए केंद्र सरकार को अपनी ग़लती सुधारना चाहिए. मुइवा ने कहा कि केंद्र का यह रुख़ अगर बरकरार रहा तो इस वार्ता में कई संकट आएंगे.

ऐसे में इस वार्ता को लेकर मणिपुर और नगालैंड की जनता और हर संगठन तरह-तरह की मांग कर रहे हैं. नगालैंड के कुकी आदिवासियों ने चेतावनी दी कि जिस क्षेत्र पर उनका समुदाय निवास करता है, उस ज़मीन पर एनएससीएन (आईएम) के नेताओं के साथ सहमति बनती है, तो वे ख़ूनी संघर्ष पर उतर आएंगे. शीर्ष कुकी नेता सतकोखारी चोनगोलीई ने कहा कि हम अपनी इंच भर ज़मीन भी किसी को नहीं देंगे. कुकी आदिवासी समुदाय नगालैंड, असम, त्रिपुरा, मणिपुर और मिजोरम राज्यों में निवास करता है. इनका कहना है कि एनएससीएन (आईएम) ने कुकी समुदाय के हज़ारों लोगों को गुरिल्ला लड़ाई में मौत के घाट उतार दिया है. वे नहीं चाहते कि उनके समुदाय के दुश्मनों को उनकी ज़मीन पर अधिकार मिले.

एनएससीएन(आईएम) नेता वी एस अतम ने कहा कि नगा लोगों को विद्रोहियों के रूप में दिखाया गया है. जबकि वे अपनी सभ्यता और संस्कृति को बचाने के लिए सरकार से संघर्ष कर रहे हैं. इस अलगाव की मुख्य वजह, इस क्षेत्र का सामाजिक और राजनीतिक रूप से अलग-थलग रह जाना है. अतम के मुताबिक़ सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक और जातीय रूप से हम भारतीयों से भिन्न हैं. यदि शांति वार्ता असफल होती है तो एनएससीएन (आईएम) के जवान भारतीय सेना से लोहा लेने के लिए तैयार हैं.

फोटो-*प्रभात पाण्डेय*

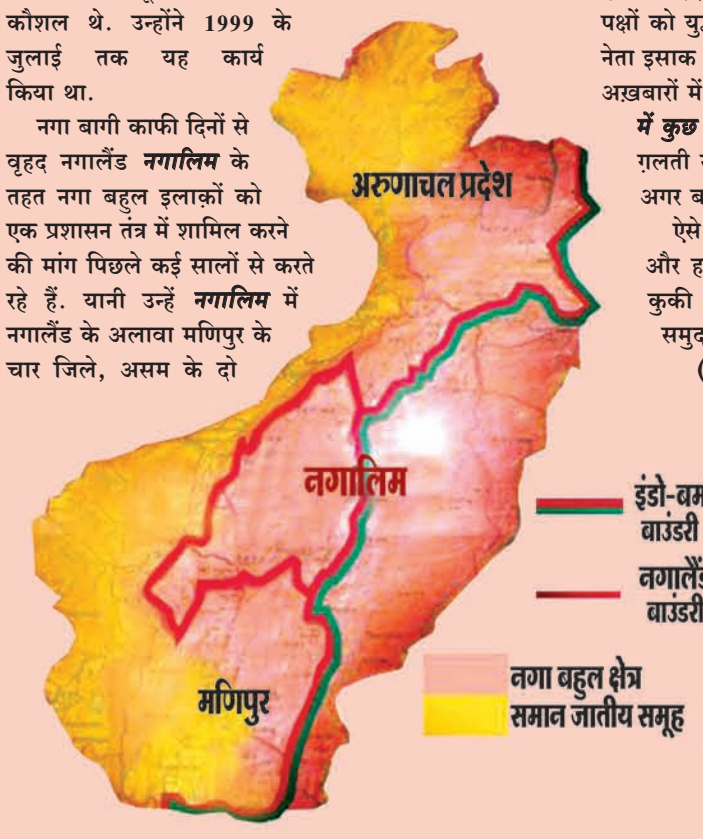

13 जनवरी 2001 को केंद्र सरकार और एनएससीएन के बीच हुए सीज़ फायर ग्राउंड रूल समझौते को 6 मार्च 09 को लागू किया गया. जिसके तहत,

- यह ग्राउंड रूल केवल नगालैंड राज्य में ही चालू होगा.
- यह रूल चलाने का दायित्व केंद्र सरकार का होगा.
- एक दूसरे के ख़िलाफ़ कार्रवाई बंद करना और अन्य आतंकवादी गुटों को सहायता न देना.
- एनएससीएन (आईएम) के कार्यकर्ता सीएफसीवी में बताए बिना अपने कैंप से बाहर नहीं जाएंगे, न ही जबरन चंदा लेंगे और न ही नए कार्यकर्ताओं की भर्ती करेंगे.
- आर्मी, पैरा-मिलिट्री फोर्स और पुलिस रक्षा दल या पेट्रोलिंग के लिए अवरूद्ध पैदा नहीं करना.

लेकिन इसके साथ ही यह सवाल अभी बरक़रार है कि क्या इस समझौते से लंबे समय से चली आ रही नगा समस्या का शांतिपूर्ण समाधान हो पाएगा? क्या दूसरे नगा संगठन एनएससीएन-(के) इस समझौते को स्वीकार करेंगे. जो एनएससीएन-आईएम गुट के साथ लगातार ख़ूनी संघर्ष में शामिल रहा है. इससे यह साफ़ है कि यदि केंद्र सरकार और एनएससीएन के बीच भले ही यह समझौता हो जाए, लेकिन जबतक खपलांग गुट इस पर सहमत नहीं होता, यह प्रयास सफल होगा, कहना मुश्किल है.

नगा शांति वार्ता का मणिपुर में असर

उधर, 2001 के 18 जून को मणिपुर में केंद्र सरकार और एनएससीएन (आईएम) के बीच युद्ध विराम की ख़बर पहुंचते ही पूरे प्रदेश में विरोध के स्वर सुनाई देने लगे. इसकी वजह थी, युद्धविराम को मणिपुर में भी लागू करना. मणिपुर की कई संस्थाओं ने इसे मानने से इंकार कर दिया. अमुको, एमसु, निपको, एमकिल, ईपसा, यूपीएफ जैसे संगठनों ने इस समझौते को वापस लेने के लिए केंद्र सरकार पर दबाव बनाने के इरादे से हड़ताल की घोषणा कर दी. इस दौरान कई मासूमों को अपनी जान भी गंवानी पड़ी. हड़ताल के दौरान सड़कों पर उतरे भाड़ी ने जनसैलाब की शक्ल अख्तियार कर ली. जिसे क़ाबू करने के लिए पुलिस को आंसू गैस और ब्लैंक-फायर तक करना पड़ा. वहीं जवाबी हमले में भीड़ ने पुलिस पर पत्थर फेंकना शुरू कर दिया. हालात की गंभीरता का अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है कि लोगों ने राज्यपाल के बंगले को भी घेर लिया और राजभवन के सामने गृहमंत्री और प्रधानमंत्री के पुतले जलाए. यहां तक कि आक्रोशित भीड़ ने राजनेताओं और उसके आवास को जला कर राख कर दिया. हालात इतने बेक़ाबू हो गए कि सुरक्षा बलों को संभालना मुश्किल हो गया. लोगों के गुस्से का शिकार मणिपुर स्टेट कांग्रेस पार्टी कार्यालय भी जिसे लोगों ने आग के हवाले कर दिया. इसके साथ-साथ बीटी रोड स्थित मणिपुर प्रदेश कांग्रेस कमेटी ऑफिस, रूपमहल टेंक स्थित समता पार्टी का ऑफिस और सीपीआई का ऑफिस आदि को भी जलाने की कोशिश की गई. इसके बाद लोगों के गुस्से का निशाना बना मणिपुर लेजिस्लेटिव एसेंबली. इतना ही नहीं सीआरपीएफ से लैस मुख्यमंत्री बंगले के पश्चिम गेट को तोड़ कर भीड़ अंदर घुस गई और कांफ्रेंस हॉल को आग के हवाले कर दिया. जिसमें दो पूर्व विधायकों की जलकर मौत हो गई.

इसके बाद भीड़ को क़ाबू करने के लिए सीआरपीएफ ने भी अंधाधुंध गोलियां चलाई, जिसमें 13 लोगों की घटना स्थल पर ही मौत हो गई. जबकि शाम तक मरने वालों की संख्या 18 तक पहुंच गई. हालात को बेक़ाबू होते देख तीन ज़िले में कर्फ्यू लगा दिया गया. इस तरह मणिपुर की जनता ने मणिपुर में सीज फायर हटाने के लिए पूरे राज्य में तबाही मचा दी. केंद्र सरकार का नगालैंड के साथ मिल कर सीज फायर बढ़ाने का ही नतीजा था कि इस अमानवीय और बर्बर घटना को अंजाम दिया गया. ऐसे में अब देखना यह है कि केंद्र की एनएससीएन (आईएम) से सीधी वार्ता कहां तक सफल होती है.

bijen@chauthiduniya.com

राहुल मिश्र

राजशेखर के जाने का मतलब

राजशेखर रेड्डी एक कठोर और निर्भीक मुख्यमंत्री थे. राज्य में दिन-प्रतिदिन की घटनाओं पर वे पैनी नज़र रखते थे. अपने विरोधियों को उन्होंने यह साबित कर दिया कि आंध्रप्रदेश को उनसे बेहतर ढ़ंग से कोई नहीं समझता. 2004 के विधानसभा चुनावों में उन्होंने विपक्ष के पैरों तले ज़मीन खिसका दी. इस चुनाव को ग्रामीण इलाक़ों की बग़ावत का दर्ज़ा मिला.

पिछले कुछ दशकों में कई नेताओं की मौत के हम गवाह रहे हैं. कई मुख्यमंत्री थे, तो दो प्रधानमंत्री भी. कुछ की मौत सामयिक थी, कुछ की असामयिक. कुछ की प्राकृतिक, कुछ की आकस्मिक. कुछ दुनिया में अपनी पूरी पारी खेल विदा हुए, कुछ असमय ही काल के गाल में चले गए. अगर राजशेखर रेड्डी की मौत को देखें, तो कुछ बातें जेहन में आती हैं. पहली, यह मौत असामयिक थी. दूजे,यह दुर्घटना थी. और, सबसे अहम बात यह कि किसी कांग्रेसी मुख्यमंत्री के निधन पर इस तरह के शोक-प्रदर्शन ने यह भी सिद्ध कर दिया कि वाय एस आर ने जनता की धड़कन को पहचान लिया था, नब्ज़ को पढ़ लिया था. उनके निधन पर शोकाकुल जनसैलाब ने जता दिया कि अब भी नेताओं की इज़्ज़त बची हुई है. उनकी मौत मानो किसी दक्षिण भारतीय सितारे का अंतिम प्रयाण का रिप्ले दिखा रही थी.

येदुगिरी राजशेखर रेड्डी के निधन की ख़बर आते ही पूरे देश में मातम छा गया. उत्तर और दक्षिण की राजनीति को दरकिनार कर एकबार समूचा देश शोकसंतप्त हो उठा. राजनीतिक हलकों में सन्नाटा पसर गया. कांग्रेस ने अपना एक महत्वपूर्ण मुख्यमंत्री खो दिया. रेड्डी के निधन को कांग्रेस के अलावा भाजपा, जनता दल और वामदलों समेत सभी प्रमुख दलों के नेताओं ने राष्ट्रीय नुकसान के साथ-साथ एक निजी नुकसान माना. बसपा सुप्रीमो मायावती ने तो यहां तक कह दिया कि देश के पिछड़े वर्ग ने एक बुलंद आवाज़ खो दी है. इन सभी शोक संदेशों में कई विशेषण इस्तेमाल किए गए. प्रगतिशील, कर्मठ, समर्पित, कद्दावर, दूरदर्शी, कुशल, कठोर, धरती पुत्र, करिश्माई, गतिशील, मसीहा .. वगैरह, वगैरह.

वह आंध्रप्रदेश की रायलसीमा विधानसभा से चार बार विधायक चुने गए. इसी क्षेत्र से चार बार लोकसभा पहुंचे रेड्डी ने पूरे राजनीतिक जीवन में कभी कोई चुनाव नहीं हारा. पिछली जुलाई में ज़िंदगी के साठ साल पूरे कर चुके रेड्डी एक दोस्तों के दोस्त और दुश्मनों के लिए गॉडफादर माने जाते रहे, जो अपना बदला बिल्कुल ठंडे दिमाग़ से लेता था. यह भी क़ाबिलेग़ौर है कि रेड्डी अपने दुश्मनों को दोस्त में बदलने की कला में माहिर थे. प्रदेश राजनीति के शीर्ष पर राजशेखर का उदय ऐसे समय में हुआ जब 2004 में एन चंद्रबाबू नायडू की सरकार थी. तत्कालीन राजनीतिक समझ, प्रदेश की सत्ता में कांग्रेस की वापसी की किसी संभावना को नकार रही थी. राजशेखर के सामने एन चंद्रबाबू नायडू की एक बड़ी चुनौती थी. हैदराबाद की समृद्धि के मुक़ाबले तेलंगाना और रायलसीमा में भुखमरी और ग़रीबी पैर पसारने लगी थी. कांग्रेस के अधिकांश नेता चंद्रबाबू नायडू से पहले ही मानसिक तौर पर हार स्वीकार चुके थे. वे पहले ही मान बैठे थे कि नायडू इस समस्या से निबटने में कामयाब होंगे, और कांग्रेस को इस आपदा में अपना वज़ूद तलाशने का मौका नहीं मिलेगा. राजशेखर रेड्डी को यही चुनौती और भी मेहनत करने को प्रेरित कर रही थी. राजशेखर जनता की समस्याओं से रूबरू होने उनके बीच जा पहुंचे. उन्होंने प्रदेशव्यापी पदयात्रा कार्यक्रम की शुरुआत की. राजशेखर ने घर-घर जाकर लोगों की समस्याओं को सुना और नायडू के ख़िलाफ़ पनप रहे जनाक्रोश को भुनाया. राजनीतिक भाषा में कहें तो राजशेखर ने नायडू के विरोध की अंतर्धारा को पूरी तरह अपनी तरफ कर लिया. वास्तविकता तो यह थी कि राजशेखर ने चंद्रबाबू नायडू के ख़िलाफ़ एक भूचाल की ऊंगली थाम ली, जिसके सहारे वह प्रदेश की सबसे बड़ी कुर्सी तक जा पहुंचे. मुख्यमंत्री बनने के बाद भी राजशेखर रेड्डी ने जनता के बीच जाने की यह प्रथा जारी रखी. प्रदेश के किसी कोने में समस्या या विवाद की ख़बर मिलने पर वे इस बात का इंतजार नहीं करते थे कि मामला पहले उन तक पहुंचे. उनकी कोशिश रहती थी कि वे ख़ुद जल्द से जल्द समस्या को निबटाने की पहल करें. इसके लिए अगर उनको अपना कोई भी अमूल्य काम छोड़कर वहां जाना भी पड़े तो वे हमेशा तत्पर रहते थे. 2006 की बाढ़ में यह साफ देखने को मिला, जहां एक तरफ महाराष्ट्र के कांग्रेस मुख्यमंत्री विलासराव देशमुख बाढ़ के दौरान विदेश यात्रा करते रहे वहीं राजशेखर रेड्डी अपनी जनता के बीच रहकर बाढ़ नियंत्रण और राहत कार्य का निर्देशन करते रहे.

राजशेखर मीडिया के बनाए और उसके मुताबिक़ चलने वाले मुख्यमंत्री नहीं थे. जनता के बीच वे अपनी संवेदनाओं के साथ रहते थे. अपनी राजनीतिक शक्ति और क्षमता को वे अपनी जनता के लिए इस्तेमाल करते थे. किसानों का काल हो या व्यापारियों का बर्ताव, रेड्डी हरेक जगह अपनी पूरी आभा और दमक के साथ मौजूद रहते थे. यही वजह थी कि वंशवाद की शिकार कांग्रेस में वह एकमात्र मुख्यमंत्री थे, जो दस जनपथ के निर्देश के बिना भी फ़ैसले ले सकते थे- भले ही पूरी राजनीतिक चतुराई के साथ. 2004 के विधानसभा चुनावों में उन्होंने विपक्ष के पैरों तले ज़मीन खिसका दी. इस चुनाव को ग्रामीण इलाक़ों की बग़ावत का दर्ज़ मिला.केवल दो साल के अपने कार्यकाल में, साल 2006 के नगरपालिका चुनावों में उन्होंने कांग्रेस का परचम 96 में से 75 नगरपालिका सीटों पर लहरा दिया. इनमें से 68 नगरपालिकाओं में कांग्रेस को पूर्ण बहुमत मिला. कांग्रेस को सत्ता से बेदखल किया था-दो रुपए किलो चावल के वायदे ने. एनटीआर के इस वादे का कांग्रेस ने मखौल उड़ाया था.

एनटीआर का यह वादा टिका नहीं और उन्हें इस वादे से मुंह मोड़ना पड़ा. एनटीआर के इसी वादे को रेड्डी ने नए रंगरूप में अपना लिया और प्रदेश की जनता को दिखाया कि वादा दरअसल कांग्रेस का था. आंध्रप्रदेश में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के जरिए सस्ता चावल मुहैया कराया जाने लगा. नतीजा कांग्रेस के पक्ष में इस कदर गया कि 2009 के लोकसभा चुनावों में आंध्रप्रदेश, कांग्रेस के लिए सर्वाधिक सांसद भेजने में क़ामयाब हुआ. आज, राजशेखर रेड्डी के साथ एकमात्र ऐसे कांग्रेसी मुख्यमंत्री की पारी का अंत हो गया जो महज़ अपने जनाधार के चलते राज्य के सर्वोच्च पद पर पहुंचा.

ज़ाहिर है, दस जनपथ को उनकी कमी बुरी तरह खलेगी.

rahul@chauthiduniya.com

मीडिया वाच

ब्रेकिंग न्यूज़ के चक्कर में टूटती मीडिया

व्यालोक

हम अपनी मीडिया के बारे में चाहे कितना ही कुछ कहें, वह कम ही लगता है-हरि अनंत, हरि कथा अनंता. अभी पिछले सप्ताह आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री वाय एस आर की दुर्घटना में मृत्यु के समय भी हमारे ख़बरिया चैनलों ने अपनी संवेदनहीनता, हृदयहीनता, लालच और टीआरपी बटोरने की उम्मीद में नैतिकता और मूल्यों को ध्वस्त करने की अपनी जल्दी को हमारे सामने बिल्कुल साफ कर दिया.

वाय एस आर का हेलीकॉप्टर जब से लापता हुआ, ख़बर के भूखे ख़बरिया चैनलों को मानो जीवनदान ही मिल गया. वैसे, यह भी मज़े की बात है कि हमारे ख़बरिया चैनलों को इस देश में ख़बरें खोजनी होती हैं, जहां हर पल ही एक ख़बर है. बात सचमुच अचंभे की है. भूत-प्रेत, नाग-नागिन और एलियंस में न्यूज़ वैल्यू खोजने वाले चैनलों को भला अकाल, ग़रीबी और अभाव में कौन सी ख़बर दिखाई देगी.

एक तरह से राजशेखर भाग्यशाली रहे. वह अमेरिका में नहीं थे. या कहें, वह माइकल जैक्सन नहीं थे. वरना उनको तो शायद दफनाने की भी इजाज़त नहीं दी जाती. जिस तरह जैक्सन की लाश की दो महीने तक दुर्गति की गई (वैसे, जैक्शन की लाश में दुर्गति करने लायक कुछ था भी क्या?), हमारे राजशेखर तो कम से कम उससे बच ही गए.

वैसे, राजशेखर रेड्डी के गुम होने और उनकी मौत की पुष्टि होने के बीच हमारे चैनल खूब खुल कर खेले. हरेक को ब्रेकिंग देने की जल्दी और हरेक को सबसे आगे बने रहने की होड़ ने बिल्कुल दीवाना बना दिया. अगर वाय एस आर की मौत की कवरेज के बाद भी हमारे ख़बरिया चैनल या उनका कोई नुमाइंदा अपनी सफाई देने की हिमाक़त करता है, तो फिर उसके लिए मेरी नानी की एक कहावत ही मुझे याद आती है. वह अनपढ़ थी, पर बोलती संस्कृत की कहावत थी- एक लज्जा परित्यज्य, सर्वत्र विजयी भवेत्, यानी एक शर्म को जिसने छोड़ दिया, उसने पूरे संसार पर विजय पा ली.

वाय एस आर का हेलीकॉप्टर जब से लापता हुआ, ख़बर के भूखे ख़बरिया चैनलों को मानो जीवनदान ही मिल गया. वैसे, यह भी मज़े की बात है कि हमारे ख़बरिया चैनलों को इस देश में ख़बरें खोजनी होती हैं, जहां हर पल ही एक ख़बर है. बात सचमुच अचंभे की है. भूत-प्रेत, नाग-नागिन और एलियंस में न्यूज़ वैल्यू खोजने वाले चैनलों को भला अकाल, ग़रीबी और अभाव में कौन सी ख़बर दिखाई देगी.

यह बात मैं जब भी कोई ख़बरिया चैनल देखता हूं, तो मेरे जेहन में गूंजती है. वाय एस आर की मौत की ख़बर को लेकर भारतीय ख़बरिया चैनलों की क्रूरता और बदतमीजी तो सारी हदों को पार कर गई. एक व्यक्ति, वह भी कोई ऐसा-वैसा नहीं, किसी राज्य का मुख्यमंत्री ग़ायब है, मौत से जूझ रहा है और शायद मर भी चुका है, उस पर हमारे ख़बरिया चैनलों ने पूरे दिन जिस तरह की पत्रकारिता की, वह बेहद शर्मनाक और दिल को दहला देने वाली है.

ज़रा बानगी देखिए. अचानक से किसी न्यूज चैनल को यह इलहाम होता है कि वाय एस आर ज़िंदा है. सबसे तेज़ चैनल इसकी कवायद शुरू करता है और उसके बाद तो मानो झड़ी लग जाती है. कोई चैनल उनको आदिवासियों के बीच दिखाता है, तो कोई उनके पैदल आने की ख़बर दिखा रहा था. बेशर्मी की हद तो यह कि चैनल के पुरोधा एंकर की कुर्सी संभाल कर तीन घंटे तक इस झूठ को दुहराते रहे. उस पर निर्लज्जता की दुहाई देखिए कि जब सच का पता चला (वैसे इस उत्तर-आधुनिक युग में सच और झूठ का पता कहां चलता है) तो चैनल ने तुरंत ब्रेकिंग चला दी-आदिवासियों ने बोला झूठ, दिया ग़लत पता, हुई उनसे पहचानने में चूक...वगैरह वगैरह. मतलब यह कि आदिवासी बेवकूफ हैं और वह कभी भी कुछ भी कह सकते हैं.

सवाल यह उठता है कि आख़िर ऐसा क्यों होता है? ब्रेकिंग न्यूज़ देने के चक्कर में दरअसल हमारे ख़बरिया चैनल टूट और बिखर रहे हैं. सबसे तेज, सबसे पहले होने की फिराक़ ने चैनलों को दुबला कर रखा है. यही वजह है कि ख़बरों को सत्यापित करने की कोई तकनीक उनके पास है ही नहीं.

मीडिया पागल भेड़िए की तरह व्यवहार कर रही है. उसके पास न तो धैर्य है, न ही नैतिक मूल्य. वह तो बस भूखों की तरह ख़बरों के मांस पर टूट पड़ी है. यही वजह राजशेखर की दुर्दशा की हुई.

अब बस, एक ब्रेकिंग न्यूज़ आनी बाक़ी है. वह कुछ ऐसी होगी- हम दिखा रहे हैं, ब्रेकिंग बलात्कार. और, पल-पल होता बलात्कार का जीवंत प्रसारण.

vyalok@chauthiduniya.com

पुलिसिया पटकथा की अंतहीन दास्तान

वह 22 जून 2007 की रात थी. जलालुद्दीन उर्फ बाबू भाई के साथ अली अकबर हुसैन, अजीजुर्रहमान और शेख़ मुख्तार चारबाग़ लखनऊ, रेलवे स्टेशन किसी आतंकी वारदात को अंजाम देने आए. बाबू भाई ने तीनों को स्टेशन पर ही रुकने के लिए कहा और ख़ुद कहीं और चला गया. 23 जून की सुबह चाय पीने के लिए जब वे तीनों स्टेशन से बाहर आए तो टीवी पर चल रही ख़बर देखकर हैरान रह गए. यह ख़बर थी बाबू भाई की गिरफ़्तारी की. जिसने इनको सकते में ला दिया. इसके बाद वे रायबरेली जा रही जीप से पीजीआई पहुंचे, जहां इन्होंने एक कोठरी की पिछली दीवार के पास गड्ढा खोद डेटोनेटर और हैंड ग्रेनेड छिपा दिया.

थर्ड क्लास की जासूसी फिल्मों से ली गई इस पुलिसिया पटकथा का ख़ुलासा तब हुआ, जब अजीजुर्रहमान को 22 जून 07 को तिलजला कोलकाता में डकैती की साज़िश के आरोप में गिरफ़्तार कर अलीपुर न्यायालय में पेश किया गया. जहां न्यायालय ने इसे 5 दिनों के पुलिस रिमांड में भेज दिया. ऐसे में सवाल उठता है कि जो अजीजुर्रहमान पुलिस हिरासत में था, वह लगभग एक हज़ार किमी की दूरी तय कर लखनऊ कैसे आ सकता है.

यह सवाल उठने के बाद से ही यूपी एसटीएफ सकते में आ गयी है. इस पूरे मामले से पीछा छुड़ाने के लिए यूपी के एडीजी बृजलाल यह कहते नहीं थक रहे कि मामला अभी अदालत में है. पुलिस की इस ग़ैर-ज़िम्मेदराना और आपराधिक रवैये ने सैकड़ों निर्दोष लोगों को जेलों में सड़ने के लिए मज़बूर कर दिया हैं. अपराध नियंत्रण के नाम पर जो छूट एसटीएफ को मिली हुई है, इसी की वजह से ऐसी स्थितियां सामने आ रही हैं. अपराधियों के नाम पर वह निर्दोष लोगों को या तो फर्ज़ी मामलों में फंसा रही है या इनका एनकाइंटर कर रहे हैं.

बहरहाल, सवाल यह है कि आख़िर पुलिस को इतनी भारी मात्रा में विस्फोटक कहां से बरामद हुआ, क्योंकि अजीजुर्रहमान कोई पहला शख़्स नहीं है, जिससे पुलिस ने इतनी भारी मात्रा में हथियार बरामद होने की बात कही हो. इसके पहले आफताब आलम अंसारी, जिसे हुजी का एरिया कमांडर और कचहरी धमाकों का मास्टर माइंड बताया गया था, इससे भी डेढ़ सौ कुंतल आरडीएक्स बरामदगी का दावा पुलिस ने किया था. दरअसल इस पूरी कहानी को गढ़ने के लिए यूपी पुलिस ने एक अभियान चलाया. लेकिन इस पुलिसिया अभियान का पर्दाफ़ाश उसी समय हो गया, जब ऋषिकेश से पकड़े गए नासिर को पुलिस ने 21 जून 07 के प्रेस कांफ्रेंस के लिए पेश किया. पत्रकारों ने पूछा कि क्या यह वही नासिर है जिसे ऋषिकेश से पकड़ा गया है. इससे पुलिस सकते में आ गई और तकनीकी कारणों का हवाला देकर नासिर को वहां से हटा दिया और इस पर कुछ भी बोलने से इनकार कर दिया. बाद में चार्जशीट में पुलिस ने इसे उसी दिन लखनऊ से गिरफ़्तार करने का दावा किया. हूजी के नाम पर इन युवकों को पकड़ने का अभियान पुलिस ने 21 जून 07 से ही शुरू कर दिया था. एसटीएफ ने नासिर को नाका से तो याकूब को हुसैनगंज थाना क्षेत्र लखनऊ से गिरफ़्तार करने का दावा किया. 9 जून 07 को 2 बजे के बाद से जब याकूब का कुछ अता पता नहीं चल रहा था. 22 तारीख़ को अख़बार में छपी ख़बर से इसके घर वाले को इसका पता चल पाया कि पुलिस ने इसे आतंकवादी बता कर गिरफ़्तार कर लिया है. पुलिस की मानें तो नासिर और याकूब से पूछताछ में ही इन्हें यह पता चला कि बाबू भाई और नौशाद एक बड़ी आतंकी वारदात को अंजाम देने के लिए लखनऊ आए हुए हैं. इसके बाद पुलिस को सूचना मिली कि 22 जून 07 की रात क़रीब साढ़े ग्यारह बजे अमीनाबाद के एक होटल में वे दोनों भारी मात्रा में विस्फोटक और हथियारों के साथ हैं. इसके बाद पुलिस ने इनकी घेरेबंदी की, दोनों के बीच मुठभेड़ भी हुई. अंतत: पुलिस रात के 2:40 बजे के आसपास जलालुद्दीन और नौशाद को एके 47, पिस्टल और भारी मात्रा में विस्फोटक के साथ गिरफ़्तार करने में सफल हो गई. लेकिन ध्यान देने वाली बात है कि पुलिस ने जिस जलालुद्दीन को हूजी का बहुत बड़ा मास्टर माइंड बताया, वह गिरफ़्तारी के तुरंत बाद ही किसी रट्टू तोते की तरह सब कबूलने लगा. इतना ही नहीं, पुलिस ने यह भी बताया कि अजीजुर्रहमान के मुताबिक़ अजीज और इसका भाई शहर से आरडीएक्स लाते थे और कमरे पर साथ-साथ दूसरे लोगों को भी ट्रेनिंग देते थे. पुलिस ने आरडीएक्स का ज़िक्र ऐसे किया मानों वह किराने की दुकान पर मिलने वाली कोई वस्तु हो.

इस पूरी घटना में अजीजुर्रहमान का इकबालिया बयान और इसके बयान पर उप अधीक्षक आर एन सिंह ने जो बरामदगी दिखायी वो काफी महत्वपूर्ण

थर्ड क्लास की जासूसी फिल्मों से ली गयी इस पुलिसिया पटकथा का ख़ुलासा तब हुआ, जब अजीजुर्रहमान को 22 जून 07 को तिलजला कोलकाता में डकैती की साज़िश के आरोप में गिरफ़्तार कर अलीपुर न्यायालय में पेश किया गया. जहां न्यायालय ने इसे पांच दिनों की पुलिस रिमांड में भेज दिया.

है. जिसमें बताया गया कि जलालुद्दीन की गिरफ़्तारी के बाद वह अपने साथियों के साथ विस्फोटक छुपाकर इलाहाबाद होते हुए कोलकाता चला गया और वहीं पकड़ा गया. बाद में इसे लखनऊ लाया गया. इस बयान से साफ ज़ाहिर होता है कि यह अजीजुर्रहमान का नहीं बल्कि पुलिस के दबाव में दिया गया झूठा बयान है. साथ ही यह कि इसे कोलकाता में पकड़ा गया और वह अलीपुर में किसी दूसरे आरोप में है, इसे बताने से बचना चाहती है. ऐसा करने से इसकी पूरी कहानी ही बिगड़ जाएगी. क्योंकि एक व्यक्ति जो कोलकाता पुलिस की हिरासत में था, वह इसी दिन लखनऊ में कैसे हो सकता है. ऐसे निर्दोष लोगों की सहायता करने वाले वकील मो शोएब की मानें तो अजीजुर्रहमान जैसे कई युवक हैं जो आतंकवाद के नाम पर पुलिसिया क़हर का शिकार बन रहे हैं. अहम बात यह कि एसटीएफ और पुलिस इन्हें वकील की भी सुविधा नहीं लेने देते. जबकि हक़ीक़त यह है कि यदि इनके मामले की सुनवाई ढंग से की जाए तो इन पर एक भी आरोप साबित नहीं होगा. वह कहते हैं कि अजीजुर्रहमान का मुक़दमा इन्हें दिसंबर 08 में मिला और इसके मामले की छानबीन चल रही है. वह बहुत ही जल्द जेल से बाहर होगा. यह हमारी न्याय व्यवस्था के लिए शर्म की बात है कि अजीज सिर्फ़ वकील न मिलने की वजह से ही जेल में बंद है. अजीजुर्रहमान की कहानी यह है कि वह एक मजदूर था. लेकिन इस घटना ने इसकी पत्नी आरिफ़ा को तोड़ दिया. अजीज अपने घर में अकेला कमाने वाला शख़्स था, ऐसी हालत में दिन-ब-दिन इसके घर की हालत बिगड़ती गई और परिवार वाले दाने-दाने को मोहताज हो गए हैं. अब इसके छूटने की उम्मीद बढ़ी है तो अजीज की बूढ़ी मां कहती हैं, ख़ुदा के घर देर है अंधेर नहीं. लेकिन सोचने वाली बात है कि पुलिस जिस तरह निर्दोष लोगों को फ़र्ज़ी मामले में फंसाने लगी है, वह चिंता की बात है. ऐसे में झूठे अपराध में फंसाने वाले पुलिस अधिकारियों के ख़िलाफ़ मुक़दमा

राजीव यादव

feedback@chauthiduniya.com

मानवाधिकारों के हैं कई आयाम

भारत में क़ैदियों की और उन्हें हिरासत में रखने संबंधी कई समस्याएं हैं. मसलन, जेलों में क्षमता से अधिक क़ैदियों का होना, पर्याप्त चिकित्सा सुविधा की कमी, हिरासत में मृत्यु, बाल और महिला क़ैदियों के लिए पर्याप्त आवास की सुविधा में कमी. इसके साथ ही मुक़दमे की सुनवाई के लिए वर्षों जेल में ही इंतज़ार करना, घटिया प्रशासनिक व्यवस्था, क़ैदियों को अपने वकील से सलाह-मशविरा नहीं करने देना तथा प्रशासकों और परिवार की लापरवाही जैसी भी कई समस्याएं हैं. गृह मंत्रालय द्वारा मुहैया कराए गए राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के मुताबिक़ अधिकांश जेलें जबरन पकड़े गए क़ैदियों से भरी पड़ी है. दिल्ली, गुजरात और छत्तीसगढ़ के जेलों में क़ैदियों की तादाद सामान्य से 200 फ़ीसदी अधिक है. इनमें अधिकांश न्याय के लिए अपनी बारी आने के इतंजार में यहां अपनी ज़िंदगी काट रहे हैं. ऐसे क़ैदियों की संख्या पूरे देश में कुल क़ैदियों की लगभग दो-तिहाई है. विच-राधीन क़ैदियों की कहानी यह है कि, उनमें अधिकांश ऐसे है, जिन्होंने जितना वक़्त जेल में बिताया है, यदि उन्हें सज़ा मिल गई होती तो भी वे काफी पहले जेल से बाहर आ चुके होते. साथ ही कई ऐसे हैं, जिनकी ग़लती काफी छोटी थी और उनपर आरोप भी साबित नहीं हुआ, फिर भी दशकों से वह जेल की हवा खा रहे हैं.

राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मानदंड

ये समस्याएं काफी पहले ही सामने आई और अब ज़रूरत है कि 1894 की सदियों पुरानी जेल अधिनियम को बदल दिया जाए. ब्रिटिश शासन के दौर का है और सैकड़ों वर्षों से कई राज्यों में अभी भी लागू हैं. उच्चतम न्यायालय और राष्ट्रीय समिति ने ऐसे कई रिपोर्ट पेश किए जिसमें जेलों में बंद क़ैदियों समेत, नागरिकों की आज़ादी और उनके जीने के अधिकार संबंधी मूलभूत अधिकारों की रक्षा के लिए क़ानूनों में सुधार की बात कही है. 1980 में चर्चित अखिल भारतीय सुधार समिति (जस्टिस ए एन मुल्ला की अध्यक्षता में मुल्ला कमिटी) ने इन समस्याओं का अध्ययन किया और जेल सुधारों से संबंधित 658 सिफ़ारिशें सरकार के सामने रखीं.

इनमें क़ैदियों की वर्दी, उनके लिए पर्याप्त आवास की सुविधा, बाल और महिला क़ैदियों के लिए अलग से व्यवस्था संबंधी सुझाव शामिल थे. दुर्भाग्यवश, केंद्र और उच्चतम न्यायालय ने इन निर्देशों को मानने का फ़ैसला राज्य सरकारों पर छोड़ दिया और राज्य सरकारों ने इन सुझावों पर ढुलमुल रवैया अपनाया. इसी बीच ख़ुद राज्यों द्वारा प्रस्तावित सिफ़ारिशें भी अपनी पटरी से उतरती रहीं. भारत कई अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों और क़ानूनों से जुड़ा है, जो जेलों में बंद क़ैदियों के साथ मानवीय व्यवहार के लिए जेल प्रबंधन प्रणाली अपनाने की सिफ़ारिश करता है.

इनमें क़ैदियों के साथ व्यवहार के लिए अंतरराष्ट्रीय नागरिक और राजनीतिक अधिकार के लिए संयुक्त राष्ट्र के न्यूनतम मानकों, मसलन, साफ-सफाई, भोजन, बिस्तर, चिकित्सा- सेवाओं, अनुशासन और दंड और धर्म संबंधी दिशा-निर्देशों को अपनाने की बात कही गई है. न्यूनतम मानक नियम दिशा-निर्देश क़ैदियों के ख़ास वर्ग, जैसे मानसिक रूप से अक्षम, के लिए भी लागू है. भारत में जेल-सुधार संबंधी उच्चतम-न्यायालय और कई दूसरे राष्ट्रीय सहित अंतरराष्ट्रीय दिशा-निर्देशों की व्यवस्थाएं हैं, लेकिन इनकी सफलता दर काफी कम हैं. हालांकि अभी कई फ़ैसले लिए गए हैं, जो यदि ज़मीनी स्तर पर लागू किए जाए तो नतीजे अच्छे आ सकते हैं.

नई सुधार की पहल

1988 में गृह मंत्रालय ने राज्यों को एक नया मसौदा भेजा, जो क़ानून की शक्ल नहीं ले सका. राजस्थान उन राज्यों में एक है, जिसने 2001 में क़ैदियों के अधिकार और कर्तव्यों के लिए राजस्थान जेल अधिनियम लागू किया. मध्यप्रदेश सरकार के प्रयासों की वजह से कुछ जेलों में क़ैदियों की साक्षरता दर 100 फ़ीसदी हासिल करने के प्रयास किए जा रहे हैं. साल 2005 में, पुलिस अनुसंधान और विकास ब्यूरो, जेल अधिकारियों, शिक्षाविदों और कई विशेषज्ञों की मदद से एक मॉडल नेशनल प्रिजन मैनुअल को सामने लाने के लिए प्रयास किए गए हैं. इस मैनुअल की कुछ महत्वपूर्ण सिफ़ारिशों में, जेल- विभाग, सुधार- सेवाएं, जेल संबंधी राष्ट्रीय आयोग, बंदियों के पुनर्वास संबंधी व्यवस्थाएं, जेल में क़ैदियों की संख्या और उनका आधुनिकीकरण शामिल हैं. इस पर राज्यों के साथ-साथ, ग़ैर-सरकारी संगठनों से भी बात चल रही है. 2006 में, भारत सरकार ने याचिका क़ानूनों में बदलाव करते हुए, कम सजा के बदले अभियोजन पक्ष को कम शुल्क देने की बात कही. सरकारी अनुमान के मुताबिक़ इससे 50,000 विचाराधीन क़ैदियों को मदद मिलेगी. हाल में सुधार संबंधी कई घोषणाए भी की गई हैं. एक राष्ट्रीय दैनिक में छपे लेख के मुताबिक़, 2008 में क़ैदियों के सुधार गृह के लिए क़रीब 4,000 करोड़ रुपए की राष्ट्रीय योजना को मंजूरी दी गई, जिसके अंतर्गत जेलों को शहर से बाहर कम आबादी वाले जगहों पर विस्थापित किया जाएगा, ताकि उस ज़मीन का व्यवसायिक इस्तेमाल हो सके और उस ज़मीन की बिक्री से शहर के बाहर विशाल जेलों के निर्माण में मदद मिल सकेगी. योजना के अनुसार इन नए जेलों में मौजूदा जेलों के मुक़ाबले सभी अंतरराष्ट्रीय मानकों का विशेष ख्याल रखा जाएगा. इस नए क़ानून के मुताबिक़, इसे लागू करने के लिए राज्य सरकारें स्वतंत्र होंगी. जब तक कोई राज्य इस दिशा में क़दम नहीं उठाता, तब तक इस राष्ट्रीय सुधार का सफल होना मुश्किल है. सौभाग्य से, इस दिशा में कुछ महत्वपूर्ण क़दम उठाए जा रहे हैं. बहुत से राज्य,अखिल भारतीय आयोग की सिफ़ारिशों के मुताबिक़, पुराने जेल अधिनियम बदलने में लगे हैं. पिछले साल उत्तर प्रदेश सरकार ने यह घोषणा की कि वह इंग्लैंड और दूसरे देशों के जेल मैनुअल के अध्ययन के बाद नए जेल और सुधार अधिनियम का मसौदा तैयार कर रहा है. उसके बाद 1894 के जेल अधिनियम की जगह नए क़ानून को लागू किया जाएगा. मसौदा तैयार कर रहे सदस्यों में एक वरिष्ठ सदस्य ने बताया कि पुराने क़ानून आज के बदलते सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य में बिल्कुल सही नहीं ठहरते. इसलिए नए क़ानून की ज़रूरत आज की मांग है. इसी तरह पंजाब में भी पुराने जेल अधिनियम को बदलने की क़वायद चल रही है. इसमें कई सुधार प्रस्तावित हैं, मसलन, पांच नए जेलों का निर्माण, 50 बिस्तरों वाले अस्पताल, शैक्षिक सुविधा, कार्यशाला, कचरे को शुद्ध करने के संयंत्र, वीडियो कांफ्रेंस के लिए उपकरण आदि की व्यवस्था होगी. बिहार ने हाल ही में जेल प्रणाली के समक्ष आने वाली चुनौतियों के अध्ययन और उनमें बदलाव के लिए एक समिति गठित की है. भारत की जेल प्रणाली में सुधार की यह कोशिश सच साबित हो या नहीं फिर भी यह एक सवाल तो सामने खड़ा करेगा ही. यह साफ नज़र आ रहा है कि कई राज्य जांच, अध्ययन और बातचीत के स्तर से आगे बढ़े हैं तो कई इस नेक इरादे को लागू करने की योजना पर पानी फेर रहे हैं.

रवि नायर

(स्वतंत्र लेखक हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

ज़हरीली वादियों में दम तोड़ रहे आदिवासी

शिवदास

आदिवासियों की अनोखी नृत्य-कला और अपनी छटा के लिए कैमूर की वादियां पूरे देश में मशहूर हैं. अब हालात बदल चुके हैं. विंध्य की पहाड़ियों पर हो रहे अवैध खनन और क्रशर प्लांटों के कारण ये वादियां अब ज़हरीली हो चुकी है. वादियों की हवाओं में घुले ज़हर के कारण हज़ारों आदिवासी एवं वन निवासी हर वर्ष अपनी ज़िंदगी से हाथ धो रहे हैं. साथ ही, इन आदिवासियों की बहुमूल्य लोक-कला अपने शुरुआती दौर में ही दम तोड़ देती है.

फिर भी, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की क्षेत्रीय इकाई (सोनभद्र-मिर्जापुर) शासनादेश के विरुद्ध 119 घातक क्रशर प्लांटों के संचालन के लिए सहमति-आदेश पत्र जारी कर दिया है और सैकड़ों को जारी करने की क़वायद चल रही है. बोर्ड के इस कारनामे को अंजाम देने में जिला उद्योग केंद्र, ज़िला खादी ग्रामोद्योग बोर्ड और ज़िला वाणिज्य व्यापार कर विभाग बख़ूबी मदद कर रहा है .

ग़ौरतलब है कि सोनभद्र (4 मार्च, 1989 के पहले मिर्ज़ापुर) उत्तर प्रदेश का आदिवासी बहुल जनपद है. यहां के आदिवासी अपनी लोक-कलाओं जैसे करमा नृत्य, झूमर नृत्य, डोमकच नृत्य आदि का लोहा देश-विदेश के कार्यक्रमों में मनवा चुके हैं. आदिवासी संस्कृति की धनी कैमूर की वादियां, विन्ध्य पर्वत श्रृंखला की गोद में फैली हैं. विन्ध्य की पहाड़ियां उत्तर प्रदेश के सोनभद्र, मिर्जापुर, मध्य प्रदेश के सिंगरौली, सीधी, झारखंड के पलामू, बिहार के भभुआ जनपदों में खनिज पदार्थों की धनी है. खनिज पदार्थों की धनी होने के कारण विन्ध्य की पहाड़ियों में कोयला, डोलो स्टोन, सैंड स्टोन, लाइम स्टोन, बालू और मोरम का खनन तेज़ी से हो रहा है. सोनभद्र में भी डोलो स्टोन, कोयला, सैंड स्टोन, लाइम स्टोन, बालू और मोरम खनन का कार्य पिछले क़रीब चार दशक से हो रहा है. बीते डेढ़ दशक में अवैध खनन और क्रशर प्लांटों का संचालन तेज़ी से बढ़ा है और दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है.

सोनभद्र के बारी, डाला, बिल्ली-मारकुंडी, सुकृत आदि खनन क्षेत्रों में लगे क्रशर प्लांट खुलेआम एयर (प्रिवेंशन एंड कंट्रोल ऑफ पॉल्यूशन) एक्ट-1981 के नियमों का उल्लंघन कर संचालित किए जा रहे हैं. इस बात की पुष्टि वर्ष 2002 में केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड भी कर चुका है. केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के सदस्यों की टीम ने मध्य प्रदेश के सिंगरौली और सोनभद्र के खनन क्षेत्रों का दौरा कर क्रशर प्लांटों की स्थिति का जायज़ा लिया. टीम के एक सदस्य की मानें तो सोनभद्र के खनन क्षेत्र में संचालित हो रहे क्रशर प्लांटों को शीघ्र बंद कर देना चाहिए क्योंकि एक भी क्रशर मानकों को पूरा नहीं करता है. एक्ट के अनुसार विभागीय कार्यवाईयों (मानकों) के बाद क्रशर प्लांट संचालित होने वाले स्थलों के चारों ओर चारदीवारी की व्यवस्था होनी चाहिए . उद्योग वाले इलाक़े के 33 फ़ीसदी भाग पर चारदीवारी से पांच अथवा 10 मीटर की चौड़ाई पर चारों ओर पौधे लगने चाहिए. क्रशर प्लांट में लगी जालियों के चारों ओर टिन शेड की व्यवस्था होनी चाहिए. क्रशर प्लांट से निकलने वाले मटीरियल (प्रोडक्ट) की जगह पानी के फव्वारों की व्यवस्था होनी चाहिए साथ ही चारदीवारी के चारों ओर पानी के फव्वारे भी लगाने चाहिए. मटीरियल को ढोने वाले वाहनों के खड़े होने वाली जगह और गुजरने वाले मार्ग तारकोल, गिट्टी अथवा बोल्डर के बने होने चाहिए. सोनभद्र के खनन क्षेत्र में संचालित होने वाला कोई भी क्रशर प्लांट उपरोक्त मानकों को पूरा नहीं करता है जिसके कारण खनन क्षेत्र के वातावरण में एसपीएम (सस्पेंडेड पर्टिक्यूलर मैटर्स), आरएसपीएम (रिस्पाइरवल सस्पेंडेड पर्टिक्यूलर मैटर्स), सल्फर डाई ऑक्साइड, एनओएक्स आदि हानिकारक तत्वों की मात्रा घातक हो चुकी है. इन घातक तत्वों की चपेट में आकर बिल्ली-मारकुंडी, बारी, मीतापुर, डाला, पटवध, करगरा, सुकृत, खैरटिया, ओबरा, चोपन, सिंदुरिया, गोठानी, रेड़िया, अगोरी सहित अन्य क्षेत्रों के लोग टी बी (क्षय रोग) और दमा जैसे घातक बीमारियों की चपेट में आ जाते है.

पर्यावरणविद् और प्रदूषण विशेषज्ञों की मानें तो खनन क्षेत्र के वातावरण की हवा में एसपीएम(पत्थर क्रश करते समय निकलने वाले धूल के कण) की औसत मात्रा 2000 मिलीग्राम प्रति क्यूबिक नार्मल मीटर(एमजीपीसीएनएम) है जो शुद्ध हवा में एसपीएम की 600 एमजीपीसीएनएम से कहीं ज़्यादा है.

आरएसपीएम (हवा में घुले पत्थर के कण जो नंगी आंखो से नहीं देखे जा सकते हैं) की मात्रा भी औसतन 1000 एमजीपीसीएनएम है, जबकि शुद्ध हवा में इसकी मात्रा एसपीएम की निर्धारित मात्रा से कहीं कम है . आरएसपीएम बहुत ही घातक तत्व है जो सांस के रास्ते फेफड़ों के अंदर पहुंच जाता है, धीरे-धीरे ये फेफड़े को छलनी करने लगता है और लोग टी बी, दमा और कैंसर आदि घातक रोगों के शिकार हो जाते हैं. आरएसपीएम की भयावहता का अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि सोनभद्र के खनन क्षेत्र में टीबी रोगियों की संख्या अन्य क्षेत्रों से अधिक है. स्वास्थ्य विभाग के एक कर्मचारी की बातों पर यक़ीन करें तो संयुक्त जिला चिकित्सालय में खनन क्षेत्र से हर माह 20 से 25 व्यक्ति टी बी का इलाज कराने आते हैं. जिला क्षय रोग कार्यालय की डॉट्स यूनिट के आंकड़ों पर ग़ौर करे तो सोनभद्र में टी बी रोगियों की संख्या बढ़ती जा रही है. वित्तीय वर्ष 2007-08 के दौरान 6751 संदिग्ध रोगियों ने डॉट्स सेंटर में अपने बल्गम की जांच कराई. इनमें 1264 रोगी क्षय रोग के रोगी मिले. वर्ष 2008-09 में 7238 संदिग्ध रोगियों ने अपने बल्गम की जांच कराई. इनमें 1462 लोग टी बी के मरीज मिले. एक साल में क़रीब 200 रोगियों का इज़ाफ़ा हो गया. चालू वित्त वर्ष के जुलाई माह तक 3292 संदिग्ध रोगियों के बल्गम की जांच की गई. इनमें 700 लोग टी बी के मरीज मिले. क्षयरोग के इन मरीजों में तीन-चौथाई अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के हैं

ज़हर की भयावहता को देखते हुए पर्यावरणविद्, कानूनविद् एवं मैग्सेस पुरस्कार विजेता एम सी मेहता ने माननीय उच्चतम न्यायालय में 1990 के दशक के मध्य में याचिका दाख़िल की. सुप्रीम कोर्ट ने एम सी मेहता की याचिका को सुनवाई के लिए, 1985 में रूरल लिटिगेशन एण्ड एंटाइटलमेंट केंद्र, देहरादून की दाख़िल जनहित याचिका संख्या-3727/85 के साथ संयुक्त कर दिया जो अभी भी विचाराधीन है . सुप्रीम कोर्ट ने पत्थर खनन संबंधी जनहित याचिका संख्या-3727/85 की सुनवाई करते हुए एक केन्द्रीय एम्पावरमेंट कमेटी का गठन किया जो पत्थर खनन से होने वाले प्रदूषण पर अपनी रिपोर्ट सुप्रीम कोर्ट को सौंपती है . पत्थर खनन से पर्यावरण को होने वाली हानि की गंभीरता पर सुप्रीम कोर्ट के तेवर को देखते हुए केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने इ0प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को एयर (प्रिवेशन एण्ड कंट्रोल आफ पाल्यूशन) एक्ट-1981 के खण्ड 18(1)(6) के तहत सिंगरौली, सोनभद्र में 16 अप्रैल, 1996, 14 अगस्त, 1996, 16 सितम्बर 1997, 14 जनवरी 1998, 6 सितम्बर 1999, 31 मई 2000 को पत्र लिखकर पर्यावरण संरक्षण अधिनियम के नियमों का उल्लंघन करने वाले क्रशर प्लांटों को बंद करने का आदेश दिया, लेकिन कोई कार्यवाही नहीं हुई. वर्ष 2000 की 25 जुलाई को केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अध्यक्ष दिलीप बिस्वास ने उत्तर प्रदेश प्रदूषण कंट्रोल बोर्ड के अध्यक्ष को पत्रांक - जेड ओ के/टेक/एस ए पी/831 के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन करने वाले क्रशर प्लांटों को बंद करने का निर्देश दिया. केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी) के पत्र का संज्ञान लेते हुए उ प्र प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (यूपीपीसीबी) ने 3 मार्च, 2000 को सोनभद्र के जिलाधिकारी को पत्र संख्या-जीओ 8954/सी-2/डब्ल्यू पी-3727/85/68/2000 के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण अधिनियम-1980 के प्रावधानों का उल्लंघन करने वाले 42 क्रशर प्लांटों को बंद करने का निर्देश दिया, फिर भी नतीजा ढाक के तीन पात ही रहा.

यूपीपीसीबी के इसी पत्र का संज्ञान लेते हुए पर्यावरण विभाग, उत्तर प्रदेश शासन की एक टीम ने सोनभद्र के खनन क्षेत्र का दौरा किया. टीम ने पाया कि यूपीपीसीबी के पत्र पर घातक क्रशर प्लांटों के ख़िलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई है. सभी घातक 42 क्रशर प्लांट धड़ल्ले से संचालित हो रहे हैं, तब पर्यावरण विभाग, उत्तर प्रदेश शासन के अनु सचिव एच एन पी कुशवाहा ने 5 अगस्त, 2000 को पत्र संख्या-3604/55-पर्या0-2000 के माध्यम से यूपीपीसीबी द्वारा घोषित 42 घातक क्रशर प्लांटों को बंद करने का निर्देश दिया. इसके बावजूद ज़िला प्रशासन द्वारा कोई क़ानूनी कार्रवाई नहीं की गई. यूपीपीसीबी द्वारा घातक घोषित सभी 42 क्रशर प्लांट संचालित होते रहे. इनमें से कुछ क्रशर प्लांटों के संचालकों ने काग़ज़ी कार्यवाही पूरी करा ली है, लेकिन अभी भी 24 क्रशर प्लांट यूपीपीसीबी की ओर से डिफॉल्टर घोषित है. यदि पर्यावरण संरक्षण अधिनियम के प्रावधानों की बात करें तो कोई भी क्रशर प्लांट मानकों पर खरा नहीं उतरता. यूपीपीसीबी की क्षेत्रीय इकाई पर की कार्यवाइयों पर ग़ौर करें तो बिल्ली-मारकुंडी स्थित आशीष इंटरप्राइजेज, पटेल नगर, डाला स्थित शंकर स्टोन वर्क्स, चोपन के वर्दिया स्थित नारायण स्टोन वर्क्स और डाला के बारी स्थित निशाद स्टोन क्रशिंग कंपनी के बंदीकरण की संस्तुति 10 जुलाई, 2009 को की गई है, लेकिन ये सभी क्रशर प्लांट धड़ल्ले से संचालित हो रहे हैं. साथ ही, क्षेत्रीय कार्यालय द्वारा सात क्रशर प्लांटों को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया है. इनमें शंकर स्टोन वर्क्स, पटेल नगर, डाला, सुनील स्टोन इंडस्ट्रीज, बारी, डाला, मेसर्स सिहोरी ग्रामोद्योग संस्थान, बारी, डाला, मेसर्स विजय कन्स्ट्रक्शन, बिल्ली, ओबरा, मेसर्स काशी ग्रामोद्योग सेवा समिति इत्यादि शामिल है. पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से हानिकारक होने के बावजूद यूपीपीसीबी के प्रभारी क्षेत्रीय अधिकारी कालिका सिंह ने 119 क्रशर प्लांटों को सहमति आदेश पत्र निर्गत कर दिया और क़रीब 200 क्रशर प्लांटों को सहमति आदेश पत्र जारी करने की क़वायद में जुट गए हैं. पूर्व की बातों पर ग़ौर करें तो यूपीपीसीबी की गतिविधियां काफी संदेहात्मक है.

उत्तर प्रदेश में 2007 में बसपा की सरकार सत्ता में आई और बाबू सिंह कुशवाहा को खनन मंत्री बनाया गया. इस दौरान सोनभद्र, मिर्जापुर के खनन क्षेत्रों में अवैध खनन का काम अपने चरम पर था. पूर्वांचल के माफ़िया और इनके गुर्गों का क़ब्ज़ा सोनभद्र के खनन क्षेत्रों पर हो गया. मुख्यमंत्री मायावती के नज़दीकी सतीश चंद्र मिश्र के भाई अनिल मिश्र को यूपीपीसीबी का अध्यक्ष बनाया गया. 2008 में यूपीपीसीबी का क्षेत्रीय कार्यालय राबर्ट्सगंज नगर में इस आधार पर खोल दिया गया कि पत्थर खनन सहित अन्य पदार्थों के खनन से होने वाले प्रदूषण और पर्यावरण हानि को रोकने में मदद मिलेगी. लेकिन यहां सब उल्टा ही हो रहा है. क्षेत्रीय कार्यालय खुलने की शुरुआत में यूपीपीसीबी की निगरानी टीम ने खनन क्षेत्रों में जमकर छापेमारी की और अवैध क्रशर प्लांटों को सीज कर दिया. इससे खनन माफ़ियाओं में हड़कंप मच गया. क्रशर प्लांट के संचालकों ने मंत्रियों और आला अधिकारियों से संपर्क साधना शुरू किया और क्षेत्रीय निगरानी टीम पर दबाव डलवाया. सूत्रों की मानें तो बोर्ड के क्षेत्रीय अधिकारी कालिका सिंह द्वारा निगरानी टीम को खनन क्षेत्रों में छापा मारने से रोक दिया गया. साथ ही पूर्व में सीज किए गए क्रशर प्लांटों को मौखिक रूप से संचालित करने का आदेश दे दिया गया. सुकृत खनन क्षेत्र में सीज किए गये छह क्रशर प्लांट इसका उदाहरण है जो अभी भी संचालित हो रहे है.

119 क्रशर प्लांटों को सहमति आदेश पत्र जारी करने के बाबत यूपीपीसीबी के प्रभारी क्षेत्रीय अधिकारी कालिका सिंह कहते है कि सभी इकाइयां ज़िला उद्योग केंद्र में वर्ष 2000 के पहले से पंजीकृत है. ये सभी ख़राब पड़ी थीं. संचालकों ने मशीनों के कलपुर्जे ठीक कराकर सहमति आदेश पत्र के लिए आवेदन किया. इस आधार पर इन इकाइयों को सहमति आदेश पत्र जारी किया गया है. अगर कालिका सिंह की इस बात पर ग़ौर करें तो एक बात खटकती है. सहमति आदेश पत्र प्राप्त करने वाली सभी इकाइयां अचानक कहां से आ गई. इन इकाइयों को तीन माह के दौरान सहमति पत्र जारी किए गए हैं. इतने कम समय में प्रभारी क्षेत्रीय अधिकारी द्वारा कैसे सभी 119 इकाइयों का निरीक्षण कर लिया गया? ये ऐसे कुछ प्रश्न हैं जो कालिका सिंह के बयान को संदेहात्मक बनाते है . इधर जिला उद्योग केंद्र के सहायक प्रबंधक ए के सिंह ने कहा कि नए प्रारूप के तहत हम नई इकाइयों पर पंजीकरण के लिए दबाव नहीं डाल सकते है. इन्होंने यह भी कहा कि वर्ष 2000 के बाद किसी भी नए क्रशर प्लांट को स्थापित करने की अनुमति नहीं दी गई है.

ज़ाहिर है, कैमूर की वादियों में बढ़ते ज़हर को रोकने के लिए केंद्र अथवा राज्य सरकार द्वारा कोई कारगर क़दम नहीं उठाया गया तो क्षेत्रवासियों के अंदर बढ़ रहा विरोध लोकतंत्र के लिए ख़तरा साबित हो सकता है .

feedback@chauthiduniya.com

राज कुमार शर्मा

उत्तराखंड में इंसानी लालच से वन्यजीव बेघर

उत्तराखंड के गठन के बाद वन क्षेत्रों में तेज़ी से हो रहे, मानवीय दख़ल ने वन्य जीवों के गुस्से को बेक़ाबू कर दिया है. राज्य के गठन के बाद, जिस तरह देवभूमि के जंगलों में अवैध मानवीय हरक़त बढ़ी है, इससे यहां के वन्य जीव भड़क उठे हैं. ये ख़तरनाक और हिंसक हो चुके हैं. पिछले नौ वर्षों में इन वन्यजीवों ने जंगल की सीमा लांघ कर इंसानों पर हमले किए. वैसे, सच पूछिए तो वह इंसान ही थे, जिन्होंने जंगल का अतिक्रमण किया. अपने लालच की वजह से जानवरों की रहने की जगह छीन ली. दोषी तो इंसान ही है, तभी तो आज जंगली जानवर शहरों में घुस हमलावर बन रहे हैं. इन हमलों में लगभग तीन सौ लोगों को अपनी ज़िंदगी से हाथ धोना पड़ा और लगभग आठ सौ लोग आज भी अपाहिज की ज़िंदगी जीने को मजबूर हैं. दुखद तो यह कि सब कुछ सूबे के राजनेताओं और भ्रष्ट वन कर्मियों के गठजोड़ से हो रहा है.

उत्तराखंड राज्य का कुल क्षेत्रफल 35,394 वर्ग मीटर है, जिसमें 35,394 वर्ग मीटर वन क्षेत्र है. यहां के जंगलों में कस्तूरी मृग, काला मृग, शेर, बाघ, चीता, तेंदुआ, हाथी, भालू जंगली सूअर सहित पक्षियों की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं. वनों की अंधाधुंध कटाई, वन कर्मियों द्वारा अपने काग़ज़ी वृक्षारोपण के आंकड़ों को मिटाने के लिए वनों को आग के हवाले करने की हवस ने वन्यजीवों को हमलावर बना दिया है. लोगों की लापरवाही मसलन, बीड़ी, माचिस की तीली से निकली चिंगारी भी वनों को शोला बन कर निगल रही हैं.

उत्तराखंड के वन्यजीवों में तेंदुए सबसे ख़ूंखार हो चुके हैं. राज्य के वन विभाग के सरकारी आंकड़ों के मुताबिक़, नवंबर 2000 से 31 जुलाई 2009 तक इन वन्यजीवों ने 286 लोगों को अपना निशाना बनाया और 795 लोग इनके हमले से बुरी तरह घायल हो चुके हैं. सबसे अधिक 189 लोगों को तेंदुए ने अपना शिकार बनाया, जबकि हाथियों ने दर्ज़नों लोगों को कुचल दिया. जंगली भालुओं ने भी इन नौ वर्षों में 12 लोगों की जान ले ली, तो बाघ ने 9 लोगों को लहूलुहान कर दिया और दो लोगों को जंगली सूअर का शिकार होना पड़ा. गढ़वाल एवं लैंसडाइन इलाक़ों में जंगली जानवरों के आतंक की वजह से ही यहां लोगों में ख़ौफ़ का माहौल है. और हरिद्वार, उत्तरी पिथौरागढ़, राजाजी पार्क, केदारनाथ, नरेंद्र नगर, टिहरी, बदरीनाथ और उत्तरकाशी क्षेत्रों को संवेदनशील घोषित किया जा चुका है. आज देवभूमि का हर नागरिक सूबे और देश की सरकार से अपनी सुरक्षा की आस लिए बस एक ही सवाल करता है कि आख़िर क्यों गुस्से में हमसे है वन्य जीव? इसका सीधा जवाब है, इसे (वन्यजीव) अपने वन की सत्ता में मानवीय दख़ल कतई पसंद नहीं. इसका एकमात्र समाधान है कि जगंलों को कटाई से बचाया जाए, जिससे जंगली जीवों को किसी तरह का ख़तरा न हो. साथ ही सरकार जंगलों की रक्षा के लिए कड़े क़ानून बनाए और इस पर सख्ती से अमल करें. सूबे का वन्यजीव प्रभाग लगातार वन्यजीवों की मौत, हत्या और इसके हिंसक होने की वजह से ख़ासा चिंतित है. राज्य वन्यजीव अधिकारी के एल आर्य के मुताबिक़ इस नौ साल की अवधि में 457 तेंदुओं की मौत हो चुकी है. इसमें 281 की मौत प्राकृतिक वजहों से, तो 132 की मौत विभिन्न हादसों से हुई. शिकारियों के हाथों 44 को अपनी जान गंवानी पड़ी. वहीं 172 हाथी और 42 बाघों को भी मौत का शिकार होना पड़ा. आर्य का मानना है कि वन्यजीवों के इस आतंक से बचने के लिए मानव को वन क्षेत्रों में अतिक्रमण बंद करना चाहिए.

सच्चाई यह है कि जगंल माफ़ियाओं और शिकारियों की साठगांठ का ही नतीजा है कि हर साल हज़ारों वन्य-जीव शिकारियों के हत्थे चढ़ जाते हैं. वहीं लाखों पेड़ों का सफाया भी इन्हीं माफ़ियाओं की वजह से होता है. इस तरह जगंलों की बहुमूल्य संपदा माफ़ियाओं के अवैध धंधे का अवैध साधन बना हुआ है. राज्य के पर्यावरणविद् सुंदर लाल बहुगुणा का सुझाव है कि पूरे हिमालयी क्षेत्रों में बड़ी पत्तियों वाले वृक्षों को लगाया जाए, वन कर्मी ईमानदारी से वृक्षारोपण कार्यक्रम चलाएं और वनों में आग लगने की जवाबदेही सरकार द्वारा तय की जाए. डा.जीडी अग्रवाल (पर्यावरणविद्) का मानना है कि गंगा को अविरल न बहने देना ही इस सारे मसले की जड़ है. पूरे उत्तराखंड में क़रीब चौदह हज़ार गांव इन वन्य जीवों के जद में आज भी हैं. पर्यावरण विशेषज्ञ विजयशंकर चतुर्वेदी के मुताबिक़ उत्तराखंड की महान जनता को देवभूमि की गरिमा को फिर से क़ायम करने के लिए वन एवं वन्य जीवों की रक्षा करनी चाहिए. प्रत्येक को वन एवं वन्यजीवों की रक्षा के लिए अपनी भूमिका तय करनी होगी. इनका मानना है कि वन को मानव जीवन के लिए पूरी तरह संरक्षित किया जाना चाहिए. सबसे बड़ी बात कि उत्तराखंड के वन और वन्यजीव सिर्फ़ उत्तराखंड के ही नहीं बल्कि विश्व मानवता के लिए भी एक धरोहर हैं, जिसे सहेजने की ज़रूरत है.

feedback@chauthiduniya.com

एचआईवी : ग़लत जांच और बीमारी का बोझ

रूपा चिनॉय

मुंबई के एक अंग्रेजी अख़बार में विशेष स्वास्थ्य संवाददाता होने की वजह से पूरे देश से एचआईवी-एड्स के मरीज अक्सर अपनी कहानी बताने मेरे ऑफिस मुझ से मिलने आते थे. यह उन वर्षों की बात है जब इस रोग का ख़ौफ लोगों के अंदर घर कर चुका था. लोगों ने तब सामूहिक एचआईवी परीक्षण को काफी प्रोत्साहित किया था. हालांकि तब मरीजों ने बताया कि उनमें एड्स का लक्षण नहीं पाया गया था.

मुश्ताक (बदला हुआ नाम) का अनुभव भी उन मरीजों के जैसा ही था, जिससे मैं मिली थी. वह खाड़ी देशों में काम करने के लिए अनुमति मांग रहा था, तभी एक अनिवार्य परीक्षण के दौरान उसमें एचआईवी पॉजिटिव के लक्षण पाए गए. हालांकि बाद में एक प्रतिष्ठित निजी अस्पताल द्वारा किए गए परीक्षण में यह ग़लत साबित हुआ. हालांकि, इसके बावजूद वह खाड़ी के मुल्क में नहीं जा सका. इतना ही नहीं, अब तो वह जहां भी जाता है, परीक्षण का दाग़ उसके साथ ही जाता है. ऐसे ही एक अन्य मामले में एक निजी अस्पताल ने दो गर्भवती महिलाओं में एचआईवी पॉजिटिव के लक्षण पाए जाने से उसे अपने यहां दाख़िल करने से मना कर दिया. बाद में उनके बच्चों को एड्स की दवा एजेडटी दे दी गई, जिस पर काफी विवादित रहा. हालांकि बाद में हुए परीक्षण में दोनों ही एचआईवी निगेटिव पाए गए.

वैसे, जो एचआईवी-एड्स मरीजों से मिलते हैं वे ऐसे कई मामलों के बारे में जानते हैं जिन्होंने दोबारा किसी प्रतिष्ठित अस्पताल में परीक्षण कराया, और परिणाम विरोधाभासी रहे. एक मामले में तो हद ही हो गई. अस्पताल में गर्भवती महिला में एचआईवी पॉजिटिव के लक्षण पाए गए, लेकिन बच्चा होने के बाद निगेटिव पाया गया. ऐसा क्यों हुआ, इसका कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया. असुरक्षित यौन संबंध के बावजूद जहां एक पार्टनर में एचआईवी पॉजिटिव के लक्षण पाए जाते हैं, वहीं दूसरे पार्टनर में इस तरह के कोई लक्षण नहीं मिलते. मुंबई के एक सरकारी अस्पताल जे जे हॉस्पिटल ने ऐसे मामलों का एक दस्तावेज तैयार किया है, जिनमें ऐसे मरीजों को चिह्नित किया है जिनमें अन्य लक्षण भी देखने को मिल रहे हैं, जैसे इम्यून सप्रेशन, ल्यूमफेटिक कैंसर और स्किन लेजंस.

ऐसे मामलों में ग़लत परिणामों की तो अभी शुरुआत हुई है. ऐसी घटनाओं में बढ़ोतरी होने के बावजूद भी यह अज्ञात सा ही है. वजह यह कि पूरे देश में एड्स लॉबी और स्वास्थ्य अधिकारियों के पास ऐसे मामलों पर निगरानी रखने या ऐसा क्यों होता है यह जानने के लिए कोई व्यवस्था ही नहीं है. हालांकि ये मामले बताते हैं कि आख़िर कैसे उनका एचआईवी परीक्षण किया गया कि एड्स के लक्षण नहीं के बावजूद उनमें इसका लक्षण मिला था. एड्स की ख़ौफ से उनकी ज़िंदगी तबाह हो सकती है. वास्तव में कई मरीज तो एचआईवी पॉजिटिव परिणाम को मौत के रूप में क़बूलते हैं.

विश्व स्वास्थ्य संगठन के निर्देश के अनुसार दोबरा एचाआईवी टेस्ट करने के लिए ग़रीबों में सामर्थ्य नहीं होता. इसकी पुष्टि के लिए कम से कम तीन टेस्ट की ज़रूरत पड़ती है. इससे यह स्पष्ट होता है कि सिर्फ़ एक टेस्ट एचआईवी पॉजिटिव की पुष्टि के लिए काफी नहीं है. हालांकि ग़रीबों के लिए सिर्फ़ एक टेस्ट है, भारत और कई विकासशील देशों में इस तरह का मानक अपनाया जा रहा है. मुंबई में अधिकारियों ने स्वीकारा है कि इसमें काफी समस्याएं हैं. मुंबई एड्स सोसाइटी के एक सीनियर अधिकारी ने इसके लिए शहर के कई निजी लैबॉरेटरीज को उत्तरदायी ठहराया कि तकनीक और विशेषज्ञों के अभाव में टेस्ट कर इसकी पुष्टि कर रहे हैं. महानगरों के अलावा, ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति काफी ख़राब है. ज़्यादातर विकाशील देशों में इसके सही परीक्षण के लिए न तो प्रशिक्षित माइक्रोबाइलॉजिस्ट है और न ही बुनियादी ढांचा. पेशेवर लोगों और तकनीक के अभाव में एआरवी (एंटी रिट्रोविरल) इलाज के दौरान मरीज पर निगरानी रखने के लिए प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है. एचआईवी टेस्ट के महंगे होने की वजह से मुंबई के सरकारी अस्पतालों में टेस्ट के लिए ज़ोर नहीं दिया जाता है. वे क्लिनिकल सिम्पटम्स पर ज़ोर देते हैं जैसे डायरिया, बुख़ार, वजन का कम होना और टीबी- यह एड्स का सामान्य लक्षण माना जाता है. यह संदेहास्पद है और इसकी पुष्टि के लिए एक और परीक्षण की आवश्यकता होती है. हालांकि मुंबई के निजी अस्पतालों में मरीजों पर नियमित परीक्षण के लिए ज़ोर दिया जाता है. वैसे कई बार मुंबई के एक एनजीओ फ्लाई बाई नाइट ने सामूहिक एचआईवी टेस्ट का संचालन किया है.

टेस्टिंग किट बनाने वालों ने भी यह स्वीकार किया है कि एचआईवी के टेस्ट पर विश्वास नहीं किया जा सकता है. एब्बॉट लैबॉरेटरिज ने कहा कि उनका भी उत्पाद एचआईवी एंटी बॉडीज के लिए कारगर नहीं है. इसलिए विकाशील देशों में -ग़रीब और कुपोषित हमेशा इंफेक्शन और बीमारी से ग्रसित रहते हैं- एचआईवी टेस्ट करना इसलिए ज़रूरी है. क्योंकि एंटीजन संक्रमण से प्रतिक्रिया करता है, जो उसके शरीर में मौजूद रहता है.

विश्व स्वास्थ्य संगठन के निर्देश के अनुसार दोबरा एचाआईवी टेस्ट करने के लिए ग़रीबों में सामर्थ्य नहीं होता. इसकी पुष्टि के लिए कम से कम तीन टेस्ट की ज़रूरत पड़ती है. इससे यह स्पष्ट होता है कि सिर्फ़ एक टेस्ट एचआईवी पॉजिटिव की पुष्टि के लिए काफी नहीं है.

परीक्षणों की गुणवता:- वैज्ञानिकों ने कहा कि एचआईवी पॉजिटिव टेस्ट का नतीजा 70 विभिन्न परिस्थितियों में ग़लत आ सकता है. इसमें मलेरिया, टीबी, इंफ्लूएंजा और यहां तक कि प्रेगनेंसी भी शामिल है. इस तरह से विकासशील देशों में ज़मीनी हक़ीक़त यह है कि सिर्फ़ एक टेस्ट कर बीमार लैबॉरेटरीज और अप्रशिक्षित टेक्निशियंस मौत का फरमान जारी कर देते हैं. ग़रीब तबक़े के मरीज, जो कुपोषित हैं और जिनकी सेहत काफी ख़राब है, उन पर किए गए परीक्षण के नतीजे भ्रामक हो सकते हैं.

कई प्रतिष्ठित पश्चिमी वैज्ञानिक सवाल उठ रहे हैं कि सेक्सुअल ट्रांसमिशन एड्स का एक मात्र कारण है, और संभावना है कि वायरस ही प्रतिरक्षा प्रणाली को दबा सकता है. इन वैज्ञानिकों के मुताबिक एड्स का असली कारण विषाक्त पदार्थ का हमला और शरीर के प्रतिरक्षा प्रणाली में कमी है. इन कारकों में एंटीबॉयोटिक का दुरुपयोग, मादक पदार्थों का सेवन और कुपोषण संबंधी तनाव शामिल हैं. ये सभी भारत में स्वास्थ्य संबंधी प्रमुख समस्याएं हैं. भारत और बाहर के साक्ष्य से पता चलता है कि प्रतिरक्षा प्रणाली में जो क्षति हुई उसे बिना दवा से भी ठीक किया जा सकता है.

एशिया और अफ्रीका में टीबी काफी तेजी से फैल रहा है. यहां के स्वस्थ लोगों को अगर टीबी हो और अगर परीक्षण कराया जाए, तो एचआईवी पॉजिटिव की रिपोर्ट आ सकती है. एड्स के लिए काम करने वालों का भी यही विचार है. स्वास्थ्य विशेषज्ञों का कहना है कि अफ्रीका में शरीर में पोषक तत्वों की कमी के कारण यह होता है, वह पीढ़ी दर पीढ़ी प्रतिरक्षा प्रणाली को नष्ट कर देता है. सब-सहारन अफ्रीका ग़रीबी, कुपोषण और नागरिक युद्ध में फंसता जा रहा है. वह इबोला और ल्हासा बुख़ार की गिरफ़्त में भी फंसता जा रहा है. दशकों से यहां के लोगों को महामारी का सामना करना पड़ा है. अफ्रीका का स्ट्रक्चरल एडजस्टमेंट प्रोग्राम (एसएपी) स्थानीय खाद्य सुरक्षा की क्षति का नेतृत्व करता है, जब अंतरराष्ट्रीय दाता एजेंसियां इन देशों को कृषि से कॉफी की खेती के लिए बाध्य करे. तब उसकी सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होगी और इससे उसे एड्स से लड़ने में मदद मिलेगी. भारत ने 1990 के दशक में एसएपी को अपनाया था. इसका नतीजा यह हुआ कि देश आर्थिक विकास के पथ पर अग्रसर हो रहा है और जनसंख्या के एक बड़े हिस्सों को ग़रीबी के गर्त से निकाला गया है. कृषि और राष्ट्रीय संप्रभुता के निर्धारण के लिए उसके विकास नीतियां, स्थानीय खाद्य पदार्थ पर स्वयं निर्भरता आदि मसले दांव पर है. इस व्यापक तस्वीर की ओर अब अवश्य ध्यान देना होगा.

feedback@chauthiduniya.com

हर इंसान में ही है भगवान

हर इंसान सुख, शांति, प्रेम, आनंद और शक्ति की तलाश में रहता है. ज्ञान, योग, धारणा और सेवा ही वे चार मूल तत्व हैं, जिसके माध्यम से व्यक्ति का जीवन संतुष्ट हो सकता है. प्रजापिता ब्रह्म कुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की ओर से प्रभु के भक्तों के लिए अध्यात्मिक और आत्मिक संतुष्टि का कार्य किया जाता है. इस नेक कार्य के लिए प्रतिवर्ष समाज में हुए हर स्तर के, हर व्यवसाय के लोगों के लिए जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन किया जाता हैं. इस दौरान लोगों को संस्था के साथ कुछ वक़्त बिताने का अवसर मिलता है जिसमें वे संस्था की ओर से हो रहे हर कार्यक्रम में योगी और सहयोगी बनते हैं. 11 सितंबर से 15 सितंबर तक मीडिया प्रभाग से संबंधित लोगों के लिए प्रेस वार्ता का आयोजन शांतिवन कॉम्प्लेक्स माउंट आबू में किया गया. संस्था से जुड़ी ब्रह्म कुमारी अदिति कहती हैं कि पिछले कुछ समय से मीडिया समाज का आईना बनकर उभरा है, लेकिन इस विकास में वे अपने मूल कर्म सेवा को भूलते जा रहे हैं. इस आयोजन के दौरान मीडिया से जुड़े लोगों को समाज में कुछ सकारात्मक कार्य करने की प्रेरणा दी गई. उनका मानना है कि मन की तृप्ति पाने के लिए इस क्षेत्र से जुड़े लोग भी भटकते जा रहे हैं और इसका निवारण बेहद ज़रूरी है जिससे समाज में न्याय हो सके. यह कार्य परमात्मा के साथ संवाद बनाए जाने से संभव हो सकता है. इस शिविर में कर्मयोग, राजयोग, सहजयोग और अन्य क्रियाकलापों से मन परमात्मा से जुड़ता है और व्यक्ति के अंदर सकारात्मक उर्जा का संचार होता है. जब यह उर्जा व्यक्ति के शरीर में आती है तब वह परमपिता से अच्छी तरह संपर्क स्थापित कर पाता है. पांच दिनों के इस कार्यक्रम में पहला दिन आराम करने और तरोताज़ा होने के लिए खाली छोड़ दिया गया. अगले दिन से शिविर में प्रतिदिन सुबह के कुछ घंटे राजयोग में बिताने के बाद व्यक्ति अपने आप से परिचित हो जाता है.

राजयोग दरअसल स्वयं का परिचय जानने की विद्या है. इस विद्या में अपनी आत्मा को ख़ुद की देह से अलग कर आत्मानिष्ट करते हैं. स्वयं के परिचय के साथ सृष्टि का राज़, आत्मा का उद्गम और इसे सुकून पहुंचाने की विद्याओं के बारे में ज्ञान दिया जाता है. दूसरे दिन नियमित कार्यक्रमों की शुरुआत समाज में शांति और विकास के लिए अध्यात्म को बढ़ावा देने में मीडिया की भूमिका पर बहस व ज्ञान सभा से हुई. उसके बाद शांति का संदेश देने में मीडिया की भूमिका पर संवाद कार्यक्रम रखा गया. उसके बाद तनाव मुक्त जीवन जीने पर गुरुओं द्वारा प्रवचन दिया गया. इसके साथ ही परमपिता परमात्मा के अस्तित्व और जीवन से इसके जुड़ाव पर भी चर्चा की गई. तीसरे दिन की शुरुआत राजयोग से होने के बाद प्रेस स्वतंत्रता और उसकी नैतिक ज़िम्मेदारियों पर परिचर्चा हुई. उसके बाद मीडिया के निजी व्यवस्थापन में अध्यात्म की भूमिका पर भी चर्चा हुई. साथ ही सकारात्मक और अग्रसक्रिय मीडिया समाज को ज़रूरत पर पावरप्वाइंट प्रदर्शन द्वारा इससे संबंधित लोगों को जागरूकता दी गई. इसे आगे बढ़ाते हुए राजयोग ध्यान सत्र में अपने अंदर की शक्ति अनुभव करने की विद्या प्रदान की गई. उसके बाद आशीर्वादात्मक दौर में जीवन को उत्तम तरीक़े से जीने के लिए अध्यात्म की भूमिका पर चर्चा की गई. अगले दिन राजयोग के बाद माउंट आबू की वादियों में भ्रमण और प्राकृतिक नजारों के ज़रिए परमपिता के साथ जुड़ाव को अहसास करने का अवसर दिया गया. वहां से लौटने पर बैठक का आयोजन हुआ जिसमें भ्रमण के अनुभवों की व्याख्या की गई. आख़िरी दिन की शुरुआत राजयोग से होकर कर्मयोग की प्रेरणा देते हुए अपने जीवन को कमल की तरह बनाने का ज्ञान मीडिया से संबंधित लोगों को दिया गया. सहज संयोग से परमपिता परमेश्वर से जुड़ने पर व्यक्ति ख़ुद में आत्मा की पहचान कर अपने आप को तो देह से अलग करता ही है, साथ ही सामने वाले को भी आत्मा मानने लगते हैं. दरअसल परमात्मा से ख़ुद को जोड़ना भी योग का ही हिस्सा है जो चार चरणों में पूरा होता है. ज्ञान, योग, धारणा और सेवा. ज्ञान से तात्पर्य है आत्मा से सम्मुख होना, योग के द्वारा परमपिता परमात्मा से जुड़ाव, धारणा में सकारात्मक विचारों को सम्मलित करना और सेवा जिसमें व्यक्ति के कार्यों का प्रारूप तय होता है. जिस चीज की तलाश व्यक्ति वस्तु, संबंध और अन्य चीजों में करता है वह परमात्मा से संबंध बनाने पर स्वत: मिल जाता है. ये सभी भाव जैसे प्रेम, ख़ुशी, सुख इत्यादि सब परमात्मा की अनुभूति से ही तृप्त हो जाते हैं.

साधारण वेशभूषा और उच्च विचार हर व्यक्ति में होने चाहिए जिससे वह दूसरों के सामने उदाहरण बन सके. इस संस्थान में आनेवाला व्यक्ति मेहमान नहीं है, यहां आनेवाले हर आत्मा को सुख, शांति, प्रेम, आनंद और शक्ति की सच्ची अनुभूति होती है. यह संस्थान परमात्मा की ईश्वरीय विश्वविद्यालय है, यहां गुरु प्रणाली और प्रवचन नहीं होते हैं. व्यक्ति इस शिविर में आकर केवल यौगिक विद्याएं ही नहीं सीखता तरो-ताज़ा, खुशगवार और तनावमुक्त भी होता है.

फोटो- *प्रभात पाण्डेय*

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

इरशाद अहमद

नरेगा: गांवों के लिए स्थायी आजीविका का दूसरा नाम

भारत जैसे बड़े और विशाल जनसंख्या वाले देश की समस्या और समाधान भी पूरी दुनिया से अलग और अनूठे हैं. वैसे तो भारत की अपनी कई समस्याएं हैं, लेकिन लगभग सवा अरब आबादी वाले देश में बेरोज़गारी एक बहुत बड़ी समस्या है. बेरोज़गारी के दूसरे मायने हैं ग़रीबी. यह बेरोज़गारी ग्रामीण इलाक़ों में तो ख़ास तौर पर अधिक है. बेरोज़गारी भी कई तरह की. छुपी बेरोज़गारी से लेकर मौसमी बेरोज़गारी तक. कृषि का हमारे जीडीपी में योगदान जैसे-जैसे कम हो रहा है और सेवाक्षेत्र की परिधि बढ़ रही है, वैसे-वैसे खेती की समस्याएं भी बढ़ती जा रही हैं. ग्रामीण इलाक़ों में दूसरा कोई विकल्प न होने की वजह से अधिकतर लोग खेती पर ही निर्भर है. उससे उत्पादकता तो बढ़ती नहीं है, ग़रीबी का आंकड़ा भी बढ़ता ही जाता है. ज़रा इस आंकड़े पर ग़ौर कीजिए.

वर्ष 2004-05 में ग़रीबी रेखा से नीचे रहने वाले भारतीयों की संख्या 27.5 फ़ीसदी थी. जबकि इस दौरान ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति आय 356.35 रुपए मासिक तो शहरी इलाक़ों में यह आंकड़ा 538.60 रुपए मासिक था. वहीं ग़रीबों की बात करें तो अभी भी 75 फ़ीसदी ग्रामीण ग़रीबों की ज़िंदगी गुजर-बसर कर रहे हैं. जिनमें अधिकांश दिहाड़ी और भूमिहीन मज़दूर हैं.

ग़रीबी और बेरोज़गारी की बात करें तो इसके समाधान के लिए विकासशील देशों में कई वर्षों से काफी महत्वपूर्ण योजनाएं चलाई जा रही हैं. ऐसी योजनाओं में सड़क निर्माण, मिट्टी का संरक्षण, सिंचाई सुविधा जैसे लोक निर्माण के कार्य आमतौर पर इन अकुशल मज़दूरों द्वारा करवाया जाता है. कृषि के न होने या बेरोज़गारी के समय में इस तरह के कार्यक्रम दिहाड़ी मजदूरों के लिए काफी अहम साबित होते हैं. ऐसी योजनाएं कई देशों में बेरोज़गारी दर कम करने में काफी सहायक साबित हुई हैं.

इन कार्यक्रमों के अनुभवों के आधार पर, भारत के ग्रामीण इलाक़ों में लोगों के जीविकोपार्जन के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना (नरेगा) लागू की गई. यह अधिनियम 7 सितम्बर 2005 को लाया गया. नरेगा की ख़ासियत है कि यह लोगों को रोज़गार का अधिकार देती है और रोज़गार उपलब्ध कराने की क़ानूनी तौर पर जवाबदेही भी सरकार पर है.

नरेगा पहला अंतरराष्ट्रीय क़ानून है, जिसके तहत रोज़गार गारंटी की अभूतपूर्व व्यवस्था है. नरेगा का मुख्य मक़सद है रोज़गार के लिए पूरक अवसर उपलब्ध कराना. विकास की गति बरक़रार रखने के लिए राष्ट्रीय संसाधनों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार मुहैया कराने के लिहाज से, नरेगा एक सहायक संसाधन है. नरेगा के तहत आने वाले कार्यक्रमों में जल संरक्षण, वृक्षारोपण, भूमि विकास आदि ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित काम हैं. अनुसूचित जाति, जनजाति, ग़रीबी रेखा के नीचे आने वाले परिवार और इंदिरा आवास योजना के तहत आने वाले वर्ग को सिंचाई सुविधा, बागवानी, वृक्षारोपण, भूमि विकास जैसी योजनाओं से संबंधित काम सौंपे जाते हैं. इस प्रक्रिया का उद्देश्य है कि इसके ज़रिए लोकतंत्र के सबसे निचले स्तर तक लाभ पहुंचाया जा सके और सरकार के कामों में पारदर्शिता और जवाबदेही तय करना.

2 फरवरी 2006 में नरेगा देश के सबसे पिछड़े 200 ज़िलों में लागू किया. जिसे 2007 में 130 और ज़िलों में जबकि 2008 में देश के सभी 604 ज़िलों में लागू कर दिया गया.

इस अधिनियम की मुख्य विशेषताएं हैं-

- ग्रामीण परिवार का कोई वयस्क सदस्य यदि अकुशल श्रम के तहत काम करने को तैयार है तो वह इसके लिए आवेदन कर सकता है.
- ऐसे परिवारों को स्थानीय ग्राम पंचायत में लिखित या मौखिक रूप से रजिस्ट्रेशन करवाना पड़ता है.
- जांच-पड़ताल के बाद ग्राम पंचायत एक जॉब कार्ड जारी करती है. नरेगा के तहत काम करने वाले इच्छुक सभी सदस्यों के फोटो जॉब कार्ड में मौजूद होते हैं और यह व्यवस्था बिल्कुल मुफ़्त है.
- जॉब कार्डधारी काम के लिए ग्राम पंचायत में आवेदन कर सकते हैं. जिसमें काम के लिए कम से कम 14 दिनों के लिए आवेदन किया जाना चाहिए.
- इसके बाद ग्राम पंचायत 15 दिनों के लिए रोज़गार उपलब्ध कराने संबंधित रसीद जारी करती है, इस आधार पर ग्रामीण को निश्चित रूप से काम दिया जाता है.
- रोज़गार के लिए आवेदन के बाद 15 दिनों के अंदर उसे काम दे दिया जाता है.
- यदि रोज़गार 15 दिनों के भीतर नहीं दिया जाता है तो उसके बदले नकद भत्ता देने की व्यवस्था है. भत्ता देने की ज़िम्मेदारी राज्य सरकारों की है.
- इस योजना के तहत कम से कम एक तिहाई महिलाओं को काम दिए जाने की व्यवस्था है.
- मज़दूरी का भुगतान राज्य में कृषि मज़दूरों के लिए निर्धारित न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम 1948 के तहत की जाती है, जबतक कि केंद्र सरकार कोई दूसरा अधिनियम नहीं लाती. लेकिन किसी भी हालत में यह 60 रुपए से कम नहीं होना चाहिए.
- भुगतान बैंक खातों के ज़रिए होता है.
- योजनाओं को बनाने और लागू करने में पंचायत राज संस्थाओं की मुख्य भूमिका है.
- हर ज़िले को अपनी परियोजना ख़ुद बनानी है. निर्धारित कार्यों से ही रोज़गार की सुविधा उपलब्ध कराई जाएगी.

ग़रीबी और बेरोज़गारी की बात करें तो इसके समाधान के लिए विकासशील देशों में कई वर्षों से काफी महत्वपूर्ण योजनाएं चलाई जा रही हैं. ऐसी योजनाओं में सड़क निर्माण, मिट्टी का संरक्षण, सिंचाई सुविधा जैसे लोक निर्माण के कार्य आमतौर पर इन अकुशल मज़दूरों द्वारा करवाया जाता है.

केंद्र सरकार प्रायोजित नरेगा के तहत आने वाले रोज़गार कार्यक्रम

- रूरल मैनपावर (आरएमपी) 1960-61
- क्रैश स्कीम फॉर रूरल एंप्लॉयमेंट(सीआरएसई)1971-72
- पायलट इंटेंसिव रूरल एंप्लॉयमेंट प्रोग्राम (पीआईआरईपी) 1972
- स्मॉल फार्मर्स डेवलपमेंट एजेंसी (एसएफडीए) 1970
- मार्जिनल फार्मर्स एंड एग्रिकल्चरल लेबर स्कीम (एमएफएएल) 1970
- काम के बदले अनाज योजना (एफडब्ल्यूपी) 1977
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार योजना (एनआरईपी) 1980
- ग्रामीण भूमिहीन रोज़गार गारंटी योजना (आरएलईजीपी) 1983
- रोज़गार आश्वासन योजना (ईएएस) 1993
- जवाहर रोज़गार योजना (जेआरवाई) 1993-94
- जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (जेजीएसवाई) 1999-2000
- संपूर्ण ग्रामीण रोज़गार योजना (एसटीआरवाई) 2001-02
- राष्ट्रीय काम के बदले अनाज योजना (एनएफएफडब्ल्यूपी) 2005

निर्धारित कार्यों की सूची

- जल संरक्षण
- बाढ़ नियंत्रण (वृक्षारोपण और वनीकरण सहित)
- अनुसूचित जाति, जनजाति, ग़रीबी रेखा के नीचे आने वाले परिवार और इंदिरा आवास योजना के तहत आने वाले वर्ग को सिंचाई सुविधा, बागवानी, वृक्षारोपण, भूमि विकास जैसी योजनाओं से संबंधित काम.
- जल स्रोतों का पुनर्निर्माण
- बाढ़ नियंत्रण
- ग्रामीण विकास से संबंधित

ग्राम सभा कामों की प्राथमिकता के आधार पर कार्य परियोजनाओं को तैयार करती है. कम से कम 50 फ़ीसदी कार्य ग्राम पंचायतों के ज़िम्मे होता है. मज़दूरी और सामग्री के बीच 60 और 40 के अनुपात को बनाए रखने की व्यवस्था भी इसके अंतर्गत की गई है. ठेकेदार और श्रम-विस्थापन मशीनरी को इससे दूर रखा गया है.

- रोज़गार देने का दायरा संबंधित गांव के 5 किमी के अंदर ही होना चाहिए, ज़्यादा होने पर 10 फ़ीसदी अधिक मज़दूरी देने की व्यवस्था है.
- सोशल ऑडिट (सामाजिक लेखा) ग्राम सभा द्वारा किया जाना चाहिए.
- लापरवाही के लिए ज़िम्मेदार लोगों को चिह्नित करने के लिए एक तंत्र बनाने की व्यवस्था
- योजना से संबंधित सभी सूचनाएं उपलब्ध कराने की व्यवस्था.

नरेगा से संबंधित तथ्य और मिथक

1. मिथक : सभी ग्रामीण परिवार को रोज़गार मिलना चाहिए
   तथ्य : इस योजना के तहत रोज़गार पाने के लिए पहले आवेदन करना होगा, फिर उसकी जांच-पड़ताल के बाद ही ग्राम पंचायत द्वारा जॉब कार्ड जारी किया जाता है.
2. मिथक : सभी कार्डधारी को रोज़गार मिलना चाहिए
   तथ्य : जॉब कार्ड मिलने के बाद रोज़गार के लिए ग्राम पंचायत को सूचित करना आवश्यक है.
3. मिथक : सभी परिवार को 100 दिनों का रोज़गार
   तथ्य : 100 दिनों की व्यवस्था सरकार की ओर से की गई है जबकि यह रोज़गार मांगने वाले पर निर्भर करता है कि उसे कितने समय के लिए रोज़गार चाहिए.
4. मिथक : बीपीएल के तहत आने वाले परिवार ही नरेगा के अंतर्गत काम के लिए आवेदन कर सकते हैं
   तथ्य : यह सभी के लिए है.

5. मिथक : सभी ज़िले नरेगा के तहत एक जैसा काम करेंगे
   तथ्य : जबकि पहले इसे सबसे अति पिछड़े 200 ज़िलों मे लागू किया गया. इसके अलावा यह 150 अनुसूचित जाति और जनजातीय ज़िलों में लागू किया गया.

अपनी पसंद से रोज़गार पाने वालों के लिए रोज़गार गारंटी योजना एक अविश्वसनीय पहल है. यदि कोई वयस्क इस योजना के तहत काम करना चाहता है तो वह इसके लिए स्वतंत्र है, उसे 15 दिनों के भीतर काम मुहैया कराने की व्यवस्था इसमें है, नहीं तो उसके बदले राज्य सरकार को भत्ता देना अनिवार्य है.

feedback@chauthiduniya.com

जब एक युवा मौत से आंखें मिलाता है

एम जे अकबर

वृद्धावस्था शायद ही अचानक ख़त्म होती है. वैसे, इसे हमेशा के लिए सच नहीं माना जा सकता. युवा जब सफलताओं से लैस होता है, वह ख़तरों पर हमेशा मुस्कुराता है, जब तक कि वह उसकी आख़िरी हंसी न बन जाए. युवा उम्र की संख्या भर ही नहीं है. वाई एस आर रेड्डी की उम्र 60 साल थी. एक ऐसी उम्र जब इंसान थक कर रिटायर होने की दहलीज पर होता है. लेकिन रेड्डी अभी भी एक ऊर्जावान और युवाजोश से लबरेज शख्स थे, जिन्होंने मरने से पहले ज़िंदगी के कई पहलुओं को देखा. ऐसी युवा सोच वाले इंसान के लिए मौत की परिभाषा एक जोख़िम से बढ़कर कुछ नहीं. माधवराव सिंधिया और राजेश पायलट की तरह वाई एस आर भी ख़ुद को युवा सोच वाले शख्स मानते थे और उन्होंने युवा की तरह अपनी पूरी ज़िंदगी जी भी. एक हवाई यात्रा के दौरान सिंधिया ने भी इस जोख़िम का सामना किया. पायलट ने अपने पैरों से पैडल को काफी तेज़ी से दबाया, बस वो भी मौत से बाज़ी हार गए. जब वाई एस आर को बताया गया कि मौसम ख़राब होने की संभावना है, ऐसे में उनके चेहरे पर मौसम को उपेक्षित भाव से देखने वाली मुस्कुराहट ज़रूर आई होगी. युवा का दूसरा नाम ही उम्मीद है. निराशा या इसकी भाव-भंगिमा या इसका एहसास तो कुंठित और टूटे दिल वालों के लिए ही हैं.

तीन साल पहले राजशेखर रेड्डी की हवाईजहाज ने गिद्दलुर में घने बादलों के बीच उड़ान भरी और श्रीसैलम में लगातार बारिश हो रही थी. उनके पायलट ने प्लेन की ऊंचाई कम की, मुख्य सुरक्षा अधिकारी ने मानचित्रों के ज़रिए पता लगाया कि किस जगह प्लेन उतर सकता है. लेकिन यह एंजल दोबारा धोख़ा नहीं दे पाया.

चुनावों में जीत एक राजनेता के मूल्यों की अविश्वसनीय पहचान का पैमाना होता हैं. यह तर्क दिया जा सकता है कि 2004 का चुनाव राजशेखर रेड्डी की जीत की अपेक्षा चंद्रबाबू नायडू की हार ज़्यादा थी. लेकिन राजशेखर रेड्डी की जीत उनकी अथक मेहनत के बग़ैर मुमकिन भी नहीं हो सकता था. लोकतंत्र का एक अघोषित नियम यह भी है कि हर अच्छे विपक्ष को जीत हासिल करने के लिए एक घटिया सरकार की भी ज़रूरत होती है. एक नेता की सही पहचान उसके द्वारा प्रशासन को अच्छे तरीक़े से व्यवस्थित करने से ही होती है. और अच्छे प्रशासन के लिए ढिंढोरा पीटने की ज़रूरत नहीं होती, यह तो पांच साल बाद ख़ुद ही सामने आ जाता है. दूसरी बार चुनाव के दौरान राजशेखर रेड्डी न केवल विवादों में फंसे बल्कि उन्हें विपक्षी पार्टियों द्वारा लगाए गए भ्रष्टाचार के आरोपों का भी सामना करना पड़ा. इसके बावजूद उन्होंने 2009 का चुनाव जीता, क्योंकि उन्हें मालूम था कि उनका काम समाज के सबसे निचले तबके तक पहुंच रहा है. हर राजनेता को अपनी क़ामयाबी साबित करने के लिए विश्व बैंक के सर्टिफीकेट की ज़रूरत पड़ती है, लेकिन रेड्डी को इन सबकी कोई ज़रूरत नहीं थी. ज़ाहिर है, उनका जाना उनकी सरकार के लिए बहुत बड़ा दुख तो है ही, लेकिन उनकी पार्टी के लिए एक अपूर्णीय क्षति भी है. उन्होंने कांग्रेस की लगातार दो लोकसभा चुनावों में जीत की इबारत लिखी. गुटबाज़ी की समस्या कांग्रेस में सिर्फ़ आंधप्रदेश में ही नहीं है, लेकिन यह एक बहुत बड़ा मुद्दा था. यदि आपकी सहानुभूति सत्तारूढ़ पार्टी के प्रति है, तो ये आप कतई नहीं जानना चाहेंगे कि रेड्डी या राव से ऊपर कौन है. एन टी रामा राव के हाथों नागरिकों जो हश्र हुआ, संभलने के बजाय उसने सिविल वॉर की शक्ल अख्तियार कर ली. पीवी नरसिम्हा राव का मुख्यमंत्री से प्रधानमंत्री बनने के बाद भी इस अस्थिर प्रवृति में कोई सुधार नहीं हुआ. राव ने जो कुछ भी किया उसका नतीजा यह निकला कि इससे आंध्र की राजनीति में एक और कांग्रेसी गुट बना. राजशेखर रेड्डी ने इन दोनों समस्याओं का हल निकाला. उन्होंने चुनाव जीता और यह बग़ैर गुटबाज़ी पर लगाम लगाए संभव नहीं था. उसके बाद सारी समस्याओं से निपटना शुरू किया. जो जीत का सारा श्रेय ख़ुद लेना चाहता है, वो एक मूर्ख विजेता होता है.

कांग्रेस के सामने ख़तरा बिल्कुल साफ था. भूकंप के बाद चीज़ें इतनी बिखर जाती हैं कि उसके बाद पुनर्निर्माण काफी मुश्किल हो जाता है. जब पार्टी में सभी समान हैसियत के हों तो ऐसे में किसी उत्तराधिकारी के मसले पर आंतरिक शांति बनाए रखना लगभग असंभव है. फिलहाल दा-वेदार कई हैं, चाहे वह सौम्य और वरिष्ठ एस जयपाल रेड्डी हों, 1978 से हर कांग्रेस सरकार में रहे के रोसैया या युवा और महत्वाकांक्षी रेड्डी के बेटे वाई एस जगन, और कई ऐसे हैं जिनके नाम सामने न आने से संतुष्ट हैं. जगन को लेकर जिस तरह की चर्चा मीडिया में है, वह किसी भी गुट पर अधिक हावी हो सकता है. इसके अलावा वह पिता की मौत के बाद सहानुभूति का भी लाभ उठा सकते हैं. कोई भी राजनेता अपने को कम नहीं समझ रहा है. केवल एक चुनाव में जीत ही अगले मुख्यमंत्री की विश्वसनीयता क़ायम करेगी जबकि अभी उन्हें अपनी राजनीति करने के लिए पूरे चार साल पड़े हैं.

राजशेखर रेड्डी ईसाई थे और उनका एक क़रीबी रिश्तेदार एक आधुनिक लेखक है. चुनावों में जीत के बाद वह येरूशलम भी गए, जहां उन्होंने इसके लिए ऊपर वाले का शुक्रिया अदा किया. एक आस्तिक के रूप में, उन्हें इस तरह याद किया जाना चाहिए कि इस दुनिया में कभी मौत का एक फरिश्ता भी था और जब आप युवा-सा महसूस करते हैं, साथ ही यदि फरिश्ता जाने के पहले अपना पता छोड़ जाता है तो आप कभी परेशान नहीं होते. तीन साल पहले राजशेखर रेड्डी की हवाईजहाज ने गिद्दलुर में घने बादलों के बीच उड़ान भरी और श्रीसैलम में लगातार बारिश हो रही थी. उनके पायलट ने प्लेन की ऊंचाई कम की, मुख्य सुरक्षा अधिकारी ने मानचित्रों के ज़रिए पता लगाया कि किस जगह प्लेन उतर सकती है. लेकिन यह एंजल दोबारा धोख़ा नहीं दे पाया. और वह युवा अब हमारे बीच नहीं है.

feedback@chauthiduniya.com

जब तोप मुक़ाबिल हो

प्रधानमंत्री जी, लोगों को आपसे बड़ी उम्मीदें हैं...

यूपीए सरकार को अगर जनादेश मिला है, तो जनता की उम्मीदों का बोझ भी उसे उठाना ही पड़ेगा. आम चुनाव भले ही दूर हों, लेकिन तुरंत ही तीन राज्यों में कांग्रेस और यूपीए को जनता की कसौटी पर खरा उतरना होगा. इसके बाद भी अलग-अलग राज्यों में चुनाव तो होते ही रहेंगे. महंगाई बढ़ रही है, जनता की यह मुख्य चिंता है. घरेलू औरतें समझ नहीं पा रहीं कि वे अपने घर के बजट को कैसे दुरुस्त रखें.

सरकार के 100 दिन पूरे हो चुके हैं. ज़ाहिर तौर पर, दोबारा सत्ता में चुने जाने पर उम्मीदें भी दोगुनी होती हैं, बोझ भी दुगुना होता है. यह भी तयशुदा बात है कि पांच सालों के लिए चुनी गई सरकार को उसके शुरुआती 100 दिनों के आधार पर आंकना थोड़ी ज्यादती होगी. सरकारें तो पांच साल के लिए ही चुनी जाती हैं. हालांकि, यह भी सच है कि किसी भी सरकार के शुरुआती 100 दिन ही शासन की लय और उसका रवैया तय करते हैं. इस बार का मामला भी कुछ अलग सा ही था. यूपीए की सरकार दुबारा बनने के बाद ही एक तरह का हाइप उसके चारों तरफ रचा गया. यह प्रचार अभियान तब और पकड़ा गया, जब राष्ट्रपति प्रतिभा पाटील ने दोनों सदनों की संयुक्त बैठक को संबोधित करते हुए सरकार की प्राथमिकताएं गिनाते हुए एक तरह से उसका एजेंडा ही सेट कर दिया था. चार जून को हुए इस संबोधन के बाद मंत्रियों और उनके सिपहसालारों में इस बात की होड़ मच गई कि कौन अपने मंत्रालयों के लिए कितने कार्यक्रम तय करता है, या उसकी घोषणा ही करता है.

इसी सप्ताह सरकार ने अपना पहला मील का पत्थर तय कर लिया. यह घटना लगभग अनदेखी-अनकही सी रह गई. इसकी दो वजहें थीं. एक तो सबसे बड़ा विपक्षी दल इतनी पस्त हालत में था कि वह भला क्या हिसाब-किताब लेता. दूसरी बात यह भी है कि सरकार के महत्वाकांक्षी मंत्री और बड़बोले नेताओं को भी हालात की पथरीली ज़मीन का अहसास हो चला था. सरकार बनने के तुरंत बाद ही जो मंत्री महोदय उद्घाटन-दर-उद्घाटन करते चले जा रहे थे, उनको भी पता चल गया कि घोषणा एक अलग बात है, उनका कार्यान्वयन पूरी तरह अलहदा बात.

यूपीए को दूसरी बार जनता ने सत्ता की बागडोर सौंपी है, तो उसमें प्रधानमंत्री जी की छवि का भी योगदान है. जनता को आपसे उम्मीदें हैं, प्रधानमंत्री जी! आपके सौ दिनों के एजेंडा पर एकाध बातें तो हमें कहनी ही हैं. सबसे पहले तो यह कि आपकी सरकार का एजेंडा ही स्पष्ट नहीं हो पाया. उसे खोजकर निकालना पड़ा. दूसरे, आपके अधिकतर मंत्रियों ने आपकी सोच के अनुसार प्रदर्शन नहीं किया. अब यह तो तय है कि जनता आपकी ईमानदारी को देखकर ही दुबारा सत्ता की बागडोर आपको सौंपी है. आपके कुछ मंत्रियों ने ठीकठाक प्रदर्शन किया है, तो कई ने आपकी अपेक्षा के मुताबिक काम नहीं किया.

इस संदर्भ में दो-तीन बातें ध्यान देने वाली होंगी. अगर आपके कुछ मंत्रियों ने आशा के अनुकूल प्रदर्शन नहीं किया

इसी सप्ताह सरकार ने अपना पहला मील का पत्थर तय कर लिया. यह घटना लगभग अनदेखी-अनकही सी रह गई. इसकी दो वजहें थीं. एक तो सबसे बड़ा विपक्षी दल इतनी पस्त हालत में था कि वह भला क्या हिसाब-किताब लेता. दूसरी बात यह भी है कि सरकार के महत्वाकांक्षी मंत्री और बड़बोले नेताओं को भी हालात की पथरीली ज़मीन का अहसास हो चला था. सरकार बनने के तुरंत बाद ही जो मंत्री महोदय उद्घाटन-दर-उद्घाटन करते चले जा रहे थे, उनको भी पता चल गया कि घोषणा एक अलग बात है, उनका कार्यान्वयन पूरी तरह अलहदा बात.

है, तो फिर उनको बाहर का रास्ता दिखाने का यही सही वक़्त है. आपकी टीम में युवा सांसदों का अकाल नहीं पड़ा है. यह बात अलग है कि राजनीति में युवा 60 वर्ष के होते हैं, फिर भी इस लोकसभा में युवा सांसदों की ठीकठाक संख्या है. उनको मौक़ा देने का यह सही समय हो सकता है. मुझे महात्मा गांधी की एक बात यहां याद आ रही है. उन्होंने कहा था- आप ईमानदार हैं, यही काफी नहीं है. आपकी ईमानदारी का प्रदर्शन भी होना चाहिए. हमारे प्रधानमंत्री के लिए यह बिल्कुल सही कहावत है. उनकी ईमानदारी का प्रमाण जनता को भी मिलना चाहिए.

दूसरी बात, जो हमारी समझ में आती है. वह इन 100 दिनों के एजेंडे को भूल जाने की है. यह तो इतिहास की बात हो गई. इसे कुछ देर के लिए, हम अगर भूल जाते हैं, तो प्रधानमंत्री जी के पास एक और विकल्प है. आप अगले 100 दिनों का एजेंडा तो बता सकते हैं. हमारे देश में समस्याओं की कमी नहीं है. उन पर आपकी सोच और आपके उठाए क़दमों के बारे में जानने के लिए जनता उत्सुक है. नाकारा और नाकाबिल लोगों का बोझ उठाने की सामर्थ्य आपकी सरकार में नहीं है. इसलिए, हमारी सलाह तो यही होगी कि आप नई सोच, नई कल्पना और नए विचार वाले लोगों को आगे बढ़ाएं.

यूपीए सरकार को अगर जनादेश मिला है, तो जनता की उम्मीदों का बोझ भी उसे उठाना ही पड़ेगा. आम चुनाव भले ही दूर हों, लेकिन तुरंत ही तीन राज्यों में कांग्रेस और यूपीए को जनता की कसौटी पर खरा उतरना होगा. इसके बाद भी अलग-अलग राज्यों में चुनाव तो होते ही रहेंगे. महंगाई बढ़ रही है, जनता की यह मुख्य चिंता है. घरेलू औरतें समझ नहीं पा रहीं कि वे अपने घर के बजट को कैसे दुरुस्त रखें. बड़ी बहसों और मसलों की जगह आम जनता के लिए तो रोटी, कपड़ा और मकान की बहस ही सबसे बड़ी है. अंबानी बंधुओं में किस बात को लेकर झगड़ा है, इसे जानने से अधिक जनता को इस बात से मतलब है कि उसे एक गैस सिलेंडर कितने में मिलता है. कई राज्यों में अतिवाद और चरमपंथ सिर उठा रहा है. आतंक की घटनाओं से भी देश की जनता भयभीत है.

कुल मिलाकर, यह कहना होगा कि मनमोहन सिंह जी को जनता के दिमाग को समझने और उसके नब्ज़ को पकड़ने की ज़रूरत है. सबसे अंत में, शर्म-अल-शेख़ जैसी जगहों पर आपसे और भी सावधानी की अपेक्षा है, प्रधानमंत्री महोदय!

संपादक

editor.chauthiduniya.com

समय की मांग हैं न्यायिक सुधार

रवि किशोर

सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों ने ख़ुद की संपत्ति को सार्वजनिक करने की घोषणा को सर्वसम्मति से अपनाया. उन्होंने दिल्ली हाईकोर्ट के फ़ैसले को बरकरार रखा कि भारत के मुख्य न्यायाधीश एक सरकारी अधिकारी हैं और उनका कार्यालय सूचना अधिकार अधिनयम के दायरे में आता है. सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों द्वारा उनके समक्ष दिए गए संपत्ति के ब्यौरों को सार्वजनिक किया जा सकता है. उच्च न्यायालयों के जजों द्वारा संपत्ति की घोषण करने के मसले पर से परदा उठ गया है. आशा है कि इससे न्यायपालिका के कामकाज में थोड़ी पारदर्शिता तो आएगी. यह उन लोगों की जीत है, जिन्हें न्यायपालिका की स्वतंत्रता पर विश्वास नहीं है. इतना ही नहीं, वे ये भी महसूस करते हैं कि न्यायपालिका में और अधिक पारदर्शिता और जवाबदेही लाने की जरूरत है. इस संबंध में दिल्ली हाई कोर्ट के न्यायाधीश माननीय रवींद्र भट्ट का फ़ैसला प्रशंसनीय है. इससे उच्च न्यायपालिका के कामकाज में पारदर्शिता आएगी.

सरकार,विशेष रूप से क़ानून मंत्रालय को, इन दो नतीजों से काफी उत्साहित होना चाहिए और तुरंत व्यापक क़ानून बनाने के लिए क़दम उठाना चाहिए. इससे न्यायपालिका के कामकाज में पारदर्शीता और जवाबदेही आएगी. दुर्भाग्य से आज शायद ही न्यायपालिका के कामकाज में कोई पारदर्शिता और जवाबदेही है. जो कुछ है भी, वह नगण्य ही है. किस आधार पर सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों और हाई कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति होती है, यह किसी को पता नहीं है. वैसे हमलोग इस मामले को मुख्य न्यायाधीश और न्यायाधीशों के खंडपीठ की राय और विवेक पर छोड़ देते हैं. न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया को लेकर आम जनता चकित हैं. अगर कोई योग्यता के आधार पर नियुक्त होता है, तब उच्च न्यायालय के एक वरिष्ठतम न्यायाधीश को सुप्रीम कोर्ट में तरक्की नहीं दी जाती है. सबसे अहम बात कि इसकी व्याख्या भी नहीं दी जाती है. अगर योग्यता और वरिष्ठता ही सुप्रीम कोर्ट में नियुक्ति के लिए एक सही मापदंड है तो उच्च न्यायालय के वरिष्ठ न्यायाधीशों को तरक्की नहीं देने से निश्चित रूप से लोगों के मन संदेह उत्पन्न होता है.

इस पृष्ठभूमि के ख़िलाफ़ विधि आयोग ने अपनी 230वीं रिपोर्ट में न्यायपालिका में सुधार के विषय पर क़ानून मंत्रालय को कुछ सलाहें दी हैं:- रिपोर्ट में सभी मुदों, जो न्यायपालिका के कामकाज में सुधार लाने के प्रासांगिक है, जैसे जजों की नियुक्ति, सेवानिवृत होने की उम्र, खंडपीठों की संख्या में वृद्धि, काम के दिन, काम की प्रकृति, जल्दी न्याय, न्याय, ईमानदारी, सदाचार और नैतिकता और प्रशासन आदि विषय के बारे में विस्तार से बताया गया है. ये सभी भ्रष्टाचार के मुख्य विषय हैं.

इसमें सबसे महत्वपूर्ण सुप्रीम कोर्ट और हाई कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति का विषय है. उनकी नियुक्ति इस तरह होनी चाहिए, ताकि लोगों के मन में कोई संदेह न उत्पन्न हो. विधि आयोग की रिपोर्ट के अनुसार उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद हमारे संविधान में काफी महत्वपूर्ण है और उस पद पर बैठने वाला न सिर्फ़ निष्पक्ष और स्वतंत्र, बल्कि बुद्धिमान और परिश्रमी भी माना जाता है. इसके लिए सामान्य पात्रता या मापदंड यह होना चाहिए कि कोई व्यक्ति जिन्होंने दस साल तक प्रैक्टिस या न्यायिक क्षेत्र में सेवा की है, उनको ही इसके लायक़ समझा जाए. आमतौर पर एक व्यक्ति, जिन्होंने राज्य उच्च न्यायालय में प्रैक्टिस की है, उन्हें ही राज्य के उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के तौर पर नियुक्त किया जाता है.

अक्सर हमें अंकल जज के बारे शिकायतें सुनने को मिलती है. यह तथ्य (जिसे अंकल जज कहा जाता है) वास्तव में न्यायिक फ़ैसला देने की पूरी प्रक्रिया के लिए निर्णायक है. इसको (अंकल जज) ख़त्म करने के लिए इस सलाह पर विचार करना चाहिए कि किसी व्यक्ति को उसी कोर्ट का न्यायाधीश नहीं बनाना चाहिए, जहां उसने प्रैक्टिस की हो.

सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में विधि आयोग ने अपनी रिपोर्ट में वर्तमान नियुक्ति व्यवस्था की समीक्षा करने की सिफारिश की

है, जो भारतीय संविधान में निहित मूल व्यवस्था से भटक गया है.

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 124(2) और 217(1) न्यायाधीशों की नियुक्ति से संबंधित है. जिसके तहत कार्यपालिका और न्यायपालिका दोनों ही उनकी नियुक्ति के लिए सहमति देते हैं. 1993 में सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स ऑन रिकॉर्ड एसोसिएशन बनाम भारतीय संघ के मामले में यह नाजुक संतुलन न्यायपलिका के पक्ष में जाते दिखा और राष्ट्रपति के संदर्भ में सुप्रीम कोर्ट की राय (विशेष संदर्भ 1998 न.1) भी इसी की ताक़ीद करती दिखी.

पूरे मामले पर ग़ौर करने और उसकी शक्ति में संतुलन बहाल करने का यही समय है. विधि आयोग ने अपनी 214वीं रिपोर्ट(2008) में इसी तरह की सिफारिश की थी. यहां तक कि पूर्व मुख्य न्यायाधीश जे एस वर्मा, जिन्होंने खंडपीठ की अध्यक्षता की, एक अंग्रेजी पत्रिका के लेख में कहा कि इस पर पुनर्विचार करने की ज़रूरत है. उन्होंने कहा कि सुप्रीम कोर्ट और हाई कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति की प्रक्रिया में मूल रूप से कार्यपालिका और न्यायपालिक दोनों संयुक्त रूप से भाग लेते हैं, हालांकि दोनों अलग क्षेत्र है. एक क्षेत्र में उम्मीदवार की क़ानूनी कौशल, जिसमें उसकी उपयुक्तता को देखी जाती है, तो वहीं दूसरे क्षेत्र में उनकी पूर्ववती है. भारत के मुख्य न्यायाधीश और उसके सहयोगियों या हाई कोर्ट के संबंध में, हाई कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश और उसके सहयोगियों, उसके क़ानूनी कौशल को जांचने-परखने के लिए उपयुक्त हैं. उनकी आवाज प्रभावी होनी चाहिए. जहां तक पूर्व पद का संबंध है, तो कार्यपालिका को न्यायपालिका की अपेक्षा उम्मीदवार के पूर्व पद के बारे में बेहतर पता होता है. इसलिए मेरा फैसला यह कहता है कि क़ानूनी कौशल के क्षेत्र में न्यायपालिका की राय प्रमुख होनी चाहिए और पूर्व पद के क्षेत्र में कार्यपालिका की राय प्रमुख होनी चाहिए. इस तरह से दोनों को संयुक्त रूप से योग्य उम्मीदवार का चयन करना चाहिए.

यहां तक कि क़ानून और न्याय के लिए बनी संसदीय समिति का मानना है कि जजों की नियुक्ति से संबंधित मौजूदा प्रणाली में सुधार की ज़रूरत है ताकि इसे और पारदर्शी बनाया जा सके. संसदीय समिति का सुझाव है कि इसके लिए कॉलेजियम प्रणाली क़ारगर साबित होगी. इसके अलावा एक उच्च समिति के गठन की भी बात कही गई है, जिसके सदस्यों में न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका के सदस्य शामिल रहेंगे.

दिन-ब-दिन बढ़ते जा रहे लंबित पड़े मामलों से निपटने के लिए लॉ कमीशन ने न्यायपालिका में खाली पड़े पदों को भरने, नई बेंचों के गठन, काम की अवधि में बढ़ोतरी की सलाह दी है. साथ ही, बेहतर माहौल (वर्क-कल्चर) और निश्चित अवधि के भीतर सुनवाई की भी बात कही है. हाल ही में, दिल्ली उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के मुताबिक़ यदि न्यायाधीशों की मौजूदा संख्या के हिसाब से ही मामलों की सुनवाई की जाए तो इसे निपटाने में लगभग 464 साल लग जाएंगे. यह चिंता की बात है. इसके अलावा, सबसे अहम यह भी है कि जब तक ज़्यादा ज़रूरी न हो वकीलों को अगली सुनवाई की तारीख़ नहीं मांगनी चाहिए. अगली सुनवाई के लिए तारीख़ देने की प्रक्रिया की निगरानी सिविल कोड के आदेश 17 के तहत होनी चाहिए. न्यायधीशों को मुक़दमे का फ़ैसला एक निश्चित अवधि के अंदर करना चाहिए. इस मामले में अनिल राय बनाम बिहार सरकार के संदर्भ में उच्चतम न्यायालय के निर्देशों का पालन दीवानी और फौज़दारी दोनों मुक़दमों में किया जाना चाहिए. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 में मामलों के जल्दी निपटारे की बात कही गई है. इसके तहत आपराधिक मुक़दमों की सुनवाई में देरी को व्यक्ति के जीने और स्वतंत्रता के अधिकार का हनन माना गया है. पूरी न्यायिक प्रणाली को व्यवस्थित करने की तत्काल ज़रूरत है और इसके लिए नए तौर-तरीक़े अपनाने की भी आवश्यकता है जिससे मामलों की सुनवाई जल्द हो सके. ऐसा नहीं होने पर न्यायिक व्यवस्था के ख़त्म होने की संभावना बढ़ जाएगी. न्यायाधीशों के अलावा वकीलों को भी इस प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभाने की ज़रूरत है ताकि वे लोगों की अपेक्षाओं पर खड़े उतर सकें.

1990 में क्यूबा के हवाना में अपराधों की रोकथाम और मुक़दमों की सुनवाई के लिए आठवां यूनाइटेड नेशन्स कांग्रेस आयोजित किया गया. वहीं से अनुच्छेद 14 को लिया गया, जिसमें वकीलों की भूमिका का ज़िक्र किया गया है.

वकील न्याय को बढ़ावा देने के लिए और अपने मुवक्किलों के अधिकारों की रक्षा करेंगे. अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय क़ानूनों के मुताबिक़ मानवीय अधिकारों की रक्षा के लिए स्वतंत्र और नैतिकता पूर्वक काम करेंगे.

न्यायपालिका में व्याप्त भ्रष्टाचार से और बेहतर तरीक़े से निपटने की ज़रूरत है. भारत के मुख्य न्यायधीश ने यह स्वीकार किया है कि न्यायपालिका में नैतिकता का स्तर गिरा है. उनके मुताबिक़, जब वह न्यायिक प्रणाली की बात करते हैं तो इसका मतलब केवल जजों से ही नहीं होता, वकील भी इस दायरे में आ जाते हैं. पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायलय, ग़ाज़ियाबाद के न्यायाधीशों के नाम पीएफ घोटाले में आना, जैसे कुछ उदाहरण हमारे सामने हैं. जबकि वकीलों के संदर्भ में बीएमडब्ल्यू केस से जुड़े वरिष्ठ अधिवक्ता आर के आनंद और आई क्यू ख़ान का मामला भी कम चौंकाने वाला नहीं है.

अंत में लॉ कमीशन (विधि आयोग) ने यह सुझाव दिया है कि चीज़े बिल्कुल साफ़ हैं. इन सुधारों के लिए आत्म-निरीक्षण, अनुशासन की ज़रूरत है, नहीं तो हालात बेक़ाबू भी हो सकते हैं. न्यायधीशों और वकीलों दोनों को अपनी सोच बदलनी होगी. जब तक हम मानसिक रूप से बदलाव के लिए तैयार नहीं होते सुधार का कोई भी प्रयास सफल होना मुश्किल है.

ऐसे में गांधीजी की यह बात हमें याद रखने की ज़रूरत है कि यदि हम बदलाव चाहते हैं तो पहले हमें ख़ुद को बदलना होगा.

पहले की अपेक्षा न्यायपालिका में लोगों का विश्वास कहीं अधिक बढ़ा है. सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों को हासिल करने के लिए न्यायपालिका को अभी ख़ास भूमिका निभानी है. बदलते सामाजिक परिदृश्य में सामाजिक-आर्थिक न्याय प्राप्त करने के लिए उन्हें जागरूक रहने की भी ज़रूरत है.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback@chauthiduniya.com

प्रिय संपादक जी,

आपके अख़बार का 13 सितंबर वाला अंक पढ़ा. काफी रोचक लगा. इसलिए कि वर्तमान भारतीय राजनीति और ज्वलंत मुद्दों पर तीखी टिप्पणी दी है. कवर पेज पर लिखी स्टोरी ने भारतीय जनता पार्टी की वर्तमान स्थिति और भविष्य को उजागर किया है. भाजपा के अंदर चल रहे अंतर्द्वंद्व को आपने पाठकों के सामने साफ तौर पर रखा. इस खींचतान से सिवाय देश के नुकसान के और कुछ फ़ायदा होनेवाला नहीं है.

सबसे रोचक और चौंकाने वाली स्टोरी है कि ***जिन्ना एक बेचैन आत्मा.*** मुसलमानों के ख़ास नेता मुहम्मद अली जिन्ना पाकिस्तान के नायक रहे हैं. मगर परदे के पीछे उनकी हक़ीक़त की पोल इस स्टोरी से खोल दी. इसने हिंदी के हम जैसे आम पाठकों को इस तरह की दुर्लभ जानकारी उपलब्ध करवाई. एम जे अकबर आज तक अंग्रेजीदां लोगों तक ही पहुंच पाते थे, लेकिन हिंदी पाठकों तक उनको पहुंचाने की आपकी कोशिश काबिले तारीफ है. आशा करता हूं कि इस तरह की जानकारियां उपलब्ध कराते रहेंगे. उम्मीद है आगे भी बेहतर कोशिश रहेगी.

आपकी
दीपिका
सिविल लाइंस
दिल्ली

शरणार्थी समस्या : सकारात्मक पहल की ज़रूरत

सौमित्र मोहन

जनसंख्या विस्थापन के क्षेत्र में दक्षिण एशिया का एक अनूठा इतिहास रहा है. यहां, युद्ध के बाद लोग या तो अपने देश की सीमाओं से बाहर निकाल दिए गए अथवा वे जाति, नस्ल या धर्म के आधार पर देश छोड़ने को मज़बूर हो गए. इसके बाद पर्यावरण या विकासात्मक प्रक्रिया भी विस्थापन की एक वजह बनी. भारत और पाकिस्तान दोनों अपनी आज़ादी के दौरान बड़े पैमाने पर विस्थापन की समस्या का गवाह रहे. 1947 के विभाजन के बाद, 7.5 मिलियन हिंदू और सिख शरणार्थी पाकिस्तान से भारत आए, वहीं 7.2 मिलियन मुस्लिम शरणार्थियों को भारत से पाकिस्तान में शरण लेनी पड़ी. इतिहास में दर्ज़ यह अब तक का सबसे बड़ा शरणार्थी विस्थापन था.

इस व्यापक मानवीय संकट के समय में भी काफी कम अंतरराष्ट्रीय सहायता मिल पाई. बाद में 1971 में बांग्लादेश की आज़ादी की लड़ाई के समय 10 मिलियन शरणार्थियों ने भारत का रूख़ किया. 1979 में, सोवियत संघ के हस्तक्षेप के बाद 3.5 मिलियन अफ़ग़ानियों ने पाकिस्तान की शरण ली, ऐसा कहा जाता है कि इनमें 1.2 मिलियन शरणार्थी अभी भी गांवों में रह रहे हैं. 1970-1990 के दौरान, बांग्लादेश में म्यांमार के राखिन ज़िले से 3,00,000 मुस्लिम शरणार्थियों की बाढ़-सी आ गई, जिसमें

भारत के मामले में, उच्च-न्यायलयों ने संवैधानिक और मानवाधिकारों के आधार पर शरणार्थियों के मानवीय सरोकार के मसले पर अपनी राय दी है. लेकिन किसी भी सार्क देशों में इस मुद्दे पर कोई पहल नहीं हुई है. वर्तमान राजनीतिक और सुरक्षा से जुड़े संदर्भ में प्रत्येक देश इस शरणार्थी समस्या को अपने तय किए मानकों के हिसाब से समाधान करना चाहते हैं. हालांकि, ये मानक समय और देशों के मुताबिक़ बदलते रहते हैं.

30,000 शरणार्थी अभी भी वापस नहीं गए हैं. इसी तरह, 90,000 नेपाली मूल के भूटानियों को निष्काषित कर दिया गया और उनमें से अधिकतर शरणार्थी नेपाल के झपा ज़िले में अभी भी रह रहे हैं. फिर भी, संयुक्त राज्य उच्च-आयुक्त (शरणार्थी) द्वारा हाल ही में अधिकांश को तीसरी दुनिया के देशों में बसाया गया है.

तमिलों के बार्ा य-विस्थापन और सिंहली, तमिल और मुस्लिमों के आंतरिक विस्थापन की वजह से ही श्रीलंका को प्राय: शरणार्थी-द्वीप कहा जाता है. हालांकि यह शरण देने वाला नहीं बल्कि शरणार्थी पैदा करने वाले देशों में शुमार होता है. 1983 से श्रीलंका ने लाखों शरणार्थियों को पैदा किया, वहीं इसके अलावा 50,000 तमिल शरणार्थी पहले से ही पश्चिम देशों में शरण लिए हुए हैं. तमिलनाडु में शरण लिए अधिकांश श्रीलंकाई शरणार्थियों को स्वेच्छा से वापस भेज दिया गया, लेकिन उत्तर-पूर्व श्रीलंका में चल रहे सुरक्षा संकट की वजह से अभी भी 60,000 से अधिक शरणार्थी वापस जाने से हिचक रहे हैं. 1960 के दशक से ही भारत 1,00,000 से भी अधिक तिब्बत और 50,000 बांग्लादेशी बौद्ध शरणार्थियों की मेज़बानी कर रहा है, जिनमें कुछ ने तो हाल ही में भारत का रूख़ किया है. भारत ने यूएनएचआरसी को आश्वासन दिया है कि वह मानवीय आधार पर 12,000 अफ़ग़ानियों की भी मदद करेगा. मालदीव पहला सार्क देश है, जो न तो शरणार्थी पैदा करता है और न ही उन्हें शरण देता है.

इन वर्तमान और अतीत के शरणार्थी संकट और शरण देने की पुरानी मानवीय परंपरा के बावजूद किसी भी सार्क देश ने 1951 के अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन या 1967 के प्रोटोकॉल को स्वाकार नहीं किया है. जिसे दुनिया के 136 देशों में मान्यता मिल चुकी है. फिर भी, भूटान और नेपाल के अलावा सभी सार्क देशों ने शरणार्थियों की सहायता के लिए संयुक्त राष्ट्र की यूएनएचसीआर संस्था के लिए अंतरराष्ट्रीय मानवीय सहयोग के आधार पर मदद करने का संकल्प दोहराया है. 1951 सम्मेलन या 1967 के प्रोटोकॉल और सार्क देशों के बीच इस मसले पर असहमति की वजहें काफी समान थीं. उनका तर्क है कि शरण देने की उनकी परंपरा अंतरराष्ट्रीय मानकों की तुलना में काफी बेहतर है, यहां तक कि कभी-कभी बेहतर संसाधन वाले देशों से भी. इसीलिए वे शरणार्थी मुद्दे को द्विपक्षीय नीति के आधार पर ही निपटेंगे. लेकिन इसकी समस्या को साझा करने के लिए अंतरराष्ट्रीय मानवीय सहायतों का वह स्वागत करते हैं.

सार्क देशों का यह भी तर्क है कि उत्पीड़क आधारित 1951 का सम्मेलन या 1967 प्रोटोकॉल इस क्षेत्र में मौजूदा शरणार्थी समस्या से व्यापक तौर पर निपटने के लिए पर्याप्त नहीं है. जिनमें शरणार्थी समस्या की मुख्य वजह राज्यों के उत्पीड़न की अपेक्षा प्राय: अंदरूनी संघर्ष ही होते हैं. अंतरराष्ट्रीय शरणार्थी समस्या से निपटने के साधन को अपर्याप्त बताते हुए, वे अफ़्रीकी शरणार्थी व्यवस्था, 1958 के अफ़्रीकी एकता संगठन सम्मेलन और लैटिन अमेरिका शरणार्थी, 1984 की कर्टेजेना शरणार्थी घोषणा जैसी व्यवस्था की मांग करते हैं जो शरणार्थी की परिभाषा को व्यापक तौर से परिभाषित भी करती है. दक्षिण एशिया में शरणार्थी समस्या काफी हद तक स्थाई हो चुकी है. और राज्यों द्वारा मानवीय आधार पर इन मसलों के हल नहीं करने की वजह से यह राष्ट्रीय और अंतरराज्यीय सुरक्षा के लिए चिंता का सबब बन चुका है. चूंकि तकनीकी तौर पर सभी शरणार्थियों को अवैध विस्थापक माना जाता है, इसलिए क़ानूनी तौर पर उनके पास सुरक्षा का कोई अधिकार नहीं होता. इस स्थिति में, सार्क देशों द्वारा क्षेत्रीय सम्मेलन या घोषणा प्रासंगिक हो जाता है. साथ ही इन बुनियादी सवालों पर सहमति, मसलन, शरणार्थी की परिभाषा, शरण देने और स्वेच्छा से शरणार्थियों को बसाने जैसी बातें शरण देने वाले राज्यों के वार्ताकारों के बीच तनाव कम कर बातचीत का माहौल बनाने में मददगार साबित होगा. सार्क शरणार्थी सम्मेलन अथवा घोषणा भी इस क्षेत्र में मानवीय संकट दूर करने की दिशा में एक अहम क़दम साबित हो सकता है.

भारत के मामले में, उच्च-न्यायलयों ने संवैधानिक और मानवाधिकारों के आधार पर शरणार्थियों के मानवीय सरोकार के मसले पर अपनी राय दी है. लेकिन किसी भी सार्क देशों में इस मुद्दे पर कोई पहल नहीं हुई है. वर्तमान राजनीतिक और सुरक्षा से जुड़े संदर्भ में प्रत्येक देश इस शरणार्थी समस्या को अपने तय किए मानकों के हिसाब से समाधान करना चाहते हैं. हालांकि, ये मानक समय और देशों के मुताबिक़ बदलते रहते हैं. शरणार्थी मसले पर एक क्षेत्रीय या घोषणा के द्वारा सार्क देश मौजूदा पारंपरिक मानवीय सहायता नीति को सुधार सकेंगे, साथ ही, ग़ैर-विवादास्पद सिद्धांतों को भी विकसित करने में मदद मिलेगी. जिससे सांगठनिक एकता और मानव अधिकारों के प्रति प्रतिबद्धता भी विकसित होगी. ऐसे सम्मेलन अथवा घोषणाओं के दस्तावेज़ इस आधार पर तैयार किए जाएंगे कि वे इस क्षेत्र में शरणार्थी समस्या के समाधान के लिए उपयुक्त हो. और यह सार्क देशों का अपना एक अंतरराष्ट्रीय क़ानून होगा.

शरणार्थी समस्या के निदान के लिए क्षेत्रीय या राष्ट्रीय साधनों के हिसाब से अलग-अलग राय हो सकते हैं, लेकिन इसमें कोई दो राय नहीं शरणार्थियों की समस्या से निपटने के लिए सरकारों के मार्गदर्शन देने के लिए एक ख़ास क़ानून होने चाहिए. दक्षिण एशियाई देश मौजूदा अंतरराष्ट्रीय शरणार्थी क़ानून को स्वीकार करना चाहें अथवा वे ख़ुद एक अलग क़ानून बनाएं लेकिन उनके लिए अब फ़ैसला लेने का वक़्त चुका है. हालांकि, कुछ ऐसे मुद्दे हैं, जिनसे बहुपक्षीय-क्षेत्रीय स्तर पर आसानी से निपटा जा सकता है.

यह पहली बार है, जब दक्षिण एशियाई देशों ने शरणार्थी समस्या के समाधान के लिए प्रशासनिक उपायों की जगह, इसके लिए एक निर्णायात्मक फ़ैसला लिया है. इसीलिए इस मसले पर उनके पास एक क़ानून होना अनिवार्य है. शरणार्थियों से संबंधित विशेष क़ानून होने के कारण ये देश पहले से उन्हें शरण देते आ रहे हैं, ऐसे में उन्हें इन क़ानूनों को केवल औपचारिक रूप से लागू करने और एक ठोस शक्ल देने की ज़रूरत है. इससे संबंधित क़ानूनों में राष्ट्रीय हितों का विशेष ध्यान रखा जाएगा, ताकि शीत युद्ध के दौरान बनाए गए इन क़ानूनों में बदलाव के तहत इस उप-महाद्वीपीय क्षेत्र में शरणार्थियों की वास्तविकता से इसे अधिक प्रासंगिक बनाया जा सके, क्योंकि पहले के क़ानून मौजूदा समय में दक्षिण एशिया शरणार्थियों की ज़मीनी हक़क़ीत को बयां नहीं करते.

बुनियादी और सांगठनिक रूप से शरणार्थियों की समस्या से निपटने के लिए नए क़ायदे-क़ानून क्षेत्रीय और राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुए कस्टम व्यवस्था पर आधारित होंगे. ऐसी व्यवस्था शरणार्थी समस्या से निपटने के लिए अधिक संगत, समल्वित और पूर्वानुमानित भी होगा. साथ ही यह इन देशों को संयुक्त राष्ट्र के तहत अंतरराष्ट्रीय दायित्वों को निभाने में मदद भी करेगा. यूएनएचसीआर के नेतत्व में मॉडल नेशनल लॉ और ड्राफ्ट रिज़नल डिक्लरेशन का मसौदा का तैयार किया जाना एक सकारात्मक क़दम है. यह उम्मीद की जाती है कि दक्षिण एशियाई देश शरणार्थियों से संबंधित एक विशेष क़ानून पर सकारात्मक रूख़ अपनाने के बाद अपनी आन (प्रतिष्ठा) को त्याग कर शरणार्थियों के लिए उदारता का परिचय देंगे.

(लेखक प. बंगाल में आईएएस अधिकारी हैं. आलेख में व्यक्त विचार उनके अपने हैं और इनका सरकार के विचारों से संबंध नहीं है.)

feedback@chauthiduniya.com

ख़ुफ़िया एजेंसियों के सीक्रेट

एफबीआई की अब तक की सबसे बड़ी नाकामयाबी

संसार की सबसे शक्तिशाली ख़ुफ़िया एजेंसी एफबीआई को हरेक मामले में सफलता ही मिल गई हो, ऐसा नहीं है. इस एजेंसी को भी कई मामलों में केवल धूल ही फांकनी पड़ी है. इस बार हम बता रहे हैं, ऐसी ही एक असफलता, जिसे एफबीआई की अब तक की सबसे बड़ी नाकामयाबी कहा गया.

दुनिया का सबसे शक्तिशाली मुल्क अमेरिका. अमेरिका की सबसे बड़ी ख़ुफ़िया एजेंसी एफबीआई. इसी तेज़-तर्रार ख़ुफ़िया एजेंसी एफबीआई की अब तक की सबसे बड़ी लापरवाही और नाक़ामयाबी थी यह. जिसने पूरे अमेरिका में दहशत का माहौल क़ायम कर दिया. आसमान में किसी भी प्लेन को देखकर लोगों के होश उड़ जाते. हर तरफ़ ख़ौफ़ का ऐसा मंजर था, मानों हर किसी के सिर पर मौत के बादल मंडरा रहे हों. जी हां, अमेरिकी इतिहास का यह अब तक का सबसे बड़ा आतंकी हमला था. जिसने लोगों को ख़ौफ़ के साए में जीने को मज़बूर कर दिया था. लेकिन इसकी सबसे बड़ी हक़ीक़त यह भी थी कि इस क़हर को रोका जा सकता था. 9/11 की यह वारदात जो अमेरिकियों पर क़हर बन कर आई थी, उसने अमेरिका ही नहीं पूरी दुनिया को हिला कर रख दिया था. लोग यहां तक सोचने लगे जब एक सुपर-पावर देश, एफबीआई जैसी एजेंसी के रहते आतंकी हमलों से महफ़ूज़ नहीं है, तो दुनिया का कोई भी कोना सुरक्षित नहीं हो सकता. लेकिन सभी इस बात से अनजान थे कि यह एफबीआई की जितनी बड़ी नाकामयाबी है, उससे भी बड़ी उसकी लापरवाही. कई पुख्ता सुराग होने के बावजूद इस ख़ुफ़िया एजेंसी ने एहतियात नहीं बरती, जिसका ख़ामियाज़ा 3,000 से भी अधिक अमेरिकियों को अपनी जान की क़ीमत चुका कर देनी पड़ी. कई ऐसी ख़ुफ़िया सूचनाएं एफबीआई को मालूम थी, जिस पर कार्रवाई कर इस हमले को रोका जा सकता था. लेकिन, एफबीआई की इस एक लापरवाही ने 3,000 से भी ज़्यादा लोगों को मौत के आगोश में ले लिया. आलम यह कि उसके बाद भी वह अपनी लापरवाही पर पर्दा डलने की कोशिश में लगी रही.

ग़ौरतलब है कि एफबीआई एजेंट हैरी समिट ने बीस लोगों की गवाही के आधार पर अमेरिकी सरकार को एक रिपोर्ट सौंपी, जिसमें बताया गया कि इस हमले को रोकना मुमकिन नहीं था. जबकि हमले की जांच करने वाली 9/11 कमीशन रिपोर्ट की मानें तो यह एफबीआई और सीआईआई की अब तक की सबसे बड़ी चूक थी, जिसने उपलब्ध ख़ुफ़िया जानकारी के आधार पर भी कोई तहक़ीक़ात या छानबीन नहीं की. इस कमीशन के चेयरमैन थॉमस कीन के मुताबिक़ एफबीआई और सीआईए ने तत्कालीन राष्ट्रपति जॉर्ज बुश और उनके पूर्ववर्ती बिल-क्लिंटन दोनों को इस मसले पर अंधेरे में रखा. हालांकि हैरी समिट ने मोस्सावी से जुड़ी रिपोर्ट में प्लेन-हाईजेक से संबंधित कई सनसनीख़ेज ख़ुलासे किए थे. उनके पास मोस्सावी की व्हाइट-हाउस में घुसपैठ और हवाई प्रशिक्षण से भी जुड़ी जानकारियां थी, जिसके आधार पर ख़ुफ़िया एजेंसियों को हमले के बारे में आगाह भी किया गया था. ख़ुफ़िया एजेंट समिट के पास यह भी जानकारी थी कि मोसावी के लिंक ओसामा बिन लादेन से भी जुड़े हैं. लेकिन इन सबके बावजूद एफबीआई हाथ पर हाथ धरे बैठी रही. इस तरह एक-एक कर हमले की वजह की ख़ामियां परत-दर-परत खुलती जा रही थीं. डिफेंस अटॉर्नी मैक्कमोहन के मुताबिक़ एफबीआई एजेंट समिट और उसके सीनियर माइक मॉलटबी को यह भी मालूम था कि मोस्सावी के पास हमले से जुड़ी कई ख़ुफ़िया जानकारी है. लेकिन माइक ने इससे ख़ुद ही निपटने का फ़ैसला किया और समिट को एफएए हेडक्वार्टर में इससे संबंधित सूचना देने से रोक दिया. 9/11 कमीशन के चेयरमैन थॉमस कीन की मानें तो मोसावी से मिली सूचना पर एफबीआई अधिकारियों द्वारा कोई एक्शन नहीं लिए जाने का ही ख़ामियाज़ा था कि अमेरिका को अब तक का सबसे बड़ा आतंकी हमला झेलना पड़ा. जिसमें क़रीब 90 देशों के नागरिकों को या तो अपनी जान देनी पड़ी या वे गंभीर रूप से घायल हो गए.

मोसावी से मिली ख़बर के मुताबिक़ उसने अमेरिका के फीनिक्स में ही फ्लाइट ट्रेनिंग ली, जिसकी सूचना सीआईआई प्रमुख टेनेट को भी थी, लेकिन एफबीआई ने इस पूरे मसले पर छानबीन तब शुरू की जब आतंकी अपने नापाक मंसूबों को अंजाम देने में क़ामयाब हो गए. उसके बाद ही एफबीआई ने यह ख़ुलासा किया कि पकड़े गए संदिग्ध मोसावी से मिली सूचना के मुताबिक़ इस नापाक और ख़ौफ़नाक वारदात को अंजाम आतंकी संगठन अल-क़ायदा ने ही दिया. उन्होंने सबसे पहले अमेरिका में ही हवाई प्रशिक्षण लिया और उसके बाद जेट एयरवेज के चार प्लेन को हाईजैक कर दो प्लेन वर्ल्ड ट्रेड सेंटर और पेंटागन से टकरा दिए. जबकि बाक़ी दो पेंसिलवेनिया के पास गिर गए. बाद में पता चला कि इस पूरी घटना का मास्टरमाइंड अल-क़ायदा आतंकी ख़ालिद शेख़ मोहम्मद था, जिसने मोहम्मद अट्टा की मदद से इस पूरी वारदात को अंजाम दिया. उसे बाद में पाकिस्तान से गिरफ़्तार किया गया. इस दौरान एफबीआई की सबसे बड़ी नाकामी रही आत्मघाती प्लेन हाईजैकर नवाब अलहज़मी और ख़ालिद अलमिधर के बारे में कुछ भी मालूम न होना, जबकि ये दोनों आतंकी साल 2000 से ही अमेरिका में इस आतंकी हमले की ट्रेनिंग ले रहे थे. ऐसे कई मौक़े आए जब एफबीआई ने 9/11 के पहले उन दोनों को पकड़ने के अवसर गंवाएं. यह अमेरिका के ख़ुफ़िया एजेंसी के इतिहास की सबसे बड़ी नाकामयाबी थी. जिसने अमेरिका समेत पूरी दुनिया को हिला कर रख दिया. उसके बाद वॉर ऑन टेरर के नाम पर आतंकी और ऐसे संगठन के ख़ात्मे की मुहिम अभी भी चल रही है.

मोसावी

थॉमस कीन (9/11 कमीशन चेयरमैन)

डिफेंस अटॉर्नी मैक्कमोहन के मुताबिक़ एफबीआई एजेंट समिट और उसके सीनियर माइक मॉलटबी को यह भी मालूम था कि मोसावी के पास हमले से जुड़ी कई ख़ुफ़िया जानकारी है. लेकिन माइक ने इससे ख़ुद ही निपटने का फ़ैसला किया और समिट को एफएए हेडक्वार्टर में इससे संबंधित सूचना देने से रोक दिया. 9/11 कमीशन के चेयरमैन थॉमस कीन की मानें तो मोसावी से मिली सूचना पर एफबीआई अधिकारियों द्वारा कोई एक्शन नहीं लिए जाने का ही ख़ामियाज़ा था कि अमेरिका को अब तक का सबसे बड़ा आतंकी हमला झेलना पड़ा.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

ज़रा हट के

घोंसला बनाने वाले मेंढक की खोज

भारत के एक वैज्ञानिक ने तीन दुर्लभ प्रजाति के मेंढक की खोज करने का दावा किया है, जो घोंसला बनाते हैं और अंडों के साथ उसमें रहते हैं. बीबीसी रिपोर्ट के मुताबिक़ इस दुर्लभ प्रजाति की खोज भारत के पश्चिमी राज्य केरल और कर्नाटक के रेन फॉरेस्ट की पश्चिमी पर्वत श्रेणी में हुई है. 20 वर्ष के गहन अनुसंधान के बाद केरल के वायनाड और कर्नाटक के कुर्ग में इस प्रजाति के मेंढक मिले हैं. इस दुर्लभ प्रजाति के मेंढक की खोज दिल्ली यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर डॉ. एस डी बीजू के द्वारा की गई है. उन्होंने कहा कि यह उभयचर अंडों को गर्मी और प्रीडिएटर से बचाने के लिए घोंसला बनाते हैं. इस छोटे से मेंढक की लंबाई 12 सेंटीमीटर (लगभग पांच इंच) है. यह घोंसला ऊपर से नीचे तक पत्तियों से बना होता है. डॉ. बीजू ने बीबीसी से कहा कि ये वास्तव में दुर्लभ प्रजाति के मेंढक हैं और एशिया में पाए जाने वाली इस प्रजाति का यह अकेला मेंढक है. उन्होंने कहा कि यह अमेरिका और अफ्रीका में पाए जाने वाले लीफ नेस्ट मेंढक से बिल्कुल अलग है. अमेरिका और अफ्रीका में पाए जाने वाली इस प्रजाति के मेंढक अपना घोंसला अंडा देने के दौरान

बनाते हैं. इतना ही नहीं नर और मादा दोनों मिलकर घोंसला बनाते हैं. डॉ. बिजू ने कहा कि यह प्रजाति कॉफी और अन्य खेती की वजह से ख़तरे में है. क्योंकि इस वजह से ये जंगल में अपना घर खोते जा रहे हैं. आठ साल पहले जब बिजू ने इस इलाक़े का दौरा किया था तो रात में प्रजनन करते समय उसे आसानी से देखा जा सकता था. लेकिन अब उसे देखना काफी दुर्लभ हो गया है.

वैज्ञानिकों ने नए मैकेनिज़्म का पता लगाया

मिशगन यूनिवर्सिटी के एक अनुसंधान दल, जिसका नेतृत्व भारतीय मूल के वैज्ञानिकों ने किया, ने एक नए मैकेनिज़्म की खोज की है, जिससे भविष्य में इलाज के दौरान काफी मदद मिलेगी. यह ऑटोइम्यून से लेकर, अंग प्रत्यारोपण और कैंसर जैसी बीमारियों के इलाज में काफी मददगार साबित होगा. यू-एम बॉयोकेमेस्ट्री के प्रोफेसर रूमा बनर्जी और उनके सहयोगियों ने एक मैकेनिज्म की खोज की है. वह प्रतिरक्षा कोशिकाओं पर पैनी नज़र रखता है, जो शरीर की कोशिकाओं पर भी हमला कर सकता है. रिसर्च में उन्होंने पाया कि आक्रामक प्रतिरक्षा कोशिका, कोशिकाओं के बीच रसायनों को नियंत्रित कर इम्यून सिस्टम रेगुलेटरी टी सेल्स को प्रभावित करता है.

अब हम जानते हैं कि क्यों कोशिकाओं के बाहर रेडॉक्स डायनैमिक काफी महत्वपूर्ण है. यह कोशिका के फंक्शन को नियंत्रित करता है. नेचर मैग्जीन में बनर्जी ने लिखा है कि यह प्रक्रिया रेडॉक्स कैमेस्ट्री के तौर पर जानी जाती है. इसके ज़रिए कोशिका ऊर्जा प्राप्त और खपत करते हैं. उन्होंने कहा कि रेगुलेटरी

टी कोशिकाएं आक्रामक कोशिकाओं के बीच कैमिकल इनवायरमेंट में मिलाने से उत्पन्न होता है, जिसे ऑटोरिएक्टिव (स्वयं क्रियाशील) टी कोशिकाओं के तौर पर जाना जाता है, जो या तो उसे उत्पन्न होने से रोकता है या और अधिक उत्पन्न होता है. इस मैकेनिज़्म को इंफ्लैमेटरी बॉउल डिजीज (आईबीडी) और अलसर कॉलिटिस में शामिल करने की संभावना है. इस स्टडी (जिंदा चूहों के इम्यून कोशिकाओं पर किया गया रिसर्च) से पता चलता है कि महत्वपूर्ण रेडॉक्स कम्यूनिकेशन डेनड्रिक्टि कोशिकाओं के बीच होता है. यह इस तरह की पहली इम्यून कोशिका है, जिसे बाहरी तत्व और ऑटोरिएक्टिव(स्वयं क्रियाशील) टी कोशिकाओं के तौर पर खोजा गया है. डॉ. संजय गर्ग, यू-एम विभाग के बॉयोलॉजीकल कैमेस्ट्री में अनुसंधान के जांचकर्ता ने कहा कि कोशिका के बाहर डेनड्रिक्टिक कोशिकाएं कैमिकल इनवायरमेंट को मिलाता है, जिससे टी सेल्स को सक्रिय होने में मदद मिलती है. लेकिन उसके बाद यह टी रेगुलेटरी सेल के बीच में आता है और उसके प्रभाव को दबा देता है. बनर्जी इस बात पर ज़ोर दे रही हैं कि इस पूरी प्रकिया को समझने के लिए और अधिक स्टडी करने की ज़रूरत है.

शवदाह गृह में गुजार दी पूरी ज़िंदगी

हमेशा मुस्कुराने वाले 60 वर्षीय मुकुंद प्रभाकर अगटे के चेहरे से साफ झलकता है कि उनका ताल्लुक़ मध्यम वर्गीय परिवार से है. वह नौकरी भी करते हैं और शहर के बाहर उनका एक सुंदर सा आशियाना भी है. हालांकि जब सूरज डूबने लगता है और रात को विचरण करने वाले जीव अपने स्थान से निकलने लगते हैं. उस वक्त अपना सिर छुपाने के लिए वह, वहां जाते हैं, जहां जाने के लिए बहुत से लोग हिम्मत भी नहीं करेंगे. हो सकता है इसे सुनकर आप भी चौंक जाएं. वह रात शहर के श्मशान में बिताते हैं. अक्सर अगटे श्मशान को अपना आशियाना बताते हैं. हालांकि आराम करने के लिए वेस्टर्न रेलवे कॉरिडोर, प्लेटफॉर्म या फिर साउथ मुंबई का फुटपाथ उनके लिए काफी मुफ़ीद जगह है. लेकिन इसका मतलब यह कतई नहीं है कि वे कंगाल और अभावग्रस्त हैं. ऐसा वह सिर्फ़ अपनी मर्जी से करते हैं. 25 हज़ार रुपए महीने की तनख्वाह होने के बाद भी वह मुबंई में किराए पर मकान लेने के लिए इच्छुक नहीं हैं. वह वेस्टर्न रेलवे के ऑपरेटिंग विभाग में सीनियर क्लर्क थे. 37 साल बाद अगटे हाल ही में इस विभाग से सेवा निवृत हुए हैं. यह भी सोचना गलत है कि उनके परिवार में कोई नहीं है. उनका परिवार बहुत बड़ा है. उनके परिवार में तीन बहन, एक भाई, जो अमेरिका में काम करता है, पत्नी और तीन बेटी है. वह बड़ी सहजता से यह कहते हैं कि सेवा निवृत्ति के बाद भी अपने किसी संबंधी के पास नहीं जाएंगे. अगटे अपनी स्वतंत्रता की वजह से पिता के घर से नई नवेली दुल्हन के साथ 23 वर्ष की उम्र में निकल गए. उसके बाद वह अपने संबंधियों के घर भी नहीं गए. उनके पास रहने के लिए सरकारी आवास विकल्प बचा. लेकिन उन्होंने इस विकल्प को भी छोड़ दिया, क्योंकि इससे उनकी आर्थिक स्थिति और कमज़ोर हो जाती. अंत में उन्होंने अपनी पत्नी को उसके मायके मैनगांव में छोड़ दिया.

दो दशकों से वह महालक्ष्मी, मरीन लाइंस और विरार के शवदाहगृह में सोते थे और नहाने-धोने के लिए पब्लिक वाशरूम का इस्तेमाल करते थे. दिन का भोजन वह वेस्टर्न रेलवे के कैंटीन में करते थे. उनके साथ हमेशा एक छोटा सा बैग रहता था, जिसमें उनकी ज़रूरत का सामान होता था. उन्होंने कहा कि पूरे महीने के ख़र्च के लिए मुझे पांच सौ से कम रुपए की ज़रूरत पड़ती थी. मैं सिर्फ़ सौ रुपए ख़र्च करता था. अगटे अपने परिवार से मिलने छुट्टियों में ही जाते थे. उन्होंने कहा कि परिवार में पत्नी, बेटी और पोता को छोड़कर मेरी किसी से बात नहीं होती. उनके पास ऑफिस का नंबर था. रेलवे से विदाई के बाद अगटे को गोरेगांव के एक मंदिर में जॉब करने का ऑफर भी आया, लेकिन उन्होंने अपनी जीवन शैली को बदलने से इंकार कर दिया. उन्होंने कहा कि भविष्य में भी मैं अपनी इस जीवन शैली को बरकरार रखूंगा.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

क्या पाकिस्तान टूट कर बिखर जाएगा?

अमेरिकी ड्रोन हमले में बैतुल्लाह महसूद की मौत और हकीमुल्लाह महसूद के हाथ में तहरीक़-ए-तालिबान (पाकिस्तान) की हुकूमत आने से एक बात साफ़ है कि पाकिस्तान में तालिबान एक बार फिर से संगठित और मज़बूत हो रहा है. पाकिस्तान सेना की फाता और स्वात में तालिबान के सफाए की कार्रवाई पर सवालिया निशान लग रहे हैं. इतना ज़रूर है कि हकीमुल्लाह को तालिबान का मुखिया बनाए जाने के बाद तालिबान में वर्चस्व की लड़ाई कुछ समय के लिए टल गई है, लेकिन हमेशा के लिए नहीं. पाकिस्तानी तालिबान में हुए समझौते के मुताबिक़ हकीमुल्ला के कट्टर विरोधी माने जाने वाले वलीउर रहमान महसूद को दक्षिणी वजीरिस्तान में तालिबान की कमान सौंप दी गई है. यह वही इलाक़ा है जो पाकिस्तानी तालिबान का गढ़ है.

इसका यह मतलब नहीं कि पाकिस्तानी तालिबान आने वाले दिनों में अपने आंतरिक युद्ध में ख़त्म हो जाएगा. पाकिस्तान के भविष्य पर तालिबान का ख़तरा मंडरा रहा है और आने वाले दिनों में इस ख़तरे की तीव्रता और भी बढ़ सकती है. आज, अमेरिकी दबाव के चलते पाकिस्तानी सेना अपने इन जिहादी ताक़तों के ख़िलाफ़ जंग लड़ रही है. ऐसा कतई नहीं है कि पूर्व राष्ट्रपति परवेज़ मुशर्रफ़ ने पाकिस्तान को आतंकवादियों के चुंगल से बाहर निकालने के लिए कोई बीड़ा उठाया था. दरअसल, 11 सितंबर के बाद अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश ने साफ़ कह दिया था कि आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध में उसका दोस्त और दुश्मन बनने के अलावा कोई तीसरा विकल्प नहीं है. इसके साथ ही अमेरिका के तत्कालीन सेना प्रमुख एडमिरल मुलन ने सार्वजनिक तौर पर पाकिस्तान की ख़ुफ़िया एजेंसी आईएसआई को तालिबान से सांठगांठ के लिए ज़िम्मेदार ठहराया. इसके साथ ही, 26 नवंबर को मुंबई में हुए हमले के बाद, पाकिस्तान और भारत लगभग युद्ध की स्थिति में आमने-सामने आ गए थे. पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था जर्जर हालत में थी. ऊपर से तालिबान और अल-क़ायदा के आतंक की गिरफ़्त में जकड़ा पाकिस्तान. आज का यह पाकिस्तान सच कहें तो अपने अस्तित्व के ख़ात्मे की कगार पर खड़ा है. आज पाकिस्तान पर अमेरिकी ड्रोन मिसाइलें क़हर बरपा रही हैं. सैकड़ों बेगुनाह औरतें और बच्चे मौत का शिकार बन रहे हैं. हमलों में क़बायली इलाक़ों में रह रहे बलूच और पश्तूनों के साथ ही स्वात और फाता के क़बायली मौत का तांडव देख रहे हैं. इनके लिए अमेरिका और ड्रोन मौत का दूसरा नाम है. आज यही क़बायली इलाक़े तालिबान और अल-क़ायदा के आतंकियों के पनाहगार बने हैं. उनको पहले भी इस्लाम के नाम पर तालिबान का जिहाद नहीं पसंद था, लेकिन आज उनको अहसास है कि कम-से-कम जिहाद का क़हर उनके घरों पर नहीं बरस रहा था. बेवक़्त मौत का ख़ौफ़ उनको नहीं था.

क्या पाकिस्तान टूट कर बिखर जाएगा? यह सवाल पिछले साठ साल से अधिक समय से अलग-अलग रूप में सुर्ख़ियों में आता रहा है. एक के बाद एक राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तनों ने पाकिस्तान के वजूद को ख़त्म करने के कगार पर लाकर खड़ा कर देता है. अपनी किताब अनटोल्ड स्टोरी ऑफ इंडिया में हैरीसन ने इसका जवाब गहरे पानी पैठ निकालने की कोशिश की है. तवारीख़ गवाह है कि मार्च 1945 को ही विंस्टन चर्चिल और ब्रिटिश सेनाध्यक्ष को जिन्ना ने हर वह मुमकिन सहायता (सैन्य) देने की पेशकश की, जो नेहरू ठुकरा चुके थे. यह शायद पाकिस्तान बनाने की सहायता के बदले दी गई पेशकश थी. यह बात हालांकि भारतीय नेता जसवंत सिंह के बयान के विरोधाभास में है. जसवंत सिंह ने तो दावा किया है कि नेहरू और पटेल ही प्राथमिक तौर पर विभाजन के लिए ज़िम्मेदार थे और जिन्ना एक महान भारतीय थे. जसवंत का यह बयान ईशनिंदा सरीखा था, जिसकी क़ीमत भाजपा से निष्कासन के रूप में उनको चुकानी पड़ी. हैरीसन दलील देते हैं कि शुरुआत से ही पाकिस्तान एक कृत्रिम राष्ट्र रहा, जिसमें कई अलग नस्लीय समूहों को जबरन एक बनाया गया था, और इसे असफल होना ही था. बांग्लादेश की आज़ादी पाकिस्तान के बनने की कृत्रिमता की गवाह है. वजह यह कि धर्म अकेला वह तत्व नहीं जो राष्ट्रवाद की बुनियाद रख सके. यह कई अरब मुस्लिम देशों के अस्तित्व के संदर्भ में भी साफ है और ठीक उसी तरह कई पश्चिमी देशों में भी, जहां ईसाइयत परवान पर है.

बांग्लादेश की आज़ादी के बाद भी पाकिस्तान में पंजाबी, बलूच, पश्तून और सिंधी जनसंख्या है जिसमें पंजाबियों का वर्चस्व है. पंजाबियों के अलावा अन्य कुल जनसंख्या का 33 फ़ीसदी है और वे पाकिस्तान के 72 फ़ीसदी भू-वर्ग में फैले हैं. बलूचियों की शिकायत है कि उनके इलाक़ों से प्राकृतिक गैस बलूचिस्तान के बाहर भेजी जा रही है और उस गैस के व्यवसाय का प्रमुख फ़ायदा पंजाबियों को जा रहा है. वहीं ब्रिटिश दस्तावेज़ों और इतिहास में साफ दर्ज़ है कि ब्रिटिश शासन के पहले 1747 से ही पश्तूनियों का अफ़ग़ान साम्राज्य के अंदर एक स्वतंत्र राजनीतिक वजूद था. पश्तून इलाक़ों की सीमा पंजाब से लेकर सिंधु नदी तक थी. पश्तूनों को आज भी यह बात पचती नहीं कि ब्रिटिश शासकों ने उसके चालीस हज़ार मील इलाक़े पर क़ब्ज़ा कर उनकी जनसंख्या को दो हिस्सों में बांटते हुए डूरंड लाइन उनके दिल के बीचोंबीच खींच दी.

ब्रिटिश शासकों ने इसके बाद 1947 में एक विवादित सर्वेक्षण कराकर पूरा इलाक़ा पाकिस्तान के अधीन कर दिया. इस जनमत-सर्वेक्षण का पश्तूनियों ने पश्तूनिस्तान की मांग रखते हुए विरोध किया था क्योंकि आज़ाद पश्तूनिस्तान का विकल्प रेफेरेंडम में शामिल नहीं किया गया था. आज भी, अफ़ग़ानिस्तान डूरंड लाइन को दोनों देशों के बीच की अंतरराष्ट्रीय सीमा नहीं मानता.

फाता की गुत्थी पर हार्वर्ड विश्विद्यालय में डॉ हसन अब्बास शोध कर रहे हैं. उनके मुताबिक़, पश्तून कबाइलियों को इस बात का गर्व था कि वे अफ़ग़ानिस्तान से सोवियत संघ की सेना को भगाने के लिए अपनी ज़मीन पाकिस्तान सेना, आईएसआई और अमेरिकी सेना को दे रहे हैं. आईएसआई के कुछ बेदख़ल सिपहसालार इस बात को मानते हैं कि उस दौर में, इन इलाक़ों में लगभग अस्सी हज़ार लड़ाके तैयार किए थे. ये लड़ाके दुनिया के 43 देशों से थे. 1989 में सोवियत सेना की वापसी के बाद, इनमें से ज़्यादातर लड़ाके पाकिस्तान चले गए थे, ठीक उसी तरह, जैसे तालिबान के आतंकवादियों ने अमेरिकी सेना के हाथों अफ़ग़ानिस्तान में शिकस्त मिलने पर पाकिस्तान की सीमा में पनाह ले ली थी. आज यही काम अल-क़ायदा के आतंकवादी कर रहे हैं, हालांकि, पाकिस्तान सरकार इस बात को नकारती है कि वह आतंकवादियों को पनाह दे रही है. दुनियाभर के कई विश्लेषक पाकिस्तान की धर्म-निरपेक्षता से ज़्यादा उम्मीद नहीं रखते. दरअसल, पाकिस्तानी समाज का इस्लामीकरण क़बायली इलाक़ों में जनरल जिया उल हक़ के दौरान ही शुरू कर दिया गया था. जनरल जिया अफ़ग़ानिस्तान पर सोवियत हमले को भारत और सोवियत संघ की पाकिस्तान को तबाह करने की साज़िश के तौर पर देखते थे. और यही वजह, पाकिस्तान में लड़ाकों को तैयार करने की बताई जाती थी. इसी के चलते पाकिस्तानी सेना का इस्लामीकरण कर दिया गया. यह रणनीति, पूर्व राष्ट्रपति परवेज़ मुशर्रफ ने जारी रखी. मुशर्रफ को लगा कि अफ़ग़ानिस्तान पर अपना वर्चस्व बनाए रखने में और भारत से लड़ने के लिए धार्मिक कट्टरवाद का सहारा लेने में उनका फ़ायदा है. सोच यह थी कि इस्लामिक कट्टरवाद का सहारा लेने पर उसके पास धार्मिक अतिवादियों की मदद तो आएगी ही, साथ-साथ वह सेना के इस्लामिक कट्टरपंथियों की भी मदद लेते हुए दोनों पर ही अपनी पकड़ बनाकर रख सकते हैं.

जनरल कयानी, पाकिस्तान के मौजूदा सेना अध्यक्ष हैं. परवेज़ मुशर्रफ के शासन में वह आईएसआई प्रमुख थे. यही वजह पाकिस्तान सरकार की सेना पर पकड़ बनाने में सबसे बड़ी मुश्किल साबित हो रही है. पाकिस्तानी सेना अपनी सैन्य क्षमता के अलावा पाकिस्तान में कई व्यवसायिक हित है, जिनकी क़ीमत लगभग 38 हज़ार अमेरिकी डॉलर के आसपास आंकी जाती है. मुंबई पर 26 नवंबर को हुए आतंकी हमले ने भी यह बात साबित कर दी है कि पाकिस्तान का जैश-ए-मोहम्मद और लश्कर-ए-तैय्यबा पर प्रतिबंध महज़ एक छलावा है. यह शायद इसलिए किया गया हो,क्योंकि पाकिस्तानी सेना लश्कर और जैश को अपनी गिरफ्त में लेने में नाकाम हो रही हो. यहां तक की अमेरिका का दबाव भी पाकिस्तान के ऊपर काम नहीं कर रहा है. या फिर हो सकता है कि अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा में अफपाक में विशेष दूत रिचर्ड हॉलब्रुक इस बात से आश्वस्त हैं कि पाकिस्तान अल-क़ायदा के सफाए को दुनियाभर के साथ-साथ अपने देश के लिए भी ज़रूरी मान रहा है.

यहां एक बात पर ग़ौर करने की ज़रूरत है. पाकिस्तान आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध में शरीक होने के लिए क्यों तैयार हुआ? क्या वाकई पाकिस्तान इस बात को मानता है कि आतंकवाद उसके देश के लिए सर्वनाश का कारण बन सकता है, लिहाज़ा जल्द से जल्द आतंकवाद को ख़त्म करके देश को सुरक्षित कर लिया जाए. क्या वाकई पाकिस्तान को भारत से किसी तरह का ख़तरा है?

अफ़ग़ानिस्तान में शुरू हुए अमेरिकी हमले के बाद के अमेरिकी बयानों पर ग़ौर करें. एक तरफ जहां अमेरिका ने जर्मनी और फ्रांस की दलीलों के बावजूद, ब्रिटिश प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर की मदद से यूरोप में अतंकवाद के ख़िलाफ़ आमराय बना ली थी. उसी दौरान, भारत और अमेरिका के रिश्ते आर्थिक स्तर पर सहज हो रहे थे. आर्थिक स्तर पर चीन से अमेरिका को कड़ी चुनौती मिल रही थी और उसकी अपनी अर्थ व्यवस्था में मंदी के शुरुआती लक्षण मिलने शुरू हो गए थे. भारत सरकार भी अमेरिकी प्रस्ताव का इंतजार कर रही थी कि इस युद्ध में अमेरिका उसे भी किसी तरह से शामिल होने की पेशकश कर सकता है. लिहाज़ा, पाकिस्तानी राष्ट्रपति के सामने यह एक मुश्किल थी कि क्या वह आतंकवादियों की क़ीमत पर भारत को अमेरिका के साथ इस युद्ध में शामिल होने दे. वहीं पाकिस्तान पर अमेरिका का दबाव भी लगतार बढ़ रहा था. अमेरिकी विदेश मंत्री रिचर्ड आर्मिटेज साफ शब्दों में मुशर्रफ को धमकी दे चुके थे कि अगर पाकिस्तान इस युद्ध में अमेरिका के निर्देशों पर नहीं चलता और आतंकवाद के सफाए के लिए सामने नहीं आता तो वह पाकिस्तान पर हमला करके उसे पुरापाषाण काल में पहुंचा देगा. आज, तालिबान के ख़िलाफ़ लड़े जा रहे युद्ध के दौरान पाकिस्तान में धार्मिक उन्माद अपने चरम पर है. अमेरिका के हाथों अफ़ग़ानिस्तान में युद्ध हारने के बाद उपजे आक्रोश के साथ-साथ उसे अपने वजूद को बचाने की कवायद भी करनी है. तालिबान को यह साफ समझ में आ रहा है कि इस वक़्त पाकिस्तान ऐसे हालात में हैं, जिसमें तालिबान अपने वजूद को न केवल बनाने, बल्कि उसे और मज़बूत करने में भी सफल हो सकता है. पाकिस्तान में स्टेट नाम की संस्था का अंत हो चुका है. वह एक-दो नहीं, बल्कि अगणित समस्याओं से जूझ रहा है. ड्रग्स का काला कारोबार पाकिस्तान के क़बायली इलाक़ों में फल-फूल रहा है. अंतर्राष्ट्रीय स्तर के हथियारों के सौदागर, पाकिस्तान में अपनी दुकान लगाकर बैठे हैं. सेना के साथ-साथ आतंकवादियों को भी आखिर हथियारों की लंबी खेपों की ज़रूरत जो है. अंतरराष्ट्रीय समुदाय का भरोसा तो पाक पर नहीं के बराबर ही है, अब पाकिस्तान पर दबाव भी बढ़ता जा रहा है. अमेरिकी सहायता के दुरुपयोग और हथियारों की रीडिजाइनिंग का मसला भी तूल पकड़ता जा रहा है. ज़ाहिर तौर पर पाकिस्तान अपनी साख तो गंवा ही रहा है, उसके लिए सुकून की बात बस यह होगी कि वह अपना वजूद बचा ले.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

पंडवानी की नई आवाज़ बुधन बाइ मेश्राम

आदियोग

बुधन बाइ मेश्राम दलित हैं. वह महार समुदाय से हैं. दूसरे दलित समुदायों की तरह ज़्यादातर महार भी बेहद ग़रीब हैं. ज़ाहिर है कि महारों के पास भूमिहीन भी हैं. बुधन बाइ उन्हीं में से एक हैं. हालांकि, इनका दूसरा परिचय यह भी है कि पंडवानी की कलाकार हैं. ख़ास बात यह कि वह पंडवानी को कथ्य और शिल्प के लिहाज़ से नयी शक्ल देने की मुहिम पर हैं. वह कम पढ़ी-लिखी ज़रूर हैं, लेकिन जीवन के अनुभवों, समझदारी, संवेदनशीलता और रचनाशीलता के लिहाज़ से उच्च शिक्षित हैं. आज यह गीत दूर-दूर तक इनकी पहचान बन चुका है-छत्तीसगढ़ हा कहत हे, जियन दे हमन ला. हिंदुस्तान हा कहत है, आजादी दे हमन ला. उनके साथ हमने टुकड़ों में कई बार बातचीत की. उस बातचीत के आधार पर तैयार की गई उनकी जीवन की कहानी के कुछ प्रमुख अंश-

बचपन

तीसरी कक्षा की बात है. गांव में दस दिन के लिए कोई पंडवानी मंडली पहुंची. पंडवानी देखने मैं भी गई. पहले ही दिन मेरे सिर पर पंडवानी का भूत सवार हो गया. दूसरे दिन से ही पंडवानी के लिए मनाही हो गई. वजह यह कि माता-पिता दिहाड़ी मज़दूर थे. मेरा काम था- बरतन मांजना, लिपाई करना, पानी लाना और छोटे भाई-बहन को संभालना. हालांकि पंडवानी का जादू तो पीछे पड़ गया था.

रात का खाना-पीना हो जाता, पंडवानी तब शुरू होती और भोर में ख़त्म होती थी. परिवार सो जाता और मैं चुपके से पंडवानी के कार्यक्रम में पहुंच जाती. घर लौटती और माता-पिता के उठने से पहले अपना काम पूरा कर सो जाती. सोती तो सपना देखती कि गांव आई इस पंडवानी कलाकार के बजाय मंच पर मैं हूं. जागती तो पंडवानी कलाकार की नक़ल करती. मौक़ा मिलते ही सहेलियों और छोटे बच्चों को किसी कोने में जुटा लेती और बस, झाड़ू या डंडा, जो भी हाथ लगता, इसे तंबूरा मान कर शुरू हो जाती-पिछली रात जो कुछ भी देखा और याद रहा, उसे दोहराती, नाचती और गाती. जल्दी ही मेरे इस पागलपन की ख़बर आम हो गई. इसके लिए डांट भी पड़ी, दो-चार बार पिटी भी, लेकिन मैं कहां माननेवाली थी. पहले छुप कर पंडवानी गाती थी, अब खुल कर गाने लगी. बड़ों की तारीफ़ भी मिलने लगी और कभी-कभी इनाम भी. इससे मेरा हौसला बढ़ा और 10 साल की उम्र में इलाक़े की पंडवानी मंडली से जुड़ गई.

पढ़ाई

गांव में स्कूल नहीं था. पढ़ने दूसरे गांव जाना होता था. स्कूल भी अपनी ज़िद से गई. माता-पिता शिक्षा के महत्व से अनजान थे. फिर, मैं लड़की ठहरी. इनकी पुरानी सोच थी कि लड़की को दूसरे के घर जाना होता है, पढ़ाई से क्या लाभ- पढ़ाई से लड़कियों का दिमाग़ ख़राब हो जाता है. मैं पढ़ना चाहती थी और पंडवानी भी गाना चाहती थी. पंडवानी मंडली से जुड़ी तो स्कूल से नाता टूट गया और मैं तीसरी कक्षा पार नहीं कर सकी. पढ़ाई जारी रह सकती थी, लेकिन परिवार का दबाव था कि एक इच्छा तो पूरी हो ही रही है, बाक़ी समय घर में रहूं, घर-खेत में भी मन लगाऊं. ससुराल जाकर क्या नाक कटानी है.

विवाह के बाद

16 साल की उम्र में शादी हो गई. तब तक मुझे नहीं मालूम था कि 18 साल की उम्र से पहले लड़की की शादी करना क़ाननून अपराध है या कि कम उम्र में मां बन जाना मां और बच्चे की सेहत के लिए ठीक नहीं होता. शादी की ख़ुशी भी थी और यह ख़तरा भी कि कहीं पंडवानी मेरे लिए अधूरा सपना न रह जाए. पहली संतान आने तक मैं चुप रही, लेकिन इसके बाद मैंने पंडवानी नहीं छोड़ने की ज़िद पकड़ ली. आख़िरकार, पति ने समझौता कर लिया और मुझे पंडवानी में वापस लौटने की इजाज़त दे दी. इस तरह कोई डेढ़ साल की रुकावट के बाद पंडवानी का सिलसिला फिर चल निकला.

पति से अलगाव और पंडवानी से दूरी

इस बीच पति की शराबखोरी, जुआरीपन और मारपीट से मैं तंग आने लगी. मेरे चरित्र पर भी संदेह किया जाने लगा. कलह बढ़ने लगी और विद्रोह की भावना भी जागने लगी. तीसरे बच्चे के बाद मैं ससुराल से अलग हो गई. तीनों बच्चों के साथ ससुराल से निकली तो मायके भी नहीं गई. अंबागढ़ चौकी से क़रीब छह किलोमीटर दूर केसरीटोला से गांव के बाहर बड़ी बहन के पति की थोड़ी सी ज़मीन थी. वहीं पर बसेरा जमाया. कमरतोड़ मेहनत की और धीरे-धीरे खपरैल का घर बना लिया.

पंडवानी

पंडवानी महाभारत की कथा का संगीत रूपक है. फ़िलहाल, कोई 40 साल से कथावाचक की भूमिका में महिलाएं हैं. इतनी महत्वपूर्ण भूमिका के बावजूद सच यह है कि दूसरे बाक़ी कलाकारों की तरह पंडवानी गायिकाएं भी केवल दिहाड़ी की मज़दूर होती हैं. मंडली का संचालक कार्यक्रमों का ठेकेदार होता है और अधिकतर संचालकों का महिला कलाकारों के प्रति नज़रिया ठीक नहीं होता. वे कला और श्रम के साथ इसके शरीर पर भी नज़र गड़ाते हैं.

पंडवानी महाभारत की कथा का संगीत रूपक है. फ़िलहाल, कोई 40 साल से कथावाचक की भूमिका में महिलाएं हैं. इतनी महत्वपूर्ण भूमिका के बावजूद सच यह है कि दूसरे बाक़ी कलाकारों की तरह पंडवानी गायिकाएं भी केवल दिहाड़ी की मज़दूर होती हैं. मंडली का संचालक कार्यक्रमों का ठेकेदार होता है और ज़्यादातर संचालकों का महिला कलाकारों के प्रति नज़रिया ठीक नहीं होता. वे कला और श्रम के साथ इसके शरीर पर भी नज़र गड़ाते हैं.

पंडवानी मेरी कमज़ोरी रही है, मजबूरी नहीं. और इसीलिए मैंने अपने सपने को पीछे कर दिया और बच्चों का पेट पालने के लिए पंडवानी छोड़ इधर-उधर मज़दूरी में लग गई. कुछ मंडलियों के नेकदिल संचालकों से भी पहचान हो चुकी थी और जो चाहते थे कि मैं इनकी मंडली में काम करुं. लेकिन पति के आरोप को मैं और आग नहीं देना चाहती थी. पति से अलग रह रही महिला को समाज भी तो शक़ की नज़र से देखता है. इस तरह पंडवानी कार्यक्रमों से मैं दूर हो गई, लेकिन इसकी टीस नहीं मिट सकी.

ज़िंदगी का अनूठा मोड़

ज़िंदगी जैसे-तैसे गुज़र रही थी कि जुलाई 08 में निर्मल आग्रह अभियान से जुड़ी महिलाओं से मुलाकात हुई. यह अभियान राजनांदगांव जिले के अंबागढ़ चौकी ब्लॉक में इस संदेश का प्रचार करने के लिए था कि एकजुटता और साझा पहल से ही घर, समाज और गांव की तस्वीर बदल सकती है. यह जानकर बहुत अच्छा लगा कि अभियान महिलाओं की अगुआई में भिक्षाटन के सहारे चलाया जा रहा है. अभियान से जुड़ने का न्योता मिला तो मैं रो पड़ी. मैंने कहा कि मैं आठ सालों से पिंजरे में बंद मैना थी, जो गाना भूलने लगी थी. पिंजरा खुल गया है और मैना उड़ने को तैयार है. अगले दिन ही मैं अभियान दल में शामिल हो गयी.

अभियान के तहत 25 सितंबर 08 से रायपुर तक की सात दिन की पदयात्रा निकली. मैंने अभियान के संदेश को पंडवानी में ढाला और अरसे बाद अपना तंबूरा उठाया. मुझे इतना सम्मान मिला कि जिसकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी. तब, पहली बार मैंने खुद को जाना. लगा कि जैसे मेरा पुनर्जन्म हो रहा है.

अभियान के दौरान

मैंने महसूस किया कि समाज को बदलना है तो इसके लिए खुद को भी बदलना है, अशिक्षा का धब्बा मिटाना है. मैंने पांचवी परीक्षा के लिए फार्म भरा. अभियान में काम करते हुए परीक्षा की तैयारी भी करती रही और पास हुई. अब इच्छा कम से कम इंटर करने की है.

अभियान के बाद

अभियान 31 दिसंबर 08 को समाप्त हो गया. इसके बावजूद पांच साथियों ने अभियान के संदेश को ज़मीन पर उतारने के लिए आगे भी डटे रहने का फ़ैसला किया. हम पांचों महिलाएं हैं-दो आदिवासी, दो दलित और एक पिछड़ी जाति की. हमें पांच पांडव का संबोधन मिला. हमने इसी साल जनवरी में ग़रीब समुदायों के चुनिंदा लोगों के साथ बातचीत रखी. इसमें तीन चौथाई से भी अधिक महिलाएं थीं. बातचीत के नतीजे के तौर पर ग़रीबों के स्थानीय संगठन जुरमिल मोर्चा की नींव पड़ी.

जुरमिल मोर्चा की ओर से हमने फरवरी में अकाल और पलायन का मुद्दा उठाया और फेमाइन कोड लागू किए जाने की मांग की. इस मांग पर सरकार नहीं हिली-डुली, तो भोजन त्याग सप्ताह का आयोजन किया कि सरकार को समझ आए. इसकी शुरुआत 1 मई को मज़दूर दिवस से हुई थी. इस बीच हम रायपुर सत्याग्रह के भी हिस्सेदार बने. दूसरे जन संगठनों और आंदोलनों से मेलजोल हुआ.

आश्रम के लिए कोठार (धान रखने की जगह) का सहयोग मिला, जिसे हमने रहने लायक़ बनाया और इसे नया रूप दिया. साथ ही देसी शौचालय भी बनाया. गड्ढा खोदा और इस पर लकड़ी की बनी सीट जमा दी. इसे मूंज-बांस के टट्टर से घेर दिया. इस्तेमाल करो और इस पर राख डाल दो. राख दुर्गंध फैलानेवाले कीड़ों को मार देती है और मल की नमी सोख कर इसे जल्दी सड़ा देती है. पानी की बचत करो और गड्ढा भरने के छह माह बाद बढ़िया खाद भी उठा लो. पांगरी समेत टाटेकसा ग्राम पंचायत में हमारा शौचालय अभी तक का पहला है.

अब, अगली 2 अक्तूबर को पंचायत स्तर पर सात किलोमीटर की पदयात्रा की तैयारी है. इसकी अगुआई बच्चे करेंगे. 6 अक्तूबर को विस्थापन के ख़िलाफ़ रायपुर में आयोजित रैली के हिस्सेदार हम भी हैं. इसकी भी तैयारी जारी है.

नई पंडवानी

अभियान ने यह चेतना जगाई कि अपने लिए पशु-पक्षी भी जी लेते हैं, मजा तो तब है कि दूसरों के लिए भी जिया जाए. पहले से बने रास्तों पर तो सब चल लेते हैं, कमाल तो यह है कि अपनी पगडंडी खुद बनाई जाए.

मैंने ठान लिया कि कौरव-पांडव की वही पुरानी कथा बंद, अब आज की महाभारत कहनी है. न्याय और अधिकार की आवाज़ उठाने के लिए नई पंडवानी तैयार करनी है. ग़रीब और दुखियारे आज के पांडव हैं. इनमें सबसे बड़ी संख्या दलित, आदिवासी और अल्पसंख्यक समुदायों की है. कौरव सेना में सरकार, कंपनियां, दलाल और भ्रष्ट अफ़सर वगैरह हैं. आज की असली महाभारत का सीन एकदम उल्टा है. कौरव पांच हैं तो पांडव हज़ार. फिर भी पांडव दबे-कुचले हैं. हमेशा छले जाते हैं. विकास के नाम पर अपनी ज़मीन, जंगल, पहाड़, नदी से बेदखल कर दिए जाते हैं. ग़लत नीतियों के कारण खेती चौपट हो रही है. ग़रीबों के भले के लिए बनायी गयी योजनाएं अक्सर भरे पेटवालों की सेवा में लग जाती हैं. हर परिवार को मिली सौ दिन के काम की कानूनी गारंटी तक घपलों में ख़त्म हो रही है.

एक बात और. टीवी-वीडियो के बढ़ते चलन ने पंडवानी को पीछे ढकेलने की शुरुआत कर दी है. नाचा भी ग़ायब हो रहा है. लोक कलाएं तभी बचेंगी, जब मौजूदा समय से अपना नाता जोड़ेंगी और तौर-तरीक़ा बदलने को भी तैयार होंगी. नयी पंडवानी इसलिए भी ज़रूरी है.

feedback@chauthiduniya.com

साफ़-स्वच्छ हाथ, बेहतर स्वास्थ्य का राज़

फोटो-*प्रभात पाण्डेय*

रीतिका सोनाली

देश इन दिनों स्वाइन-फ्लू के आतंक से दहशत में है. इसके ख़ौफ़ का अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है कि, ज़रा सी सर्दी-खांसी हुई नहीं कि इसकी जांच के लिए लोग अस्पताल में लंबी कतार में नज़र आने लगते हैं. वक़्त-बेवक़्त कई दूसरे फ्लू के आने से रातों की नींद पहले ही उड़ी रहती है. एसोचैम की रिपोर्ट कहती है कि भारत में बीमारियों की प्रकृति में व्यापक बदलाव आया है. 1950 से 1990 के दशक तक जहां संक्रामक रोग शायद ही महामारी की शक्ल अख्तियार करते थे. वहीं अब शहरीकरण, औद्योगिकरण, वैज्ञानिक विकास और सामाजिक-व्यवस्था के तौर-तरीक़ों में बदलाव के साथ-साथ बीमारियों का स्तर तो व्यापक हुआ ही, इसका स्वरूप भी बदल गया. आज मोटापा, डायबिटीज़ जैसी बीमारियां हमारे लाइफस्टाइल को काफी प्रभावित कर रही हैं. जहां पोलियो, चेचक, टेटनस जैसी बीमारियों पर हमने लगभग फ़तह पा लिया है, वहीं एचआईवी-एड्स, डेंगू, फ्लू जैसी संक्रामक बीमारियां रह-रह कर अपना प्रकोप दिखलाने लगी हैं.

साल 2005 के आंकड़ों के मुताबिक़ भारत में संक्रामक रोगों से मरने वालों की कुल संख्या 29 फ़ीसदी है और चिंता की बात यह है कि यह संख्या बढ़ती जा रही है. जिसकी मुख्य वजह है विभिन्न प्रकार की फ्लू से होने वाली बीमारियों में इज़ाफ़ा होना. यदि मुख्य वजहों पर ध्यान दें तो सबसे बड़ी वजह है, हाइज़िन यानी स्वच्छ रहने में लापरवाही बरतना. जबकि संक्रामक बीमारियों से बचाव का इलाज ही है-स्वच्छता. इस लिहाज़ से खाने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले भोजन की शुद्धता व स्वच्छता, आस-पास के वातावरण, दैनिक इस्तेमाल की चीज़ें और हमारे हाथों की स्वच्छता (जिससे हम किसी चीज के संपर्क में आते हैं) काफी महत्वपूर्ण हो जाती है. आमतौर पर देखा गया है कि बाक़ी चीज़ों के प्रति तो हम सजग रहते हैं लेकिन लापरवाही दिखती है हाथों की सफाई में,जो कि सबसे अहम है.

ग्लोबल हाइज़िन काउंसिल और डेटॉल द्वारा कराए गए सर्वेक्षण के मुताबिक़ भारतीय, हाथों की स्वच्छता के प्रति काफी लापरवाह होते हैं. साथ ही,

- केवल 42 प्रतिशत भारतीयों को ही यह लगता है कि फ्लू और संक्रमण रोकने के लिए हाथों की स्वच्छता एक कारगर हथियार है.
- खांसने-छींकने के बाद 29 प्रतिशत भारतीय हाथों को ठीक से साफ नहीं करते हैं.
- 70 प्रतिशत भारतीय साबुन से हाथ धोने के सही तरीक़े (कम से कम 20 सेकेंड तक) का पालन नहीं करते हैं.
- 26 प्रतिशत भारतीय यह नहीं मानते कि छींकते-खांसते वक़्त मुंह और नाक को ढंकने से फ्लू और सर्दी जैसी बीमारियां दूर हो सकती हैं.
- 70 प्रतिशत लोग ज़्यादातर इस्तेमाल होने वाली चीज़ों जैसे फोन, जूते-चप्पल इत्यादि के इस्तेमाल के बाद हाथों को साफ करने में यक़ीन नहीं रखते.
- नौ प्रतिशत भारतीय केवल पानी से हाथ धोकर ही काम चला लते हैं.
- इसके अलावा पांच में से तीन अभिभावकों यानी 59 प्रतिशत माता-पिता ने स्वीकार किया कि उनके बच्चे दोपहर या रात के खाने के बीच नाश्ते के दौरान, पहले या बाद में हाथ नहीं धोते.

जबकि हाइज़िन काउंसिल के भारतीय प्रतिनिधि व पुष्पांजली क्रॉसले अस्पताल के माइक्रो-बायलॉजी एंड इम्यूनोलॉजी एंड इंफेक्शन कंट्रोल कमेटी के चेयरमैन डॉ नरेन्द्र सैनी के मुताबिक़ छींकने-खांसने के दौरान एहतियात बरतने से हम कई संक्रामक बीमारियों से बच सकते हैं. ग़ौरतलब है कि खांसते या छींकते समय क़रीब 19,500 कीटाणु हमारे मुंह से बाहर आते हैं और ध्यान देने की बात है कि 24 घंटे तक जीवित भी रहते हैं. इनकी तादाद जाड़े के मौसम में और भी अधिक हो जाती है और ये अधिक समय तक जीवित भी रह सकते हैं.

साल 2005 के आंकड़ों के मुताबिक़ भारत में संक्रामक रोगों से मरने वालों की कुल संख्या 29 फ़ीसदी हैं और चिंता की बात यह हैं कि यह संख्या बढ़ती जा रही हैं. जिसकी मुख्य वजह हैं विभिन्न प्रकार की फ्लू से होने वाली बीमारियों में इज़ाफ़ा होना. यदि मुख्य वजहों पर ध्यान दें तो सबसे बड़ी वजह हैं, हाइज़िन यानी स्वच्छ रहने में लापरवाही बरतना. जबकि संक्रामक बीमारियों से बचाव का इलाज ही हैं-स्वच्छता.

इस सर्वे के मुताबिक़ पूरी दुनिया में 50 फ़ीसदी बीमारियां केवल संक्रमण से ही होती हैं.

डॉक्टरों के सुझाव के मुताबिक़ हाइज़िन(स्वच्छता) बरतने के लिए इन बातों का विशेष ख्याल रखना चाहिए-

- थोड़ा-सा साबुन हाथ में लेकर घिसें. इस दरम्यान अंगुलियों के बीच में, नाखुनों में, और हाथ को दोनों ओर घुमा कर साफ़ करें.
- हाथ धोने के बाद उसे साफ तथा सूखे तौलिए से पोंछे.
- खांसते व छींकते वक़्त ध्यान रखें कि आपके मुंह से रोगाणु आसपास न फैलें, खांसते या छींकते समय टिश्यू पेपर या रूमाल का प्रयोग करें ताकि रोगाणु कम से कम फैले. इस्तेमाल हो चुके ट्रिश्यू को तुरंत फेंक दें और रूमाल को ख़ुद और दूसरों से दूर रखें.
- अपने मुंह, नाक और आंखों को हाथों से छूने से बचें, क्योंकि हमारे हाथों के ज़रिए सबसे ज़्यादा क्रॉस कंटामिनेशन यानी प्रतिकूल संपर्क प्रभाव होता है. इसलिए हर परिस्थितियों में हाथ धोना बेहद ज़रूरी है.

इन सबके अलावा खाने या बच्चों को खिलाने, कॉन्टेक्ट लैंस लगाने, फर्स्ट-एड या किसी भी प्रकार की दवा देने से पहले, टॉयलेट के बाद या बच्चे की नैपी बदलने पर, मुंह, नाक और आंखों को हाथों से छूने, पालतू जानवरों या रोगियों के संपर्क में आने के बाद अपने हाथों को अच्छी तरह से धो लेना चाहिए.

इस तरह ज़रा सी रोकथाम और फ्लू एंव वायरल इंफेक्शन जैसी बीमारियों के प्रति सावधानी बरत कर इन जानलेवा बीमारियों से बचा जा सकता है.

ritika@chauthiduniya.com

स्वास्थ्य क्षेत्र में बहुत कुछ करना बाक़ी

मेडिकल टूरिज़्म के क्षेत्र में हमारा देश शीर्ष पर क़ाबिज़ है. यूरोप और अमेरिका तक से लोग इलाज कराने यहां आ रहे हैं. यह हक़ीक़त है कि हमारे देश की चिकित्सा पद्धति का कोई सानी नहीं है. अमेरिका और यूरोपीय देशों से आनेवाले ज़्यादातर लोग आयुर्वेदिक उपचार, दंत चिकित्सा, हृदय सर्जरी, कॉस्मेटिक सर्जरी, आर्थोपेडिक सर्जरी, नी (घुटना) ट्रांसप्लांट के लिए आते हैं. इसकी ख़ास सुविधा देश के कई अस्पतालों में मौजूद है. इन सुविधाओं से लैस अस्पतालों में दिल्ली का एम्स, अपोलो हॉस्पिटल, क्रिस्चियन कॉलेज एंड मेडिकल हॉस्पिटल, टाटा मेमोरियल हॉस्पिटल, इंद्रप्रस्थ मेडिकल कॉर्पोरेशन, इंस्टीट्यूट ऑफ कार्डियोवसक्युलर डिजीज़, अरविंद आई हॉस्पिटल, कलारी कोविलम, के जी हॉस्पिटल, वोकहार्ड हॉस्पिटल, आयुर्वेदग्राम आदि प्रमुख हैं.

आंकड़ों के मुताबिक़ साल 2007 में तक़रीबन 2,72,000 टूरिस्ट भारत में मेडिकल टूरिज़्म के लिए आए और इससे भारत को 656 मिलियन अमरीकी डॉलर का फ़ायदा हुआ है. इस लिहाज़ से देखें तो, स्वास्थ्य के क्षेत्र में भारत की तरक़्क़ी क़ाबिल-ए-तारीफ़ है. लेकिन ज़मीनी हक़ीक़त कुछ और ही है. जहां एक ओर लोग अपने इलाज के लिए भारत आ रहे हैं, वहीं दूसरी ओर आलम यह है कि देश पर्याप्त डॉक्टरों की कमी की समस्या से जूझ रहा है. ग़ौरतलब है कि 12 अप्रैल 2005 को प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का उद्घाटन करते हुए, इसे गांव-गांव तक पहुंचाने की बात कही थी ताकि ग्रामीण जनता भी स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ उठा सके. इस मिशन के तहत महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य को ख़ास तरजीह दी गई और इसके लिए आशा-एक्रेडिटेड महिला हेल्थ एक्टिवीस्ट जैसी पंचायत स्तर की कई योजनाएं भी लागू की गईं. हालांकि आम लोगों तक स्वास्थ्य-सुविधाओं की पहुंच की सरकारी प्रयासों की ज़मीनी हक़ीक़त की हवा एसोचैम की रिपोर्ट ने निकाल दी. इस रिपोर्ट के मुताबिक़ पूरे देश में चल रहे इन सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों में 50 फ़ीसदी डॉक्टरों के पद ख़ाली पड़े हैं. साथ ही ये केंद्र 59.2 फ़ीसदी सर्जन, 46.4 फ़ीसदी महिला एवं प्रसूति रोग विषेशज्ञ, 56.6 फ़ीसदी चिकित्सक और 51.9 फ़ीसदी बाल रोग विशेषज्ञ की कमी की समस्या से भी जूझ रहे हैं. जहां तक सामुदायिक केंद्रों की बात है तो देश भर में आम लोगों तक स्वास्थ्य सुविधा मुहैया कराने के लिए लगभग साढ़े चार हज़ार सेंटर खोले गए हैं जबकि साल 2009 के अंत तक 2525 सेंटर और खोले जाने थे. लेकिन सरकार की यह योजना अभी काग़ज़ों की धूल ही फांक रही है. तरक़्क़ी बस इतनी हुई है कि साढ़े चार हज़ार केंद्रों में से 5.6 प्रतिशत बिना डॉक्टर के ही चल रहे हैं तो 40 फ़ीसदी में लैब टेक्नीशियन ही नहीं हैं. कई जगह स्थिति यह है कि यदि डॉक्टर है तो दवा नहीं. महिलाओं के लिए विशेष योजना चलाने की सच्चाई यह है कि इन केंद्रों पर 8.8 प्रतिशत महिला स्वास्थ्य कर्मचारियों के ही पद ख़ाली हैं, वहीं ये केंद्र 32 फ़ीसदी पुरूष स्वास्थ्य कर्मचारियों की कमी से भी जूझ रहा है. एसोचैम के रिपोर्ट की मानें तो प्राइमरी हेल्थ सेंटर पर 13.8 प्रतिशत महिला और 22.1 प्रतिशत पुरूष कर्मचारियों की कमी है. जबकि सब सेंटरों की हालत तो और भी खस्ता है, जहां क़रीब 5 फ़ीसदी सेंटर पर एक भी महिला स्वास्थ्य कर्मचारी नहीं है तो 37.2 प्रतिशत सब सेंटर बिना पुरूष स्वास्थ्य कर्मचारी के ही चल रहे हैं. लापरवाही का दिलचस्प नमूना तो देखिए कि 4.7 फ़ीसदी सबसेंटर किसके भरोसे चल रहे हैं, किसी को कुछ लेना-देना नहीं. मतलब इन केंद्रों पर एक स्वास्थ्य कर्मचारी नहीं हैं. जब हक़ीक़त यही है तो, ऐसे में इन योजनाओं के लिए हवाई-क़िले बनाने से क्या फ़ायदा, क्योंकि इनसे कितने लोगों को स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ होगा, यह सभी जानते हैं.

एक नज़र इन केंद्रों की स्थिति पर डालें तो, देश के 50 प्रतिशत सब सेंटर, 76 प्रतिशत प्राइमरी हेल्थ सेंटर और 91 प्रतिशत सेंट्रल हेल्थ सेंटर्स सरकारी इमारतों में है. इसके अलावा बाक़ी सभी स्वास्थ्य केंद्र या तो किराए के भवनों में अथवा मुफ़्त दी गई ग्रामीण पंचायत या स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा दी गई इमारतों में बनाए गए हैं. जबकि 66382 सब सेंटर्स और 3618 पब्लिक हेल्थ सेंटर्स के लिए 199 इमारतों का निर्माण होना अभी बाक़ी ही है. एसोचैम के अध्यक्ष सज्जन जिंदल के मुताबिक़ इस पूरी रिपोर्ट से ज़ाहिर है कि सरकार आम लोगों के स्वास्थ्य के लिए कितना चिंतित है. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के सरकारी दावों में सभी सबसेंटर्स को 10,000 रूपए सालाना मुफ़्त देने की बात कही गई थी. आर्थिक सहायता की बात तो तब आती है जब स्वास्थ्य केंद्रों पर मरीजों के लिए स्वास्थ्य कर्मचारी उपलब्ध हों. एसोचैम की रिपोर्ट में अस्पतालों और स्वास्थ्य केंद्रों के आंकड़ों में केवल दूर-दराज़ के गांव ही शामिल नहीं हैं बल्कि बड़े-बड़े शहरों जैसे दिल्ली, मुंबई आदि महानगरों के आस-पास के इलाक़ों की भी यही हालत है. इन्हीं गांवों से सटे हैं वो शहर जहां बड़े-बड़े अस्पतालों में विदेशी, इलाज की तमाम विश्वस्तरीय सुविधाओं का लाभ उठाते हैं जबकि गांवों के बदनसीब बीमारों को प्राथमिक स्वास्थ्य की भी सुविधा नहीं मिल पाती है. इन बड़े अस्पतालों की हक़क़ीत यह है कि ग़रीबों के मुफ़्त इलाज के नाम पर ये सरकार से रियायती दरों पर ज़मीन लेने के बाद अपना वादा भूल जाते हैं. ऐसा एक मामला 22 मार्च 2007 को सामने आया. जब राजधानी दिल्ली के सभी निजी अस्पतालों को कम क़ीमत पर ज़मीन दी गई ताकि वो ग़रीबों का मुफ़्त इलाज करें, ऐसा नहीं करने पर इनके ख़िलाफ़ कड़ी कार्रवाई की जाएगी. इस संदर्भ में अपोलो अस्पताल की कहानी देखें तो सरकार को दी रिपोर्ट में इसने बताया कि ग़रीबों के इलाज के लिए यहां डॉक्टरी फीस और बेड का शुल्क नहीं लिया जाता है. लेकिन असल कहानी कुछ और ही है, एक्सरे के लिए एक सौ बीस और एमआरआई के लिए छह हज़ार रूपए तक वसूले गए और यदि आप लीवर ट्रांसप्लांट कराना चाहते हैं तो 12 लाख रूपए चुकाने पड़ेंगे. जबकि नियम के मुताबिक़ 600 बेड वाले वातानुकूलित अस्पताल में कम से कम 200 बेड ग़रीबों के लिए होना ज़रूरी है. लेकिन ये सारे सरकारी निर्देश अस्पताल की फाइलों में दबे पड़े हैं और ग़रीबों के नाम पर अछूता सा एक अलग जनरल वार्ड बना दिया गया है. ज़ाहिर सी बात है इनमें किसी प्रकार की कोई ख़ास सुविधा नहीं दी जाती है. इन सबके बीच ग़ौर करने वाली बात है कि जो देश मेडिकल टूरिज़्म के क्षेत्र में अव्वल है, वही अपने देश के ही लोगों को प्राथमिक स्वास्थ्य की भी सुविधा मुहैया कराने में असक्षम है. चिंता की बात तो यह है कि सरकार भी पूरे मसले पर लचर और और ढुलमुल रवैया अख्तियार किए हुए है. मेडिकल टूरिज़्म को जो प्रोत्साहन मिल रहा है! इन हालातों को देखकर लगता है कि एक ख़ूबसूरत ख्वाब दिखाने के बाद सरकार जैसे सो गई है. या अब तक उठाए गए क़दम कहीं एक छलावा भर तो नहीं था. कहते हैं भारत गांवों में बसता है और आलम यह है कि इनके स्वास्थ्य के प्रति ऐसी लापरवाही देखकर भी हम फूले नहीं समाते कि 2012 तक हमारे देश का मेडिकल टूरिज़्म बाजार 2.5 बिलियन अमरीकी डॉलर के मुनाफ़े को भी पार कर लेगा.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

इमिग्रेशन में सुधार पहली प्राथमिकता : के मोहनदास

उनकी सादगी, सौम्य व्यवहार और कर्तव्यपरायणता को भारतीय नौकरशाही में अर्से से आदर्श माना जाता रहा है. के मोहन दास केरल काडर के 1974 बैच के आईएएस अधिकारी हैं. उन्होंने मिनिस्ट्री ऑफ ओवरसीज़ इंडियन अफेयर्स में चार फरवरी 2008 को बतौर सचिव कार्यभार संभाला. के मोहनदास का जन्म 18 फरवरी 1952 को केरल में हुआ था. उन्होंने केरल विश्वविद्यालय से रसायनशास्त्र में स्नातक और स्ट्रैटक्लाइड विश्वविद्यालय, यूनाइडेड किंग्डम से वित्त में मास्टर डिग्री हासिल की. उन्हें कॉरपोरेट फाइनांस, सार्वजनिक व्यय और प्रोजेक्ट प्रबंधन में विशेषज्ञता हासिल है. भारतीय प्रशासनिक सेवा में उनका शानदार करियर रहा है, साथ ही वित्त, उद्योग व वाणिज्य, शिक्षा और शहरी विकास के क्षेत्र में भी उन्हें काफी अनुभव है. इससे पहले वह कई महत्वपूर्ण ज़िम्मेदारियां संभाल चुके हैं. अंजुम ए ज़ैदी और एस रिज़वी द्वारा लिए गए साक्षात्कार में उन्होंने कई महत्वपूर्ण मसले पर बातें की. साथ ही उड़ीसा में एक अधिकारी द्वारा आत्महत्या के बाद उनके मंत्रालय में छाए रहे मसले पर भी...

जब से एक पीओई ने आत्महत्या की तब से आपका मंत्रालय ख़ासा चर्चा में रहा. आपकी तत्कालिक प्राथमिकता क्या है ?

मंत्रालय की सर्वोच्च प्राथमिकता आव्रजन प्रणाली में सुधार करना है. फ़िलहाल, हम 1983 के आव्रजन अधिनियम का ही पालन कर रहे हैं. मतलब कि यह पुराना हो चुका है और हमें इसकी जगह आधुनिक नियम लाने की ज़रूरत है. इसके लिए हमने एक इमिग्रेशन मैनेंजमेंट बिल का मसौदा भी तैयार किया है. जिसे संसद के अगले सत्र में पेश किया जाएगा. और आशा है इसे जल्द ही स्वीकृति मिल जाएगी. यह अधिनियम आप्रवास प्रक्रिया में लचीलापन लाएगा. इससे संबंधित सभी चीज़ों को पारदर्शी रखा जाएगा. साथ ही इन सुधारों के लिए आव्रजन की प्रक्रिया कुछ इस तरह हो कि, यह सुरक्षित हो, अनियमित और अवैध प्रवास न हो सके. इसके अलावा हमें यह भी सुनिश्चित करनी चाहिए कि यह पूरी प्रकिया भ्रष्टाचार से मुक्त हो और कमज़ोर वर्गों के पहुंच में हो. इन सभी बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए हमने एक आप्रव-ासन सुधार दस्तावेज़ तैयार किया और उम्मीद है कि यह इन सभी मसलों से निपटने में कारगर होगा.

इस अधिनियम को संसद में पेश करने और नियम बनने तक, इस संबंध में आपकी तात्कालिक योजना क्या है?

भर्ती करने वाले एजेंट को इसके प्रति और अधिक जवाबदेह बनाया जाएगा. इसका मतलब यह कि दस्तावेज़ की जांच सहित रोज़गार अनुबंध, पावर ऑफ एटर्नी के साथ ही अन्य भी दस्तावेज़ों को पीओई कार्यालय भेजा जाएगा. भर्ती एजेंट को इन सभी दस्तावेज़ों की गहनता से जांच करनी होगी और उसके बाद ही उन्हें मंजूरी दी जाएगी. इसका मतलब यह हुआ कि अगर कोई भी प्रवासी ग़लती की वजह से मुसीबत में फंसता है तो इस लापरवाही के लिए भर्ती एजेंट को ज़िम्मेदार ठहराया जाएगा. दरअसल हाल ही में आव्रजन नियमों में संशोधन किया गया है, जिसके तहत रिक्रूटिंग(भर्ती) एजेंट 20 लाख रूपए की बैंक गारंटी देंगे और यह सरकार के साथ सुरक्षा राशि (ज़मानत) का क़रार है, जो रिक्रूट एजेंट के कामकाज की निगरानी के लिए दिया जाता है. हम भर्ती के इस पूरे व्यवसाय को प्रोफेशनल बनाने की कोशिश कर रहे हैं. हमने रिक्रूटिंग एजेंट के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम भी शुरू किए हैं. फ़िलहाल यह स्वैच्छिक है, लेकिन बाद में रिक्रूटिंग एजेंट इस व्यवसाय के लिए इसकी अहमियत भी समझेंगे. हम उनके लिए रेटिंग प्रणाली भी लाने की कोशिश कर रहे हैं. स्वतंत्र एजेंसियों द्वारा दिए गए रेटिंग का अलग दर्ज़ा होगा, जिससे इस व्यवसाय को व्यवसायिक बनाने में काफी मदद मिलेगी.

भारतीय कामगारों की रक्षा के लिए कौन से क़दम उठाए गए हैं ?

भारतीय कामगारों के हितों की रक्षा के लिए कई क़दम उठाए जा रहे हैं. हमने खाड़ी के देशों के अलावा सऊदी अरब और मलेशिया की सरकारों के साथ एमओयू पर हस्ताक्षर किए हैं. इसलिए इन समझौतों और संयुक्त कार्य समूह करार में उल्लेखित पहलुओं के आधार पर, हम उम्मीद करते हैं कि जब समस्याएं सामने आएंगी तो सारे मसले जल्दी और बेहतर तरीक़े से सुलझा लिए जाएंगे. प्रोटेक्टर जनरल ऑफ इमिग्रेंट्स कार्यालय इस

मंत्रालय का हिस्सा है और यह पीओई मामलों की निगरानी काफी बारीक़ी से करता है. पांडा और उसके परिवार से जुड़ा चेन्नई मामला एक दुखद घटना है और सीबीआई की रिपोर्ट चौंकाने वाली है. ऐसे ईमानदार अधिकारियों का मिलना काफी मुश्किल है.

पुशिंग की जांच आप कैसे करेंगे ?

यह हवाई-अड्डे पर होता है, जो प्रत्यक्ष तौर पर आव्रजन से नहीं जुड़ा है, लेकिन हां, आव्रजन काउंटर से ज़रूर संबंधित है. इसके समाधान के लिए हम ई-गवर्नेंस शुरू करने जा रहे हैं. एकबार इसे लागू करने के बाद निकास के समय आव्रजन और आव्रजन प्रक्रिया दोनों को जोड़ा जा सकेगा. सारी प्रक्रिया ऑनलाइन होंगी, जिससे चीज़ें आसान और सहज हो जाएंगी. पिछले साल भारत के सभी कार्यालयों से आप्रवास की मंजूरी 8.50 लाख थी.

आव्रजन प्रक्रिया सही करने के अलावा, मंत्रालय और किन विशेष पहलुओं पर ध्यान दे रहा है ?

हमारा सबसे बड़ा लक्ष्य प्रवासियों की समस्याओं से निपटना है. जिसे हम हर तरह से हल करने के लिए प्रतिबद्ध हैं, हम लगातार भारतीय प्रवासी दिवस आयोजित कर रहे हैं, भारत के बाहर भी हम एक कार्यक्रम चला रहे हैं. हमारी अगली योजना सितंबर में नीदरलैंड में यूरोप भारतीय प्रवासी दिवस आयोजित करने की है. लेकिन स्थाई समाधान के लिए हमने तीन नए ज़रूरी क़दम उठाए हैं, जिनमें प्रवासी भारतीय सुविधा केंद्र (ओआईएफसी) पहले से ही मौजूद हैं. इसके माध्यम से भारत में प्रत्येक आप्रवासी भारतीय की हर तरह से मदद की जाती है. इसके तहत हम भारत में निवेश की राह भी देख रहे हैं ताकि इस योजना के मुताबिक़ भारत में हम उनकी आर्थिक मदद भी कर सकें. यह एक सार्वजनिक-निजी साझेदारी का प्रयास है, जो कुछ दिनों पहले शुरू किया गया है. भारतीय आप्रवासियों के लिए इंडियन डेवलपमेंट फाउंडेशन की व्यवस्था भी की गई है. यह एक लाभकारी पहल है और इसके लिए ज़रूरी प्लेटफॉर्म तैयार किया जा रहा है, लेकिन इलेक्ट्रॉनिक माध्यम तैयार नहीं होने की वजह से अभी पूरी तरह प्रयोग में नहीं है. यह भारत के प्राथमिक क्षेत्र में एक परोपकारी निवेश साबित होगा. साथ ही, यह एफसीआरआई के इतर चैरिटी फंड के लिए एक प्रयास होगा.

एक और महत्वपूर्ण क़दम है, ग्लोबल नेटवर्क ऑफ इंडियन नॉलेज, जिस पर मंत्रालय अभी काम कर रहा है. यह इलेक्ट्रॉनिक क्षेत्र से संबंधित अभियान है, जिसका प्रारूप टीसीएस द्वारा तैयार किया जा रहा है. एक बार शुरू हो जाने पर, यह भारत के विभिन्न क्षेत्रों के अप्रवासी भारतीयों को उनसे जुड़े मसले पर हर मुमकिन सलाह दे सकेगा. इस तरह भारत के लिए यह संभव हो सकेगा कि वह आप्रवासी भारतीय समुदाय की योग्यताओं को प्रभावशाली तरीक़े से लागू कर सके. मंत्रालय के लिए यह सबसे महत्वाकांक्षी परियोजना है.

कोई और योजना ?

इसके अलावा, हम अप्रवासी भारतीयों से विभिन्न मिशन के माध्यम से बात कर रहे हैं ताकि संबंधित अधिकारियों की नियुक्ति की जा सके. यह सिर के ऊपर से पानी गुज़रने वाली स्थिति नहीं है, लेकिन मंत्रालय ने अपने इरादे ज़ाहिर कर दिए हैं. हालांकि, प्रवासी समस्या की मूल वजह, इसकी विविधता और एक बड़ी आबादी लगभग 25 मिलियन का होना है. इसके कई वर्ग हैं, लेकिन व्यापक तौर पर दो ही वर्ग हैं, एक एनआरआई और दूसरा भारतीय मूल के आप्रवासी. हालांकि, भारतीयता का पुट उनमें एक समान है.

क्या मंत्रालय या उसके किसी कार्य योजना के विस्तार की भी संभावना है ?

मंत्रालय में तीन सह सचिव और दस निदेशक स्तर के अधिकारी हैं. हम मौजूदा समय में किसी विस्तार के लिए नहीं सोच रहे हैं. लेकिन हां, विभिन्न कार्यक्रमों के लिए हमें सही प्रायोजक की ज़रूरत है और हमने सीआईआई, मनीपाल यूनिवर्सिटी और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय आदि को इस मक़सद के लिए चयनित किया है. हम इसके लिए वैधानिक व्यवस्था पर भी काम कर रहे हैं. यह एक छोटा और नया मंत्रालय है.

फुर्सत के पलों में आप क्या करते हैं ?

मुझे पढ़ना बहुत अच्छा लगता है, साथ ही गाने सुनना और फिल्में देखना पसंद है. मैं फिक्शन सहित हर तरह की किताबें पढ़ता हूं, लेकिन फिल्में देखना मैंने हाल ही में शुरू की है.

क्या आपके किसी बच्चे ने भी नौकरशाही को बतौर करियर चुना है ?

मेरी दो बेटियां हैं और दोनों की शादी भी हो चुकी है. लेकिन इनमें कोई नौकरशाही के क्षेत्र में नहीं हैं. बड़ी बेटी ने इंजीनियरिंग की है और वह लंदन में बस चुकी है जबकि छोटी बेटी चेन्नई में डॉक्टर है.

feedback@chauthiduniya.com

राशिफल

(14 सितंबर से 20 सितंबर तक)

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)

अधिक सोचना आपके लिए पीड़ादायक हो सकता है. आप अगर किसी मांगलिक कार्य की दिशा में सक्रिय हैं, तो उसमें सफलता मिलने के योग बने हुए हैं. अपनों का भरपूर सहयोग मिलेगा. पारिवारिक कार्यों में अधिक व्यस्त रहेंगे. किसी दिशा में प्रयासरत हैं, तो सफलता प्राप्त होगी.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)

अपने सामान की सुरक्षा के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. कहीं दूर जाने की सोच रहें हैं तो अवश्य जाएं क्योंकि सफलता मिलने के योग बने हुए हैं. आर्थिक क्षेत्र में नए मार्ग बनेंगे. इससे बाज़ार में साख और विश्वसनीयता बढ़ेगी. सामाजिक क्षेत्र में उपहार और सम्मान प्राप्त होगा.

मिथुन (21 मई से 20 जून)

जीवनसाथी का भरपूर सहयोग मिलेगा. कुछ ऐसा होगा जिसका आपको अचानक लाभ ही प्राप्त होगा. समाज में अपने पद, प्रतिष्ठा की रक्षा करनी होगी. किसी अनचाही यात्रा पर भी जाना पड़ सकता है. व्यसनों से अगर दूरी बनाएं रखेंगे तो आपके लिए हितकर होगा. ईश्वर के प्रति आस्था बढ़ेगी.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)

आप किसी कार्य में परिवार के सदस्यों का सहयोग लेंगे तो उसमें सफलता के योग बने हुए है. कार्यक्षेत्र का विस्तार तो होगा, साथ ही आप बहुत व्यस्त भी रहेंगे. अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें. साथ ही समय-समय पर चिकित्सक से सलाह अवश्य लें. वांछित सफलता आर्थिक मामलों में लेने में सफल होंगे.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)

दांपत्य जीवन में कुछ मनमुटाव की स्थिति होने की आशंका है. किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहें हैं तो उसमें सफलता मिलने के योग बने हुए है. आपका कोई महत्वपूर्ण कार्य संपन्न हो सकता है, जिससे मन बेहद ख़ुश होगा. व्यावसायिक मामलों पर किया जा रहा प्रयास सफल होगा.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)

आपके अपने किसी कार्य में किसी अधीनस्थ कर्मचारी का सहयोग लेंगे तो मिल जाएगा. घर के कुछ कार्य की वजह से यात्रा करनी पड़ सकती है. संतान के संबंध में सुखद समाचार मिलेगा. रचनात्मक दिशा में प्रयास कर रहें हैं तो उसमें सफलता प्राप्त होगी. आर्थिक स्थिति सामान्य रहेगी.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्तूबर)

आप किसी से काम में निर्णय लेंगे तो उस काम में अवश्य ही सफलता मिलेगी. कार्य अधिक होने की वजह से तन के साथ मन को भी थकान महसूस होगी. परिवार के लोगों का भरपूर सहयोग मिलेगा. कोई अधूरा पड़ा काम पूरा हो जाएगा. रक्तचाप से पीड़ित व्यक्ति अपने स्वास्थ्य पर ध्यान अवश्य दें.

वृश्चिक (21 अक्तूबर से 20 नवंबर)

राजनीतिक दिशा में कुछ नया करने की सोच रहें हैं तो उसमें सफलता मिलेगी. उपहार और सम्मान का लाभ प्राप्त होगा. बिना किसी बात के आपको तनाव हो सकता है. सुखद कार्यों की पूर्ति होगी. संतान के स्वास्थ्य पर ध्यान दें और समय-समय पर डॉक्टर की सलाह अवश्य लें.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)

पारिवारिक मामलों पर किया जा रहा कार्य सफल होगा. निर्णय लेने की क्षमता बढ़ेगी. शासन का भरपूर सहयोग मिलेगा. किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी करें, सफलता के योग हैं. किसी अज्ञात डर के कारण परेशान भी रह सकते हैं. व्यावसायिक उपलब्धि का प्रयास सफल होगा. निकट संबंधियों से संबंध और मज़बूत बनेंगे.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)

किसी के साथ काम करने से पहले सोच-विचार लें. आपके सौम्य व्यवहार की वजह से आपको लोकप्रियता हासिल होगी. माता-पिता से आर्थिक सहयोग रहेगा. सामाजिक कार्यों के लिए तत्पर रहेंगे. आपको कहीं से अचानक लाभ मिलने की संभावना है. आर्थिक मामलों पर किया जा रहा प्रयास सफल होगा.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)

दूसरों के कार्यों में हस्तक्षेप न करें तो अच्छा हैं, नहीं तो हानिकारक सिद्ध हो सकता है. परिवार के लोगों का भरपूर सहयोग मिलेगा. शिक्षा क्षेत्र में सफलता मिलेगी. आत्मविश्वास में बढ़ोतरी होगी. वैसे इस सप्ताह आपके लिए कुछ आश्चर्यजनक स्थिति भी बन सकती है. खान-पान संबंधी सावधानी बरतने की आवश्यकता है.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)

घर पर अचानक किसी मेहमान के आने से मन प्रसन्न रहेगा. रहन-सहन के स्तर में सुधार आएगा. ससुराल पक्ष की यात्रा के योग बने हुए हैं. खान-पान का चुनाव सोच समझ करें. मानसिक एवं शारीरिक सुख में वृद्धि होगी. श्रम का उचित फल प्राप्त होगा. आर्थिक मामलों पर किया जा रहा प्रयास सफल होगा.

ज्योतिषाचार्य पं. सुदर्शन

भारतीय क्रिकेट का सुपरस्टार

अनंत विजय

महेन्द्र सिंह धोनी को अभी फोर्ब्स ने सालभर में सबसे ज्यादा कमाई करनेवाला खिलाड़ी घोषित किया है. रांची के इस खिलाड़ी ने सालभर में लगभग 50 करोड़ की कमाई की. धोनी भारतीय क्रिकेट का एक ऐसा धूमकेतु है, जो 2005 में चमका और सितारा बनकर भारतीय क्रिकेट के आकाश पर चमकने लगा. महेंद्र सिंह धोनी के कप्तान बनने की बेहद दिलचस्प कहानी है. विश्वकप में हार के बाद कोई भी खिलाड़ी टीम इंडिया की कप्तानी का कांटो भरा ताज नहीं पहनना चाह रहा था. चयनकर्ताओं की पहली पसंद और भारतीय क्रिकेट के भगवान सचिन तेंदुलकर की भी कप्तानी में कोई रुचि नहीं थी और उन्होंने चयनकर्ताओं के समक्ष अपनी अनिच्छा जाहिर कर दी थी. कुछ और खिलाड़ी, जो अपनी आकाओं की मदद से टीम इंडिया के कप्तान बन सकते थे, उन्होंने भी समय देखकर इससे दूर रहना ही उचित समझा था. इन परिस्थियों में जब कोई विकल्प नहीं बचा था तो धोनी को बलि का बकरा बनाना तय हुआ. इस ग़लती से भारतीय क्रिकेट टीम को एक ऐसा कप्तान मिला, जिनकी गिनती सफलतम कप्तानों में होने लगी. धोनी के साथ कई ऐसी दिलचस्प कहानियां जुड़ी हैं, जिसे सामने ला रहे हैं खेल पत्रकार शांतनु गुहा रे. शांतनु देश के उन कुछ गिने चुने पत्रकारों में से एक हैं जो बिल्कुल मौके पर जाकर रिपोर्टिंग करते हैं और खेल की दुनिया के पाठक उनकी समझ का लोहा मानते हैं. शांतनु की यह किताब रोली बुक्स से आगामी महीने में प्रकाशित हो रही है.

शांतनु ने अपनी इस किताब में क्रिकेट की दुनिया के अलावा धोनी के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को सामने लाने की कोशिश की है. यह कम ही लोगों को मालूम है कि धोनी पहले फुटबॉल खेलते थे और स्कूल की टीम में गोलकीपर थे. डीएवी स्कूल, शामली, जहां धोनी अपनी पढ़ाई कर रहे थे, के क्रिकेट कोच केशब रमन बनर्जी ने धोनी की प्रतिभा को पहचाना और उसे गोलकीपर से विकेटकीपर बनने के लिए प्रेरित किया. धोनी ने स्कूल मैचों में विकेटकीपिंग शुरू की और फिर कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा. धोनी की जिजीविषा को याद करते हुए केशब अतीत में खो जाते हैं. उन्होंने एक बहुत ही दिलचस्प वाकया बयान किया है, जो उर्जा से लबालब धोनी की क्रिकेटिंग स्पिरिट को सामने लाता है. एक स्कूल मैच में जब धोनी और उसका साथी साबिर हुसैन पारी की सुरुआत करने मैदान पर जा रहे थे तो केशब ने टीम के अन्य खिलाड़ियों को पैड बांधने से मना कर दिया और धोनी और साबिर को दिनभर खेलने का हुक्म सुना दिया. यह सुनकर धोनी मुस्कराए और साथी के कंधे पर हाथ रखकर खेलने गए तो फिर दिन ढलने के बाद नाबाद दो सौ तेरह रन बनाकर वापस लौटे और साथ लौटा उनका साथी साबिर एक सौ सत्रह रन बनाकर. उस दिन धोनी ने एक सौ पचास गेंदों का सामना किया और छह छक्के और छब्बीस चौके जड़े और दोनों ने मिलकर एक दिन में तीन सौ अठहत्तर रन बनाए. यह सचिन-कांबली की प्रसिद्ध कहानी से किसी भी मायने में कम नहीं है. सचिन और कांबली ने तीन दिनों में छह सौ रन बनाए थे, लेकिन धोनी और उसके साथी ने एक दिन में ही तीन सौ अठहत्तर रन बनाकर इतिहास रचा था लेकिन सफलता की यह दास्तां अनसुनी रह गई. न तो मीडिया का ध्यान इस ओर गया और न ही क्रिकेट के पंडितों का .

लेकिन जब धोनी ने उन्नीस सौ निन्यानबे – दो हजार में प्रथम श्रेणी क्रिकेट में कदम रखा तो कंधे तक झूलते बालों और लंबे छरहरे व्यक्तित्व ने लोगों का ध्यान ज़रूर खींचा लेकिन अच्छे प्रदर्शन के बावजूद धोनी को गंभीरता से लेने को कोई तैयार नहीं था. क्रिकेट का यह दौर प्रदर्शन से ज्यादा गॉडफादर का दौर था. सौरव गांगुली के पीठ पर जगमोहन डालमिया का हाथ था, द्रविड़ के पीछे पवार की पावर थी,अजहरुद्दीन के लिए राजसिंह डूंगरपुर पैरोकारी कर चुके थे, सचिन तो खैर भगवान बन चुके थे लेकिन मराठा लॉबी उनके साथ थी. ऐसे माहौल में महेंद्र सिंह धोनी को साथ मिल पा रहा था तो सिर्फ उनके अपने प्रदर्शन का. लेकिन जब अप्रैल 2005 में पाकिस्तान के खिलाफ विशाखापत्तनम में 148 रनों की ताबड़तोड़ पारी और अक्तूबर 2005 में श्रीलंका के खिलाफ जयपुर में 183 रन ठोंक कर एडम गिलक्रिस्ट के रिकॉर्ड को ध्वस्त कर दिया तो चयनकर्तो धोनी को दरकिनार करने का साहस नहीं कर पाए और उसके बाद से धोनी ने पीछे मुड़कर नहीं देखा. धोनी एक मात्र ऐसे खिलाड़ी हैं, जिन्होंने क्रिकेट की कोई पारंपरिक कोचिंग नहीं ली . जब 2005 में धोनी को पाकिस्तान जाना था तो उनके स्कूल के कोच ने उनकी मदद की. रातभर टेनिस की गेंद को पानी में डुबाकर रखा गया और फिर जब वो सख्त हो गया पिच पर नजदीक से बालिंग कर यह सिखाया कि शोएब अख्तर जैसे अंतराष्ट्रीय स्तर के तेज गेंदबाज को कैसे खेला जाता है.

शांतनु गुहा रे की इस किताब में धोनी के स्कूली दिनों के कई किस्से भी हैं. धोनी को 1999 में ईस्ट जोन और वेस्ट जोन के बीच एक मैच खेलने अगरतला जाना था और उन्हें जब इसकी जानकारी मिली तो यह बतानेवाला कोई नहीं था कि अगरतला पहुंचा कैसे जाता है. एक क्षेत्रीय चयनकर्ता ने बेहद अनौपचारिक अंदाज में वहां पहुंच जाने का हुक्म सुना दिया था. धोनी के पास इतना पैसा नहीं था कि वह समय से अगरतला पहुंच जाएं. लेकिन धुन के पक्के धोनी ने तय कर लिया था कि हर हाल में अगरतला पहुंचना है, क्योंकि उस मैच में सचिन तेंदुलकर भी खेल रहे थे. धोनी ने दोस्तों और जान पहचान के लोगों से पैसों का इंतजाम किया और सूमो किराए पर लेकर कोलकाता रवाना हो गए. रातभर का सफर तय करके जब वह कोलकाता के दमदम एयरपोर्ट पर पहुंचे तो पता चला कि दस मिनट पहले अगरतला की फ्लाइट जा चुकी है. दिन धोनी के संघर्ष के थे. अब भी कभी अगर संघर्ष के दिनों की बात होती है तो धोनी उस मैच को य़ाद कर भावुक हो जाते हैं .

महेन्द्र सिंह धोनी की सफलता ने रांची, जो कि कभी हॉकी के लिए जाना जाता था, को क्रिकेट के लिए पागल शहर में तब्दील कर दिया है. धोनी के मां- बाप अब भी मेकन कंपनी के एक छोटे से क्वार्टर में रहते हैं. भारतीय क्रिकेट टीम का यह कप्तान अपनी सफलता का सारा श्रेय अपनी मां को देता है, रांची के इस लड़के का कहना है कि उसकी मां ने ही उसे क्रिकेट खेलने के लिए लगातार न केवल प्रेरित किया बल्कि हर तरह स उसकी मदद भी की.

शांतनु गुहा रे ने कभी लिखा था कि एक बार वह गांगुली से एक लेखक की किताब लेकर मिले और उसका ऑटोग्राफ लेने पहुंचे तो सौरव ने हस्ताक्षर करने के बाद कहा कि इस किताब में कई खामियां है. मुझे विश्वास है कि शांतनु की इस किताब पर अगर धोनी को ऑटोग्राफ देने का मौका मिला तो वह यही कहेगा कि यह किताब मेरे अबतक के व्यक्तित्व के हर पहलू को छूता है.

(लेखक आईबीएन7 से जुड़े हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

जैन धर्म के बहाने

जैन धर्म के मुख्य प्रतीकों में सबसे अहम अहिंसा है. वस्तुतः जैन धर्म के तीन प्रमुख प्रतीकों में भी सबसे अधिक ज़ोर अहिंसा पर ही दिया गया है. अहिंसा शब्द का मूल हिंस में हैं, जिसका अर्थ होता है-मारना, प्रहार करना. हिंसा का अर्थ हुआ, नुकसान पहुंचाना, घायल करना, चोट देना. अहिंसा इसी का विपरीत है. यानी, अहिंसा का अर्थ हुआ किसी को नुकसान या चोट पहुंचाने से अलग रहना. यह भद्रता और दयालुता है, चाहे वह शारीरिक अर्थों में हो, मानसिक मायने में हो या भावनात्मक भाव में हो. यह जानना रोचक होगा कि हिंसा से दूर रहने का मतलब अहिंसा नहीं है, अहिंसा तो और गहरे जाकर किसी भी जीव को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अपमानित या तनिक भी कष्ट देने से दूर रहने को कहती है. जैन धर्म में किसी को नुकसान पहुंचाने की सोचने को भी हिंसा माना जाता है और अपनी वाणी से किसी को हिंसा के लिए प्रेरित करना भी हिंसा मानी जाती है. यह दूसरों के विचारों का सम्मान करना भी सिखाता है. (कुछ भी अंतिम नहीं हैं और विचार बहुआयामी-बहुकोणीय हो सकते हैं). जैन आचार्यों और धर्मावलंबियों का तो अहिंसा को लेकर इतना अधिक आग्रह हो गया कि वे चलते वक्त अपने आगे की ज़मीन बुहारकर चलते थे, ताकि कोई चींटी वगैरह उनके पांवों के नीचे न आ जाए. पानी उबालकर पीते थे और सूर्यास्त से पहले ही खाना खा लेते थे, ताकि कोई कीड़ा-मकोड़ा अंधेरे में उनसे कुचल न जाए.

जैन धर्म की यह अहिंसा दरअसल एक तरह का अतिवाद ही थी. सनातन धर्म की हिंसात्मक अति(यज्ञों में होने वाली हिंसा और ब्राह्मणों की दूसरे वर्णों पर हिंसा) की प्रतिक्रिया में ही जैन धर्म अहिंसा को इतनी दूर तक खींच ले गया कि वह दूसरी अति हो गई. हालांकि, यहां यह जानना मज़ेदार होगा कि बुद्ध ने तो अति सर्वत्र वर्जयेत की बात कही थी, लेकिन बाद में उनके अनुयायियों ने हरेक तरह की अति कर दी-वज्रयान, मंत्रयान और सहजयान के रूप में. ख़ैर, यह तो विषयांतर हो गया. बात हो रही थी,जैन धर्म की. जैन धर्म को अगर प्रतिक्रियात्मक धर्म कहें, तो कुछ ग़लत नहीं होगा. हालांकि, यह अति ही थी, जिसने बाद में जैन धर्म को संकुचित और एक क्षेत्र विशेष में सीमित कर दिया.

अब हम जैन धर्म के मूल तत्वों की चर्चा से पहले एक और सवाल पर विचार कर ले. यह जानना क्या रोचक नहीं होगा, कि हरेक धर्म आख़िरकार अपने मूल स्वरूप के विपरीत में ही क्यों चला जाता है. इसके सारे उदाहरण हमारे सामने हैं. उदाहरण के लिए सनातन धर्म को लीजिए. यहां विचार-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति व बहस की जितनी छूट दी गई, आज वर्तमान में इसके स्वयंभू पुरोधाओं को देख लीजिए. विहिप और संघी ब्रांड के हिंदुत्व का इसके मूल से कुछ लेना-देना ही नहीं है. वस्तुतः अगर हम, संघ ब्रांड को हिंदुत्व का गुंडा तत्वीकरण कहें, तो ग़लत नही होगा. उनको सनातन धर्म का एक अक्षर पता नहीं, लेकिन आज वही उसके व्याख्याता बने हुए हैं. इसी तरह, मुहम्मद साहब ने भाईचारे, बंधुत्व और बराबरी के लिए इस्लाम की स्थापना की. लेकिन, आज वही इस्लाम फ़िरक़ापरस्ती और बंटवारे का शिकार होकर रह गया है. न जाने इसके कितने वैचारिक पंथ हो गए हैं, (देवबंदी से लेकर बरेलवी और अहमदिया तक) और न जाने कितने समुदाय (सिया, सुन्नी इत्यादि). इतना ही नहीं, हिंदुस्तान में तो इस्लाम में जाति-व्यवस्था का नासूर भी फैल गया है. अब ज़रा करुणा के मसीहा ईशू मसीह के बताए धर्म ईसाइयत को देखिए. करुणा और प्रेम का यह धर्म जितनी ख़ूंरेजी का ज़िम्मेदार रहा है, शायद ही कोई दूसरा धर्म हो. चाहे वह 200 वर्षों तक चला क्रूसेड हो या नगासाकी पर गिराया गया परमाणु बम का जघन्य कृत्य. ठीक उसी तरह, अहिंसा को परम तत्व मानने वाले जैनियों में अधिकतर आज बड़े व्यापारी हैं और व्यापार मे वह कितनी हिंसा करते होंगे या हैं, यह केवल अंदाज़ा लगाने की बात है.

यहां हमारा मकसद बेहद साफ है. हम सभी धर्मों को उसकी ग़लत व्याख्याओं से मुक्त करना चाहते हैं. हमारा मानना है कि हरेक धर्म को कुछ ग़लत लोगों ने अगवा कर लिया है, और उसके मूल तत्वों तक हम पहुंचें. शायद यह सवाल हमें सोचने को मजबूर करे और हम धर्म को समझ सकें.

व्यालोक

vyalok@chauthiduniya.com

पिछले अंक में आपने पढ़ा कि इक़बाल को विश्वास होता है कि भेसाड़िया उसपर पूरा विश्वास है जैसे पत्थर की लकीर समान है. अब आगे पढ़िए कि जॉकिटों को फेंकने की नौबत कैसे आई...

मुसलमान

कहो, किसे उड़ाना है?

किसी आदमी को नहीं, टेबल पर पड़े सिगरेट का पैकेट उठाकर सिंघ ने एक सिगरेट अलग करते हुए कहा, दो जॉकिटें उड़ानी हैं.

थोड़ा स्पष्ट करोगे?

एक मकान की तीसरी मंज़िल के फ़्लैट में दो जॉकिटें पड़ी हैं, उन जॉकिटों को वहां से उठाकर पीछे के उसी मकान के कंपाउंड में फेंक देना है.

इक़बाल ने तेज़ी से सोचा, एक जॉकिट की सिलाई में सोने की एक सौ बिस्कुटें छिपाई रहती हैं. एक बिस्कुट का वजन 116 ग्राम हुआ. 1966-67 में सोने का भाव प्रति तोला (11.5 ग्राम) 180 रुपये था. इस हिसाब से एक जॉकिट की क़ीमत 1,80,000 रुपये हुई (1989 के हिसाब से 38 लाख रुपये). फिर वह बोला, इन दोनों जॉकिटों को फेंकने की नौबत कैसे आई? सिर्फ़ उन्हें खिड़की से फेंकने की ही बात है तो यह काम तो कोई बच्चा भी कर सकता है.

नहीं. सिंघ बोल उठा, क्योंकि पिछले तीन दिनों से सी.आई.डी के आदमी उस मकान का घेरा डाले खड़े हैं. लाइटर क्लिक करके होंठो में दबी सिगरेट सुलगाते हुए उसने अपनी नज़र इक़बाल के चेहरे पर स्थिर की.

इक़बाल की कल्पना में पूरा चित्र आ गया. जिस फ्लैट का सिंघ ने ज़िक्र किया था. उसका उपयोग तस्करी का माल संग्रह करने के लिए किया जाता था. पिछली खेप में पच्चीसेक जॉकिटें आई थीं. इस बीच किसी ने पुलिस को ख़बर कर दी. पुलिस के आने के पहले ही लगभग सभी जॉकिटों की डिलीवरी हो चुकी थी. दो बाक़ी रह गई थीं. पर उस समय फ्लैट में कोई मौजूद नहीं था.

अड़ोस-पड़ोस में पूछताछ करने पर पुलिस को इतनी जानकारी मिली कि अंदर को किरायेदार नहीं रहता. कभी-कभार एक-दो सज्जन सूटकेस या ब्रीफकेस लेकर आते और एकाध घंटे में वापस चले जाते.

पुलिस की शंका और दृढ़ हुई. वे यह नहीं जानते थे कि अंदर तस्करी का कितना माल जमा पड़ा होगा. आशा बहुत बड़ा हाथ मारने की थी. अख़बारों में सुर्खियां मिलें तो कोई आश्चर्य नहीं.

सवाल यह था कि दरवाज़ा तोड़कर अंदर घुसें कि नहीं? यह काम उनके लिए एकदम सरल था, पर ऐसा करने पर उन्हें सिर्फ़ तस्करी का माल मिलता, तस्कर नहीं. इसलिए उन्होंने मकान पर कड़ी नज़र रखने का निश्चय किया.

वहां सी.आई.डी. के कितने आदमी ड्यूटी पर हैं?

छह.

सादे कपड़ों में होंगे.

सही. कहते हुए सिंघ ने विस्तार से समझाया, छह में से एक तीसरे मंज़िले पर कहीं तैनात है. दो मकान के प्रवेशद्वार पर नज़र रख रहे हैं. किसी भी संदेहास्पद व्यक्ति के दिखाई पड़ने पर वे उसकी जांच-पड़ताल करते हैं. बाक़ी के तीन मकान के दाएं,बाएं और पीछे की ओर तैनात हैं.

हैरत जताते हुए इक़बाल के होंठो के बीच से सीटी निकल गई. मकान चारों ओर से घिरा हुआ था. तिस पर सी.आई.डी. का एक आदमी बंद फ्लैट के बाहर ऊपर कहीं पहरा दे रहा था. ऐसे में कोई मूर्ख भी दरवाज़ा खोलने की हिमाक़त नहीं कर सकता.

बोलो, साहस होता है? उसे ख़ामोश देख धुंए का छल्ला हवा में तैराते हुए सिंघ ने व्यंग्यात्मक लहज़े में सवाल किया.

इक़बाल ने उसके शरों को नज़रअंदाज़ करते हुए कहा, मुझे फ्लैट का भूगोल जानना है.

उसने आंखों के साथ भवों को तिरछी करके इक़बाल की तरफ़ देखा, दो बेडरूम, एक हॉल,किचन और साथ दो बाथरूम.

ऐसे नहीं, काग़ज़ पर रफ प्लान बनाकर दिखाओ.

उसने तुरंत फिल्टर-टिपवाली पेन निकाली और कांच की मेज पर से उजला सफ़ेद कवर थोड़ा उलटकर कांच पर रेखांकित करने की शुरुआत की.

तीसरी मंज़िल पर लिफ्ट में से तुम यहां बाहर निकलोगे. यहां से पैसेज में सीधे आगे बढ़ने पर, दो दरवाज़े पार कर इस तीसरे दरवाज़े के पास आ पहुंचोगे.

वह प्लान खींचता जा रहा था और साथ-साथ समझाता भी जा रहा था, दरवाज़ा खोलकर तुम अंदर दाख़िल होगे तो पहले विशाल बैठक-खंड है, उसकी दाहिनी तरफ़ के इस गलियारे में तुम्हें प्रवेश करना है. यहां बायीं तरफ़ सबसे पहले बेडरूम का दरवाज़ा आएगा. इसी बेडरूम के पलंग के गद्दे के नीचे दो जॉकिटें पड़ी हैं. तुम्हें इन दोनों को निकालकर बाथरूम में से बाहर फेंक देना है.

बाथरूम में खिड़की होगी?

नहीं, लेकिन रोशनदान है, इसमें सिर्फ़ कांच के तिरछे टुकड़े लगे हैं.

यानी, जॉकिटों को फेंकने से पहले तुझे ये कांच निकालने पड़ेंगे.

निकालने की ज़रूरत है? प्रश्न के साथ सिंघ ने आसान तरकीब बताई, तोड़ डालना.

ऐसी मूर्खता मैं नहीं कर सकता.

क्यों?

कांच टूटकर नीचे गिरने पर आवाज़ होगी.

क्या जॉकिटें फेंकने पर धमाका नहीं होगा?

नहीं, इक़बाल ने कहा, जॉकिटें कपड़े की हैं, उसमें सोने की बिस्किटें होने के कारण दबी आवाज़ उठने की संभावना रहेगी, पर वह आवाज़ ऐसी नहीं होगी कि किसी का ध्यान खिंच, दूसरे ये क़ीमती जॉकिटें मैं फेंकना नहीं चाहता.

तो?

वहां से सही-सलामत निकालकर तुम्हें भेंट देना चाहता हूं.

सिंघ की आंखें फैल गई. चौड़ी पलकें ऊपर जाकर स्थिर हो गई. उंगलियों के बीच दबी सिगरेट में से उठते धुंए की लड़िया ऊपर जाते हुए बीच में थोड़ा बल खा रही थीं.

देखो इक़बाल. प्रथम बार उसके नाम का उच्चारण करते हुए सिंघ ने स्पष्ट किया, इसमें सिर्फ़ जेल जाने का ही ख़तरा नहीं, जान जाने का भी भय है. और तुम्हारे होंठों पर अभी मसें भी नहीं फूटी हैं.

वह ख़ामोश बैठा रहा.

इस डर से अगर तुम ख़तरा मोल लेने के लिए तैयार हुए हो कि तुम्हारा भविष्य इस पर निर्भर करता है तो इतना जान लो, तुम भेसाड़िया साहब की सिफ़ारिश पर मेरे यहां आए हो. सच कहूं तो उनके शब्दों पर मुझे मेरा विश्वास है.

शांतिपूर्वक उसकी याचना सुनने के बाद इक़बाल ने याद दिलाया, अभी तक आपने मकान का नाम और उसका पक्का पता नहीं दिया.

सिंघ समझ गया. उसके सामने बैठा रंगरूट अड़ियल टट्टू है, जान-बूझ कर आग में कूदना चाहता है. कोई आदमी आत्महत्या करना चाहता हो तो उसे ईश्वर भी नहीं रोक सकता.

फ्लैट की चाबी सौंपते हुए सिंघ ने उसे पूरा पता दिया. उस पांच-मंज़िलें मकान का नाम था-सागरदर्शन. वॉर्डन रोड के आ-लीशान इलाक़े में वह आज भी स्थित है.

एक अंतिम प्रश्न, नाम तथा पता दिमाग़ के कंप्यूटर में दर्ज़ करते हुए इक़बाल ने कहा, जिस फ्लैट में मुझे दाख़िल होना है, उसके अड़ोस-पड़ोस में कौन-कौन रहता है?

दाहिनी ओर एक विदेशी युगल है, नाम है सूज़ी और जॉन लैंग्डन. बायीं और कोई पारसी गृहस्थ है. नाम मैं नहीं जानता पर वे ईरानी कहलाते हैं. अभी भी सिंघ के मन के किसी अज्ञात कोने में शंका रह गई हो, इस तरह उसने पूछ लिया, कब आओगे?

कल.

रात में?

रात में चोर-उचक्के निकलते हैं, मैं साहूकार हूं. व्यंग्य के साथ वह खड़ा हो गया, कल इसी समय यहां मिलूंगा.

एक मिनट. उसे जाने से रोककर सिंघ ने कहा, जॉकिटें साथ में हों तो यहां नहीं, मरीन ड्राइव पर नटराज होटल में मेरा एक कमरा है, वहां मिलना और पुलिस पीछे लगी हो तो इतना याद रखना कि आज हम यहां नहीं मिले.

चाबी की रिंग उंगली में डालकर गोल-गोल घुमाते हुए इक़बाल मुस्कराहट के साथ बाहर निकल गया.

गेलॉर्ड रेस्तरां के अंधियारे वातावरण से बाहर खुली सड़क पर क़दम रखा तो उसे समय का ध्यान आया. सूर्य कब का ढल चुका था. अंधेरा उतर रहा था.

कुछ क्षणों तक वह जहां का तहां सोचता खड़ा रहा. सिंघ के साथ हुई बातचीत के दौरान उसके दिमाग़ में एक ठोस योजना ने आकार लिया था. अब उसे बस इतना तय करना था-मकान में प्रवेश का कौन-सा समय ठीक रहेगा?

(अगले अंक में जारी)

इक़बाल की कल्पना में पूरा चित्र आ गया. जिस फ्लैट का सिंघ ने ज़िक्र किया था. उसका उपयोग तस्करी का माल संग्रह करने के लिए किया जाता था. पिछली खेप में पच्चीसेक जॉकिटें आई थीं. इस बीच किसी ने पुलिस को ख़बर कर दी. पुलिस के आने के पहले ही लगभग सभी जॉकिटों की डिलीवरी हो चुकी थी.

भारत में पैर जमाने की कोशिश में आरआईटी

सेलफोन गुम हो जाने पर ग़म नहीं

सेलफोन के दीवानों के लिए एक अच्छी ख़बर है. अब सेलफोन गुम हो जाने पर उन्हें तनिक भी चिंता करने की ज़रूरत नहीं है. क्योंकि दुबई की अग्रणी प्रौद्योगिकी रिसर्च एंड इनोवेटिव टेक्नोलॉजी (आरआईटी) ने एक ऐसा मोबाइल सॉफ्टवेयर डिज़ाइन किया है, जो सेलफोन के चोरी हो जाने पर उसका पता लगाने में मदद करेगा. इतना ही नहीं यह व्यक्ति के वास्तविक लोकेशन का भी पता लगाएगा और फोन पर होने वाली सारी बातें रिकॉर्ड करेगा. यह आपके फोन के डाटा का बैकअप भी रखेगा. सबसे अहम बात यह की इस सुविधा की शुरुआत भारत में हो चुकी है.

भारत की पहली और अग्रणी मल्टी-ब्रैंड मोबाइल और प्रौद्योगिकी रिटेलिंग कंपनी हॉटस्पॉट रिटेल और डॉ. बीके मोदी ग्रुप का वेंचर भारत में इस एप्लिकेशंस का डीलर होगा. इस अनुबंध के ज़रिए आरआईटी भारतीय बाज़ार में क़दम रख रही है. यह भारतीय उपभोक्ताओं को अत्याधुनिक सुविधा मुहैया कराएगी. हालांकि ये मोबाइल ऑर्बिट ब्रैंड के तहत बेचे जाएंगे. वैसे तो पहले चरण में चार एप्लिकेशन पेश किए गए हैं जो निम्नलिखित हैं.

ऑर्बिट रिकॉर्ड:- दोतरफ़ा वॉयस रिकॉर्डर के साथ डिक्टाफोन, ऑर्बिट ट्रैकर:- पर्सनल एक्टिविटी और ऑर्बिट ट्रैकर(ऑन द ग्राउंड इम्प्लाई मूमेंट के लिए), ऑर्बिट प्रोटेक्ट:- मोबाइल एंडी- थैफ्ट सॉफ्टवेयर के साथ आधुनिक सुविधा, ग्लोबल फोन बैकअप :- फोन बुक कांटेक्ट्स, टास्क और कैलेंडर बैकअप तथा रिस्टोर सॉफ्टवेयर. शुरुआत के मौक़े पर आरआईटी के सीईओ और प्रबंध निदेशक नौशाद अब्दुल्ला ने कहा कि इससे हम काफी ख़ुश हैं. भारत में 16.5 अरब अमेरिकी डॉलर(800 अरब रुपए या 80,000 करोड़ रुपए) का मोबाइल बाज़ार है, जिसमें मूल्य वर्द्धित सेवाओं (वीएएस) का योगदान कुल बाज़ार का दस फ़ीसदी है. आरआईटी विभिन्न चैनलों के ज़रिए इस क्षेत्र में भागीदारी की उम्मीद कर रही है. 50 मैन ऑवर्स के निवेश के फलस्वरूप, ऑर्बिट आधुनिक ज़रूरतों के लिए बेहद उपयुक्त तकनीक है, जो 2.5 जी और 3 जी मोबाइल हैंडसेट पर चलाई जा सकती है. यह सुविधा उपभोक्ताओं के लिए बहुत कम क़ीमतों पर उपलब्ध है. उन्होंने कहा कि पहले वित्तीय वर्ष में 1 करोड़ से अधिक एप्लिकेशन बेचने की योजना है. इस अनुबंध की घोषणा करते हुए, हॉटस्पॉट रिटेल के सीईओ संजीव महाजन ने कहा भारतीय उपभोक्ताओं में ख़रीदने की शक्ति सबसे ज़्यादा है और वे अच्छे हैंडसेट ख़रीदना चाहते हैं. आरआईटी के इस नए मोबाइल एप्लिकेशन से उपभोक्ता अपने हैंडसेट को सुरक्षित रख सकते हैं. उन्होंने अपने सभी प्रोडेक्ट के लिए राष्ट्रीय विशेष वितरक के रूप में बीएसएनएल प्रीपेड प्रोडेक्ट के राष्ट्र व्यापी इलेक्ट्रॉनिक पीआईएन वितरक रिचार्ज टीएम को नियुक्त करने की घोषणा की है. स्पीड रिचार्ज टीएम के संस्थापक विकास जैन ने कहा कि हमने भारत के 21 राज्यों में राज्य स्तरीय वितरकों की पहचान कर ली है और इस महीने के आख़िर तक सभी प्रोडेक्ट रिटेल बाज़ार में उपलब्ध होंगे.

ग़ौरतलब है कि रिसर्च एंड इनोवेटिव टेक्नोलॉजी (आरआईटी) एफजेडसी स्टार्ट अप सूचना प्रौद्योगिकी कंपनी है. इसका मुख्यालय संयुक्त अरब अमीरात के रास अल खैमाह में है, जबकि स्पाइस टेलीवेंचर्स डॉ. बीके मोदी के नेतृत्व वाले स्पाइस ग्रुप (टेलीकॉम, प्रौद्योगिकी, मनोरंजन एवं वित्तीय सेवाओं के क्षेत्र में शीर्ष पर है) का अंग है. हॉटस्पॉट रिटेल अग्रणी मोबाइल एवं टेक्नोलॉजी-प्रोडेक्ट रिटेलर है, जिसे मिंट पिच ने उपभोक्ता सेवा में बेहतरीन का दर्जा दिया है और वॉयस एवं डाटा ने उत्तर भारत में बेहतरीन लार्ज फॉर्मेट रिटेलर का दर्जा दिया है. हालांकि यह तो समय ही बताएगा कि वह कितने फ़ीसदी बाज़ार पर क़ब्ज़ा कर पाता है. लेकिन उसकी ये पहल वाकई क़ाबिले-ए-तारीफ़ है.

फोटो-प्रभात पाण्डेय

बाएं से दाएं-प्रणव सायला, डायरेक्टर (आर एंड डी, आरआईटी), नौशाद अब्दुल्लाह, (सीईओ, आरआईटी), जोश एलनर(डायरेक्टर आरआईटी), विकास जैन, (फाउंडर स्पीड रिचार्ज) सॉफ्टवेयर लांच करते हुए.

अंतरराष्ट्रीय पर्यटक के लिए नेशनल ज्योग्राफिक फोन

नेशनल ज्योग्राफिक का नाम सुनते ही दिमाग़ में सुदूर बसे किसी प्रांत का ख़ूबसूरत या अचंभित करने वाला कोई दृश्य कौंधता है न! किसी दुर्लभ प्रजाति की खोज और उनकी संस्कृति की जानकारी. दरअसल नेशनल ज्योग्राफिक चैनल ऐसे ही शो को दिखाकर प्रसिद्ध हुए है. अब कंपनी ने कुछ ख़ास और नया करने का ऐलान किया है. दरअसल यह विदेशी सैलानियों के लिए किसी तोहफ़े जैसा है. कंपनी आने वाले दिनों में डूएल सिम कार्ड वाला मोबाइल हैंडसेट लांच करेगी, जिसे अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों को ध्यान में रखकर बनाया गया है. इसमें ब्ल्यूटूथ के साथ 2 मेगापिक्सल का वीडियो व स्टील कैमरा, इंटीग्रेटेड एफएम रेडियो, मोबाइल टीवी सर्पोट, इनबिल्ट मेमोरी

कंपनी आने वाले दिनों में डूएल सिम कार्ड वाला मोबाइल हैंडसेट लांच करेगी, जिसे अंतरराष्ट्रीय पर्यटकों को ध्यान में रखकर बनाया गया है. इसमें ब्ल्यूटूथ के साथ 2 मेगापिक्सल का वीडियो व स्टील कैमरा, इंटीग्रेटेड एफएम रेडियो, मोबाइल टीवी सर्पोट, इनबिल्ट मेमोरी 1 जीबी, और सिम कार्ड सर्विस अंतरराष्ट्रीय वर्जन और वारंटी के साथ मेमोरी कार्ड स्लॉट होगा.

1 जीबी, और सिम कार्ड सर्विस अंतरराष्ट्रीय वर्जन और वारंटी के साथ मेमोरी कार्ड स्लॉट होगा. चैनल से इस फोन का मेल रखते हुए, इस जीएसएम फोन में चैनल के कई कंटेंट जैसे डॉक्युमेंट्री, प्राकृतिक मैंग्ज़ींस, रिंगटोंस व पर्यटन से जुड़े वीडियो प्रि-लोड किए गए हैं. इस फोन और सिम कार्ड की ख़ासियत है कि इसके ज़रिए आप विश्व में कहीं भी जाएं वहां से आप 185 देशों में कॉल कर सकते हैं. इसके लिए लगभग सभी देशों के लिए 30 मिनट का कॉल क्रेडिट दिया गया है और अंतरराष्ट्रीय रोमिंग में भी 80 देशों से इंकमिंग कॉल्स फ्री पा सकेंगे. इसके अलावा वॉयस मेल, टेक्सट मैसेज, और हर समय उपलब्ध अमेरिकी कस्टमर केयर सर्पोट, इस सिस्टम की ख़ासियत है. इसके अलावा इस डूएल सिम कार्ड मोबाइल सेट में आपका अपना नंबर भी काम करता रहेगा. इस आर्कषक फोन की क़ीमत मात्र नौ हज़ार रुपए (180 अमेरिकी डॉलर) है.

सूरज की रोशनी से चार्ज होगा सेलफोन

कई बार आपके साथ ऐसा हुआ होगा कि फोन पर बातें करते वक्त फोन अचानक कट गया हो. शायद, तब आपको बहुत गुस्सा आया होगा. ठीक उसी समय याद आया होगा कि अरे आपने सेलफोन को चार्जिंग में लगाया ही नहीं था. तब आप ख़ुद को कोसेंगे. लेकिन अब फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं है. अब आप बेफिक्र होकर बातें कर सकते हैं, क्योंकि बाज़ार में सूर्य की किरणों से चार्ज होने वाला सोलर सेलफोन चार्जर आ गया है. इस चार्जर के ज़रिए दिन भर आप अपने सेलफोन को जब चाहे जहां चाहे चार्ज कर सकते हैं. इसके लिए आपको बस थोड़ी सी मेहनत करनी पड़ेगी. वह यह कि चार्जर को सूर्य की रोशनी वाली जगह में रखें. महज़ 15-20 मिनट में आपका सेलफोन चार्ज हो जाएगा. चार्जिंग के दौरान भी आप बात कर सकते हैं. सबसे अच्छी बात यह कि इस चार्जर को आप बैग के चेन या जैकेट के बटन से बांध कर लटका सकते हैं. यह दिन भर चार्ज होता रहेगा. इसके अलावा बिजली से भी इस चार्जर को चार्ज करके इमरजेंसी के लिए रख सकते हैं. धूप से चार्ज होने में इसे 6 से 7 घंटे का समय लगता है तो बिजली से यह तीन घंटे में चार्ज हो जाता है. पोर्टेबल और स्मॉल साइज़ होने की वजह से कहीं ले जाने में आपको दिक़्क़त नहीं होगी. इसका आकार मेमोरी कार्ड के बराबर है.

कलरफुल टोस्ट, वंडरफुल किड!

कितनी ख़ूबसूरत होगी वह सुबह, जब आपका नन्हा मुन्ना बिना नानुकर किए टोस्ट खा ले, या एक और की मांग कर दे. उस वक़्त आप चैन की सांस लेंगे क्योंकि उसे खाने के लिए मनाना या डांटना नहीं पड़ा. जी हां, ऐसा अब बिल्कुल संभव है. बच्चों को आकृतियां या रंग-बिरंगी चीज़ें खूब अच्छी लगती हैं. यही वजह है कि उनके प्ले स्कूल, प्ले ग्राउंड, बेडरूम, स्टडी टेबल आदि सभी जगहों पर तरह- तरह की आकृतियां और खिलौने देखने को मिलते हैं. अगर यही प्रयोग उनके खाने के साथ किया जाए तो शायद ही वे खाने से इंकार करें. ऐसा ही एक गैजेट है टोस्ट स्टैंप. इसके ज़रिए आप टोस्ट पर छपाई कर सकते हैं. जिससे उस पर ख़ूबसूरत आकृतियां उभरती हैं. इसे देखकर बच्चे फूले नहीं समते हैं और खाने को आतुर हो जाते हैं. टोस्ट को टोस्टर में डालने से पहले इस पतले से ब्रेड की साइज के स्टैंप को ब्रेड से चिपका दें. ऐसा ब्रेड पर आकृति छपने के लिए करते हैं. इसके बाद जब वह टोस्ट होकर बाहर आता है तो उस पर अपने आप ही आकृति उभर जाती है. यह गैजेट प्लास्टिक का है पर टोस्टर में न ये गलता है और न ही आपके बच्चों की सेहत के लिए नुक़सानदायक है. आप अपने बच्चों की पसंद के अनुसार किसी भी आकृति का स्टैंप ला सकते हैं. बाज़ार में टोस्ट स्टैंप ईसामसीह, टिक-टैक टो गेम, आई लव यू, ड्रैगन, डेंजर साइन वाली और अन्य कई आकृतियां भी उपलब्ध हैं. आप इन ख़ूबसूरत आकृतियों से छपे टोस्ट पर रंग-बिरंगे जैम भर सकते हैं. इस तरह बोरिंग सा टोस्ट देखकर नाक -भौं सिकोड़ने वाला लाल, कलरफुल टोस्ट फटाफट खा लेता है, और बन जाता है वंडरफुल किड!

बगीचे को बनाए सदाबहार

अपने बगीचे में पौधा लगाते समय अक्सर हम ग़लत पौधों का चुनाव कर लेते हैं. इस क्रम में पैसे के साथ-साथ बागवानी में की गई मेहनत भी बर्बाद हो जाती है. दरअसल इसकी मुख्य वजह बगीचे की मिट्टी की पहचान नहीं होना है. चाहे घर हो या बाहर, बगीचे को ख़ूबसूरत बनाने के लिए यह ज़रूरी है कि मिट्टी के अनुरूप ही पौधे लगाए जाएं. इस काम के लिए बाज़ार में उपलब्ध टूल ईजीब्लूम आपकी मदद करेगा. ईजीब्लूम बगीचे की मिट्टी की उर्वरता की पहचान कर उचित सलाह देता है. ईजीब्लूम को स्टैंड के सहारे 24 घंटे के लिए मिट्टी में गाड़ने से यह मिट्टी के सेंसर के रूप में काम करता है. सूरज की रोशनी और मौसमी प्रभाव के साथ मिट्टी के बारे में सारी जानकारियां यह अपनी मेमोरी में संरक्षित रखता है. इस यूएसबी को कंप्यूटर में लगाने पर मिट्टी के बारे में सारी जानकारी सामने स्क्रीन पर आ जाती है. इसके बाद हमें यह पता चलता है कि कौन सी मिट्टी हमारे बगीचे के लिए उपयुक्त है और मौसम की वजह से उस पर क्या प्रभाव पड़ रहा है. यदि आप मिट्टी की विविधता के साथ लगाए जाने वाले पौधे की जानकारी रखते हैं तो कोई बात नहीं, लेकिन यदि आपको इसके लिए सलाह की ज़रूरत है तो वह भी यह गैजेट दे सकता है. इतना ही नहीं किस प्रकार की मिट्टी में कौन सा पौधा लगाना सही है और बगीचे में लगे पौधों में होने वाली परेशानियों का निदान भी यह बताएगा. इस ईजीब्लूम प्लांट सेंसर व मॉनिटर में ट्रिपल ए बैट्री लगा है, जिसे यूएसबी के ज़रिए चार्ज किया जा सकता है. यह गैजेट विंडोज एक्सपी और विस्टा दोनों पर काम करता है. इसकी क़ीमत लगभग 29 हज़ार रुपए हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

विश्व बिलियर्ड्स खिताब पंकज के नाम

भारत इस वक़्त हर खेल में बुलंदी का झंडा गाड़ रहा है. खिलाड़ी खेल के मैदान या कोर्ट में उम्दा प्रदर्शन कर रहे हैं. बात चाहे व्यक्तिगत प्रदर्शन की हो या पूरी टीम की. सबसे ताज़ा ख़ुशी हमें पंकज आडवाणी ने दी, जब वर्ल्ड प्रोफेशनल बिलियर्डस चैंपियनशिप जीतकर उन्होंने देश का नाम रोशन किया.

24 वर्षीय पंकज ने पिछले चैंपियन मार्क रसेल को हरा खिताब पर क़ब्ज़ा किया. ग़ौरतलब है कि ऐसा करने वाले वह दूसरे भारतीय हैं. इससे पहले गीत सेठी ने 1992 में इस खिताब को अपने नाम किया था. गीत लीग मैच में पंकज से हार गए और इस चैंपियशिप से बाहर हो गए. सेमीफाइनल में स्थान बनाने के लिए ध्रुव सितवाल ने उन्हें कड़ी टक्कर दी. सितवाल को हराकर उन्होंने फाइनल में अपनी जगह बनाई. दूसरे सेमीफाइनल में नौ बार के विजेता रह चुके रसेल ने एक अन्य भारतीय रूपेश को हराया. फाइनल में दोनों के बीच कड़ा मुक़ाबला हुआ. पंकज आडवाणी के सामने रसेल पस्त हो गए.

24 वर्षीय पंकज ने पिछले चैंपियन मार्क रसेल को हरा खिताब पर क़ब्ज़ा किया. ग़ौरतलब है कि ऐसा करने वाले वह दूसरे भारतीय हैं. इससे पहले गीत सेठी ने 1992 में इस खिताब को अपने नाम किया था. गीत लीग मैच में पंकज से हार गए और इस चैंपियशिप से बाहर हो गए.

व्यक्तिगत तौर पर यह उनका पहला विश्व बिलियर्ड्स खिताब है. वैसे पंकज आडवाणी पहले ही वर्ल्ड एमेच्योर बिलियर्ड्स और स्नूकर खिताब जीत चुके हैं. उन्होंने अपना पहला खिताब 2003 में जीता था (चीन में आयोजित वर्ल्ड एमेच्योर स्नूकर चैंपियनशिप). 2005 में वर्ल्ड एमेच्योर बिलियर्ड्स का खिताब जीतकर माल्टा के मिफसूद पॉउल के बाद दूसरे ऐसे खिलाड़ी बन गए, जिन्होंने एमेच्योर बिलियर्ड्स और स्नूकर दोनों ही खिताब जीते हैं. वर्ल्ड एमेच्योर बिलियर्ड्स चैंपियनशिप के दोनों फार्मेट (प्वाइंट और समय) में जीत करने वाले वह पहला खिलाड़ी हैं. आडवाणी ने 2006 में आयोजित एशिया खेलों में स्वर्ण पदक जीता था.

पस्त होती हॉकी की हालत !

भारतीय हॉकी का बुरा दौर अभी थमने का नाम नहीं ले रहा है. जब से अंतरराष्ट्रीय हॉकी फेडरेशन ने हॉकी इंडिया को मान्यता दी, तभी से भारतीय हॉकी में उठा-पटक का दौर बदस्तूर जारी है. यक़ीन नहीं होता कि यह वही खेल है, जिस पर भारत ने सबसे पहले इठलाना सीखा. लेकिन, अब हालत यह है कि राष्ट्रीय खेल होने के बावजूद यह रसातल में जा गिरा है और फ़िलहाल संबंधित प्रदेश ओलंपिक एसोसिएशन को सौंपकर, एक बार फिर अपने चापलूसों को इस पर क़ब्ज़ा जमाने की छूट दे दी है. इससे हॉकी की हालत में कितना सुधार होगा, यह तो आने वाला समय ही बताएगा. ये वही पदाधिकारी और राजनेता हैं, जिनके समय में हॉकी की सभी स्तरों पर उपेक्षा की गई. दुनिया की जानी-मानी टीमें जहां नई तकनीकों और संसाधनों के प्रयोग से अपने प्रदर्शन में लगातार सुधार कर रही हैं, वहीं हॉकी प्रशासकों की आपसी खींचतान में भारतीय हॉकी अपनी बर्बादी का तमाशा देख रही है. चौदह साल तक भारतीय हॉकी महासंघ को केपीएएस गिल के भरोसे छोड़ दिया गया. जिनकी मनमर्जी ने इस खेल की दशा-दिशा लगातार बिगड़ती गई और अब ये नया विवाद उठ खड़ा हुआ है. इससे भारतीय हॉकी किस शिखर तक पहुंचेगी, अनुमान लगाना मुश्किल नहीं है. एकमात्र क्रिकेट को छोड़ दें तो सिर्फ़ हॉकी ही क्यों, दूसरे तमाम खेलों में क्या हालत है ? किसी से छिपी नहीं है. यदि हॉकी को अपने पुराने गौरव को हासिल करना है, तो ज़रूरत है कि देश में एक समुचित खेल संस्कृति विकसित की जाए. लेकिन यह वाक्य भी बार-बार दोहराए जाने की वजह से अपनी अहमियत खो चुका है. समाधान सभी को मालूम है, लेकिन हालात फिर भी नहीं बदलते. न खेलों को राजनीतिज्ञों के चुंगल से मुक्त करवाया जाता है और न ही खेलों की दुर्दशा में कोई सुधार नज़र आता है

सुधार की गुंजाइश बहुत ही कम है. अंतरराष्ट्रीय हॉकी फेडरेशन ने हॉकी इंडिया को जब से मान्यता दी, तभी से इसके पूर्व कर्ता-धर्ता में अपनी पोजिशन बरकरार रखने की क़वायद चल रही है.

फ़िलहाल स्थिति यह है कि अब हॉकी का भी राजनीतिकरण शुरू हो गया है. प्रदेश हॉकी की इकाइयों पर असरदार सांसद और राजनेताओं ने क़ब्ज़ा जमाना शुरू कर दिया है. भारतीय ओलंपिक संघ के अध्यक्ष, और कहना ग़लत नहीं होगा कि खेलों को उनकी दुर्गति तक पहुंचाने के लिए ज़िम्मेदार, सुरेश कलमाडी ने प्रदेश इकाइयों के गठन की ज़िम्मेदारी

फोर्स वन ने दिखाई फोर्स

लगता है भारतीय खेलों का सुनहरा दौर जारी रहेगा. हाल ही में भारतीय उद्योगपति विजय माल्या की फोर्स इंडिया ने बेल्जियम ग्रांप्री में अपना पहला फ़ार्मूला वन प्वाइंट हासिल किया. फोर्स इंडिया की टीम फरारी के बाद दूसरे स्थान पर रही. वहीं फोर्स इंडिया के ड्राइवर फिसिकेला और फेरारी के राइकोनेन के बीच का फ़ासला सेकेंड से भी कम का रहा. यह अलग बात है कि जीत के बाद ही फिसिकेला ने अपना दामन फोर्स इंडिया से छुड़ा लिया और फरारी के तंबू में पनाह ली.

इसके बावजूद भारत के लिए सबसे बड़ी बात यही है कि पहली बार फ़ार्मूला रेस में उसने अपनी उपस्थिति दर्ज़ की. वैसे, इससे जुड़े विवाद भी शुरू हो गए हैं. खेल मंत्री ने इस पर अपनी बयानबाज़ी भी शुरू कर दी है. एम एस गिल साहब ने इसे खेल मानने से ही इंकार कर दिया, जिसे लेकर आईपीएल की टीम बंगलुरू और फ़ार्मूला वन में भाग लेने वाली फोर्स इंडिया के मालिक के बीच जुबानी जंग शुरू हो गई है. गिल ने इसे महंगा मनोरंजन करार देते हुए, खेल का दर्ज़ा देने से इन्कार कर दिया.

फोटो- पीटीआई

ग़ौरतलब है कि, भारत में क्रिकेटर भी फ़ार्मूला वन के दीवाने रहे हैं और इस खेल के प्रति सचिन तेंदुलकर की दीवानगी भी ज़ाहिर है. यहां तक कि फ़ार्मूला वन के बादशाह माइकल शुमाकर ने उन्हें एक फरारी भी गिफ़्ट की थी. खेल मंत्रालय के इस तर्क के बाद माल्या ने कहा कि वह हैरान हैं कि खेल मंत्री का इसे खेल मानने न मानने की वजह समझ से परे है. पूरी दुनिया में करोड़ों लोग इसे बतौर खेल देखते हैं. साथ ही फुटबॉल विश्वकप और ओलंपिक के बाद यह सबसे अधिक देखा जाने वाला खेल है. ऐसे में फ़ार्मूला वन को खेल का दर्ज़ा न देना सरासर ग़लत फ़ैसला है.

फुटबॉल का महाकुंभ और भारत

साल 2010 का फुटबॉल विश्वकप (फीफा) दक्षिण अफ़्रीका में होना है. लेकिन इसमें क्वालिफाई करने के लिए मुक़ाबले शुरू हो चुके हैं. मेज़बान होने के नाते दक्षिण अफ़्रीका पहले ही इसके लिए क्वालिफाई कर चुका है. जबकि बाक़ी टीमों के बीच मुक़ाबले का दौर जारी है. 2010 फीफा विश्वकप में कुल 32 टीमों को खेलना है, जिन्हें इसमें हिस्सा लेने के लिए इस राउंड से गुज़रना पड़ता है. फ़िलहाल इसमें दक्षिण अफ़्रीका, जापान, ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण और उत्तर कोरिया, नीदरलैंड, घाना और ब्राजील की टीमें ही क्वालिफाई कर पाई हैं. फुटबॉल का यह महाकुंभ पूरी दुनिया में सबसे अधिक देखा जाने वाला खेल है और सर्वाधिक लोकप्रिय भी. ब्राजील, अर्जेंटीना, फ्रांस, इटली दुनिया की सबसे मज़बूत टीमों शुमार में होने वाली टीमें हैं. लेकिन इसमें अर्जेंटीना पर इस विश्वकप से बाहर होने का ख़तरा मंडराने लगा है. जिसकी वजह है, पांच बार की विश्व चैंपियन और शीर्ष पर क़ाबिज़ ब्राजील और अर्जेंटीना के बीच हुए क्वालिफाइंग मैच में अर्जेंटीना की

फुटबॉल का यह महाकुंभ पूरी दुनिया में सबसे अधिक देखा जाने वाला खेल है और सर्वाधिक लोकप्रिय भी. ब्राजील, अर्जेंटीना, फ्रांस, इटली दुनिया की सबसे मज़बूत टीमों शुमार में होने वाली टीमें हैं. लेकिन इसमें अर्जेंटीना पर इस विश्वकप से बाहर होने का ख़तरा मंडराने लगा है.

हार. पिछले 16 वर्षों में यह पहली बार है, जब अर्जेंटीना को क्वालिफाइंग मुक़ाबले में अपनी धरती पर हार का सामना करना पड़ा. वह भी तब, जबकि अर्जेंटीना के महान दिग्गज डिएगो माराडोना इस टीम के कोच हैं. हालांकि अभी उसके क्वालिफाई करने की उम्मीदें बरकरार हैं, लेकिन उसे दूसरी टीमों के मुक़ाबले पर भी नज़र रखनी होगी. यदि वह प्रतियोगिता से बाहर होता है तो अभी तक कुल दो विश्वकप जीत चुके अर्जेंटीना के लिए पिछले चार दशकों में यह पहला मौक़ा होगा जब वह इस खेल में महाकुंभ का हिस्सा नहीं होगा. इस फीफा वर्ल्ड कप में भाग लेने के लिए कुल 204 देश क्वालिफाइंग राउंड से गुज़रते हैं, जिसमें से सिर्फ़ 32 टीमों को ही जगह मिल पाती है.

वहीं इन खेलों में भारत की बात करें तो भारत अभी तक एकबार भी इस प्रतियोगिता का हिस्सा नहीं बन पाया है. 1950 के फीफा वर्ल्ड कप में भारत को मौक़ा मिला, लेकिन भारतीय खिलाड़ियों के पास जूते नहीं होने की वजह से विश्वकप से बाहर होना पड़ा. उसके बाद यह कभी क्वालिफाइंग राउंड से आगे बढ़ ही नहीं पाया. इस तरह देखा जाए तो क्रिकेट के नशे में धुत यह देश अभी भी अपनी एंट्री को लेकर लगातार कोशिश में लगा हुआ है. हाल में नेहरू कप का जीतना भारत में फुटबॉल की बदलती तस्वीर पेश कर रहा है. लेकिन सच्चाई यह है कि जब 11 जून से 11 जुलाई (2010) के बीच पूरी दुनिया में फुटबॉल का ख़ुमार, सिर चढ़ कर बोल रहा होगा. ऐसे में, भारत का वहां कोई नामोनिशान नहीं होगा.

फोटो- प्रभात पाण्डेय

नंबर एक की रेस में टीम इंडिया

क्रिकेट के इतिहास में एक बार फिर भारत अपना दबदबा साबित करने में लगा है. वैसे खेल के इस क्षेत्र में भारत कई कीर्तिमान क़ायम कर चुका है. लेकिन यह पहला मौक़ा होगा जब भारतीय टीम क्रिकेट के शिखर पर होगा.

फ़िलहाल वह आईसीसी की वन-डे रैंकिंग में दक्षिण अफ़्रीका के बाद 126 अंकों के साथ दूसरे नंबर पर क़ाबिज़ है. जबकि उससे आगे दक्षिण अफ़्रीका(127) महज़ एक अंक से ही आगे है. लेकिन कामयाबी की इन बुलंदियों तक पहुंचने के लिए उसे श्रीलंका के साथ होने वाली एकदिवसीय शृंखला में जीत ही दर्ज़ नहीं करनी होगी, बल्कि उसे शृंखला के सारे मैच भी जीतने होंगे. 2002 में आईसीसी द्वारा शुरू किए गए रैंकिंग प्रणाली के बाद भारतीय टीम के पास पहला सुनहरा मौक़ा होगा, जब वह अपनी बादशाहत को पूरी दुनिया में क़ायम करेगा. लेकिन श्रीलंकाई टीम का सूपड़ा साफ करना भारत के लिए कोई आसान चुनौती नहीं होगा.

वह भी ऐसे में जब वह अपने घर में खेल रही हो. हालांकि गत एकदिवसीय शृंखला में भारत ने उसे उसके ही घर में मात दी थी, जिससे भारत की उम्मीदें काफी बढ़ गई हैं. वहीं क़रीब एक दशक तक इस खेल में एकछत्र राज करने वाली ऑस्ट्रेलियाई टीम के लिए लगता है, अभी बुरा दौर लंबा खींचने वाला है. अंग्रेज़ों के हाथ एशेज़ गंवा कर टेस्ट में नंबर चार पर लुढ़की यह टीम एकदिवसीय में 119 अंकों के साथ तीसरे पायदान पर आ गिरा है.

इससे तस्वीर साफ है, फ़िलहाल वन-डे में नंबर एक की दौर में भारत के आसपास भी कोई टीम नहीं है, क्योंकि दक्षिण अफ़्रीकी टीम फ़िलहाल कोई मैच नहीं खेल रही है और वह भारत से सिर्फ़ एक अंक ही आगे है. जबकि भारत को श्रीलंका के बाद न्यूज़ीलैंड से भी एकदिवसीय मैचों की शृंखला खेलनी है. ऑस्ट्रेलिया से भारत को चुनौती तभी मिल सकती है, जब वह इंगलैंड के साथ चल रहे शृंखला की सभी सातों मैच में जीत दर्ज़ करे. लेकिन उसके प्रदर्शन को देखते हुए इसकी संभावना कम ही नज़र आ रही है. इस तरह भारत के लिए वन-डे क्रिकेट के शिखर पर पहुंचने का एक सुनहरा अवसर है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

हर फिल्म में कुछ नया करने को मिल रहा है : सचिन खेड़कर

हाल ही में रिलीज़ हुई फिल्म शैडो में होम मिनिस्टर का किरदार निभाने वाले सचिन खेड़कर छोटे व बड़े पर्दे पर 25 वर्षों से छाए हुए हैं. पिछले दिनों सचिन से हमारी मुलाक़ात आइकॉन फिल्म्स के बैनर तले बन रही फिल्म रोक के सेट पर हुई. इम्तिहान धारावाहिक से अपना करियर शुरू करने वाले सचिन की बड़े पर्दे पर शुरुआत फिल्म अस्तित्व से हुई, जहां उन्होंने अपनी पहली फिल्म में ही अपने अभिनय का लोहा मनवा लिया. रंग रसिया, जान की बाजी, जोर लगा के हैया आदि उनकी आनेवाली फिल्में है. उनसे हुई लंबी बातचीत के कुछ अंश पेश हैं-

सबसे पहले तो इस फिल्म रोक में अपने किरदार के बारे में बताइए?

इस फिल्म में मैं एक सीधे-सादे नौजवान रवि मल्होत्रा का किरदार कर रहा हूं. अनुष्का यानी तनुश्री दत्ता मेरी पत्नी का जबकि प्रीति शर्मा मेरी बहन का किरदार कर रहे है.

आपकी इस फिल्म की कहानी में क्या ख़ास है?

हॉरर व सस्पेंस फिल्म होने के कारण कहानी के बारे में ज़्यादा नहीं बता सकता हूं. इस फिल्म में मेरे मकान में तरह-तरह की अनहोनी घटनाएं दिखाई गई है. इन घटनाओं के कारण मेरी पत्नी डरी हुई सी रहती है. शायद मकान में कोई जादुई शक्ति है जो मुझे और ख़ासकर अनुष्का को परेशान करना चाहती है.

आप एक्टिंग को किस नज़रिए से देखते है?

यह ज़रूरी नहीं है कि एक्टिंग करने के लिए किसी ऐसे परिवार में जन्म लेना ज़रूरी है, जो फिल्मों से जुड़ा हो अथवा कहीं से कुछ सीखकर आया हो. मेरा मानना है कि कलाकार जितना ज़्यादा काम करता है उतना ही उसकी एक्टिंग निखरती जाती है.

आप छोटे और बड़े पर्दे में से आप किस माध्यम को बड़ा मानते हैं?

वैसे तो मेरे करियर की शुरुआत छोटे पर्दे से हुई और पहचान भी वहीं से मिली, लेकिन अब काम मैं बड़े पर्दे पर ज़्यादा कर रहा हूं. मैंने यह फ़र्क़ ज़रूर महसूस किया है कि छोटे पर्दे से ज़्यादा बड़ा कद बड़े पर्दे पर होता है. क्योंकि धारावाहिक के पुराने पड़ते ही लोग आपको व किरदार को भूल जाते है जबकि बड़े पर्दे पर कलाकार लंबे समय तक ज़िंदा रहता है. हालांकि, माध्यम कोई भी हो, आख़िरकार तो कलाकार की अपनी प्रतिभा ही काम आती है.

किरदारों में किस तरह से विविधता लाते हैं?

मुझे अलग-अलग तरह के किरदार निभाना अच्छा लगता है. जब मुझे मेरे किरदारों में एक जैसी समानता लगती है तो मैं फिल्मों से विश्राम लेकर थिएटर की ओर मुड़कर वहां काम करता हूं जिससे एक नई ऊर्जा मिलती है. हाल ही में मेरी आने वाली फिल्म एक थी रानी ऐसी भी जो विजया राजे सिंधिया के जीवन पर बन रही है और उसमें मैं सरदार आंग्रे का किरदार कर रहा हूं. मणिरत्नम की फिल्म रावण में मैं एक सरकारी अधिकारी का किरदार कर रहा हूं. वैसे भी अभिनय की कला वक़्त के साथ ही निखरती है.

निर्देशक राजेश रणशिंदे छोटे पर्दे से हैं और आप भी वहीं से तो क्या आपकी ट्यूनिंग वहीं से थी?

हम एक दूसरे को कई वर्षों से जानते हैं पर साथ काम करने का मौक़ा नहीं मिला. इस फिल्म में पहली बार साथ काम कर रहे हैं.

पहली बार जज के रूप में

देवदास में माधुरी और ऐश्वर्या ने एक साथ ऐसी धूम मचाई कि वह दर्शकों के जेहन में रच-बस सी गई. तब से उनके एक साथ आने के कयास जारी थे. पर उनके एक साथ फिल्मों में आने का संयोग नहीं बन पा रहा था. लिहाज़ा उनकी लोकप्रियता को भुनाने के लिए एक रियलिटी टीवी सीरियल में बतौर जज दोनों को एक साथ उतारा जा रहा है. यह शो सोनी पर अक्टूबर तक प्रसारित होगा. यह शो क्रिकेट के शानदार वेंचर इंडियन प्रीमियर लीग की तरह ही डांस प्रीमियर लीग कहलाएगा. अगर इन दोनों ने जज की कुर्सी संभाल ली तो सोनी और शो की टीआरपी तो अपने आप ही संभल जाएगी. बॉलीवुड के सभी स्टार किसी न किसी रियलिटी शो में गेस्ट के रुप में नज़र आते रहे लेकिन यह दोनों न तो कभी किसी रियलिटी शो में जज बनीं और न ही गेस्ट के रूप में नज़र आई. दर्शकों के लिए तो यह पहला मौक़ा होगा जब इन दोनों को डोला रे डोला के बाद दोबारा एक साथ देख सकेंगे. शो के मेंटर श्यामक डावर होंगे. इस शो को होस्ट का भार सारा ख़ान और एजाज ख़ान ने अपने कंधों पर लिया है. देखना बाक़ी है, इन दोनों की जोड़ी ने जितनी धूम अपने डांस में मचाई थी, क्या यह उतनी ही धूम मचा पाएंगी?

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

सच का सामना में आएगा नया मोड़

भारतीय टेलीविज़न में अधिक टीआरपी बटोर रहे, और सनसनी फैला चुके रियलिटी शो के होस्ट राजीव खंडेलवाल के बारे में सुनने में आया है कि वह ख़ुद एक प्रतिभागी के रूप में जल्द ही नज़र आएंगे. जी हां, रियलिटी शो में ऐसा पहली बार देखने को मिलेगा कि एंकर प्रतिभागियों का हौसला बढ़ाने की जगह ख़ुद कैसे सवालों के घेरे में घिरेगा और अपने आप को सवालों के चक्रव्यूह में से निकाल पाएगा या नहीं? या जैसे लोगों को फंसाया है वैसे ही ख़ुद उलझ जाएंगे. सूत्रों से पता चला है कि राजीव का कुछ समय पहले यह कहना था कि मेरे अंदर हिम्मत नहीं है कि मैं सच का सामना करूं. राजीव के प्रतिभागी बनने के लिए दर्शकों को बेसब्री से इंतज़ार है कि वह कौन शख्स होगा जो उनके सच को दुनिया के सामने रखेगा. फ़िलहाल एंकर कौन होगा इसका ख़ुलासा तो नहीं किया गया है. कहीं ऐसा तो नहीं कि यह पब्लिसिटी स्टंट का खेल हो, क्योंकि हाल ही में यह शो सवालों से जो घिर गया था. यह तो देखने के बाद पता चलेगा कि राजीव की असलियत क्या है?

सोनल अपनी नई पहचान बनाने में जुटी

बॉलीवुड में किसी को पहली फिल्म से कामयाबी मिल जाए और तब भी आगे उसे फिल्में न मिले, तो सवाल उठना लाज़िमी ही है. सोनल चौहन का मामला भी कुछ ऐसा ही है. सोनल की पहली फिल्म जन्नत सफल तो हुई, एक्टिंग भी दर्शकों ने ख़ूब सराही. इतनी तारीफ़ बटोरने के बाद भी सोनल को दूसरी फिल्मों में ऑफर क्यों नहीं मिले, यह तो अचरज की बात है. ख़ैर, अब उन्होंने दक्षिण की फिल्मों का रुख़ कर लिया है. अभी हाल ही में वह मेगा बजट की कन्नड़ फिल्म में काम कर रही हैं. उनको दक्षिण की फिल्मों के कई और अच्छे ऑफर्स तो आ ही रहे हैं. हो सकता है अपनी फिल्म की शूटिंग में इतनी व्यस्त हो कि बॉलीवुड की किसी फिल्म को साइन ही नहीं किया हो. यह भी बात हो सकती है कि वह दक्षिण की फिल्मों में अधिक रुचि ले रही हों. देखना अब यह बाक़ी है कि वह बॉलीवुड में वापसी करती हैं या नहीं.

वार्षिक शुल्क :1000 रु.

कृपया अपने सबस्क्रिप्शन चेक अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के नाम पर अपने नाम और पूरे पते के साथ यहां भेजें : (गैनन) के-2, दूसरी मंज़िल, चौधरी बिल्डिंग, मिडिल सर्किल, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली -110001

आने वाली फिल्में

इस सप्ताह दो बड़ी फिल्में रिलीज़ होने जा रही हैं. दिल बोले हड़िप्पा और वांटेड. दिल बोले हड़िप्पा फिल्म में रानी मुखर्जी और शाहिद कपूर की जोड़ी मुख्य भूमिका में नज़र आएगी. फिल्म का निर्माण यश राज बैनर ने किया है, जिसके युवराज आदित्य चोपड़ा के साथ रानी की दिल लगी की चर्चाएं आम हैं. निर्देशक अनुराग सिंह है. फिल्म में रानी सरदार बन कर दर्शकों को लुभाने की कोशिश करेंगी. इस फिल्म पर उनका काफी कुछ दांव पर है. वह पहली बार दर्शकों को झरने के नीचे नहाकर नयनसुख देंगी. बिकनी बाला बनने के लिए काफी मेहनत से अपनी काया उन्होंने सुडौल बनाई है. फिल्म ईरानी फिल्म से प्रेरित(?) है, जिसमें परिवार को भूख से बचाने के लिए एक लड़की वेश बदलकर लड़का बन जाती है. फिर वह मज़दूरी करके परिवार का पेट पालती है. यह तालिबानी ज़ुल्म के दौर की कहानी है, इसकी कहानी में क्रिकेट के भी छींटे हैं, कैप्टन की भूमिका शाहिद कपूर ने अदा की है. आइटम गर्ल राखी सावंत भी ख़ास रोल में नज़र आएंगी. इसमें वह शन्नो अमृतसरी की भूमिका निभा रही है जो नौटंकी कंपनी में नाचती है. तो, तैयार हो जाइए, अगले सप्ताह की इस मस्ती के लिए.

दूसरी फिल्म वांटेड है. इसमें नायक सलमान ख़ान और नायिका आयशा टाकिया हैं. फिल्म के निर्देशक बोनी कपूर है. यह एक्शन थ्रिलर फिल्म है जिसमें सलमान काफी समय बाद एक्शन रोल में दिखाई देंगे. कहानी राधे (सलमान ख़ान) की. राधे पैसों के लिए कुछ भी करने को तैयार है, लेकिन अपनी शर्तों पर. वह जिससे दोस्ती करता है, उसे हर हाल में निभाता है. वह एक शूटर है. वह ख़तरनाक गैंगस्टर गनी भाई (प्रकाश राज) से दुश्मनी मोल लेता है. राधे तब चकित रह जाता है, जब जाह्नवी (आयशा टाकिया) बताती है कि वह उसे पसंद करती है. जाह्नवी शर्मीली, मासूम और सीधी-सादी लड़की है. इस्पेक्टर तलपदे (महेश मांजरेकर) जाह्नवी को पसंद करता है. तलपदे बेहद जिद्दी इंसान है. जो चाहता है वो पाकर ही रहता है. मुंबई में गैंगवार जोरों पर है. ऐसे हालात में राधे मुंबई का मोस्ट वांटेड मैन बन जाता है. फिल्म की यूएसपी है- सलमान की आवाज़ में गाना. अब यह तो अगले सप्ताह ही पता चलेगा कि दर्शकों ने दिल बोले हड़िप्पा कहा, या वांटेड की तलाश की.

सप्ताह की फिल्म

पंख फिल्म में बिपाश बसु, मैरोडोना रिबेलो, रोनित रॉय और महेश मांजरेकर दिखाई दिए. इस फिल्म के निर्देशक सुदिप्तो चटोपाध्याय है. संगीत राजू सिंह ने दिया है. फिल्म की कहानी काफी अलग सी है. इसमें ट्रांसजेंडर मामले को छुआ गया है. एक लड़का अपनी पहचान छिपा तक अपने अतीत से लड़ता है. सेक्सी बिपाशा पहली बार इसमें नॉन-ग्लैमरस रोल में दिखाई देंगी. संगीत और निर्देशन उम्दा है.

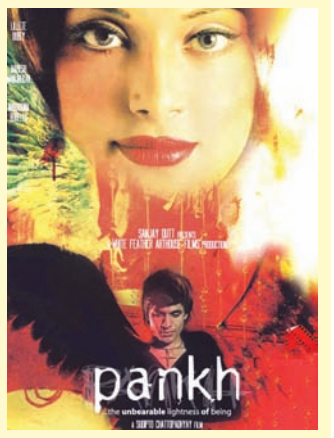

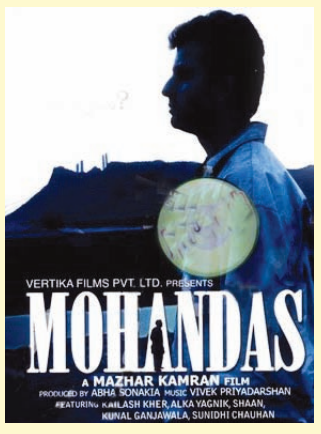

मोहनदास नाम की फिल्म रिलीज़ हुई. उस फिल्म में मोहनदास समाज में फैले भ्रष्टाचार को परत-दर-परत दिखाती हैं. इस फिल्म का एक दृश्य खासा बढ़िया है, जिसमें नायक कहता है-वह काग़ज़ कहां से लाउं, जो बताए कि मैं ही मैं हूं. यह हमें गोविंद निहलानी और समांतर सिनेमा आंदोलन के अन्य निर्देशकों की याद दिलाती है. देखना यह है कि दर्शक इनको पसंद करते हैं या नहीं.